वनस्पति वाणी

सितम्बर, 2025 अंक 34

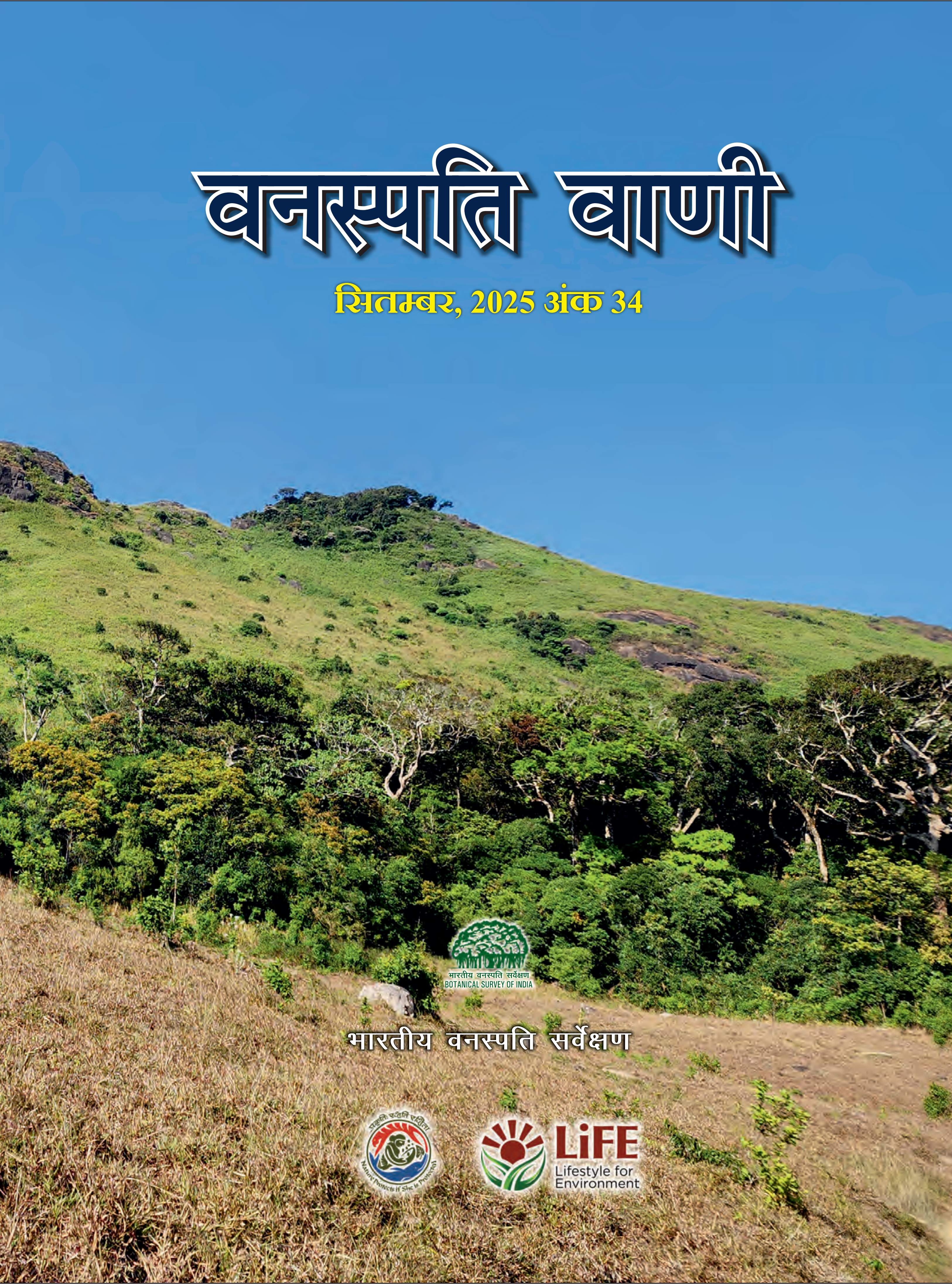

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

LiFE
Lifestyle for Environment

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की 136वीं स्थापना दिवस के अवसर पर 'भारत के पुष्पीय पौधे (खण्ड-1,2,3)' का विमोचन

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के माननीय संयुक्त सचिव सुश्री नमीता प्रसाद के कर कमलों द्वारा
आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा में 'चाय पादप अनुभाग' का उद्घाटन

ISSN: 0975-4342

वनस्पति वाणी

सितम्बर 2025 अंक 34

पुष्पिताः फलवन्तश्च तर्पयन्तीह मानवान्।
वृक्षदं पुत्रवत् वृक्षास्तारयन्ति परत्र च ॥

(तात्पर्य : फलों और फूलों वाले वृक्ष मनुष्यों को तृप्त करते हैं। वृक्ष देने वाले अर्थात् समाजहित में वृक्षारोपण करने वाले व्यक्ति का परलोक में तारण भी वृक्ष करते हैं।)

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

प्रकृतिः रक्षति रक्षिता
Nature Protects if She is Protected

LiFE
Lifestyle for Environment

© भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, 2025

इस प्रकाशन का कोई भी अंश निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की लिखित पूर्वानुमति के बिना पुनर्प्रवर्तित / रिट्रिवल पद्धति में भण्डारण या इलैक्ट्रॉनिक, मैकेनिकल फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य किसी तरीके से ट्रांसमिट नहीं किया जा सकता है।

संरक्षण एवं प्रधान सम्पादक
कनाद दास

सम्पादक मण्डल
दिनेश कुमार अग्रवाला
श्याम किशोर महतो
पूनम प्रसाद

सहयोग
कैलाश प्रसाद कुशवाहा
शर्मिष्ठा कुमारी साव

ISSN 0975-4342

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, तृतीय एम.एस.ओ. भवन, एफ विंग, डी एफ ब्लॉक, सेक्टर-1, सॉल्ट लेक सिटी, कोलकाता - 700064 द्वारा प्रकाशित एवं कलकत्ता रेप्रो ग्राफिक्स, 36/8बी, साहित्य परिषद स्ट्रीट, कोलकाता - 700006 द्वारा मुद्रित।

- वनस्पति वाणी में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, प्रमाणिकता एवं व्यक्त विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।
- इस अंक के प्रूफ संशोधन, मुद्रण क्रम में राजभाषा हिन्दी एवं प्रकाशन अनुभाग के सभी कर्मचारियों ने सक्रिय सहयोग दिया है।

डॉ. कनाद दास
निदेशक
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

निदेशक की कलम से

स्वस्थ रहने के लिए स्वच्छ पर्यावरण का होना अति आवश्यक है। हमारा पर्यावरण न केवल हमें जीवन जीने के लिए आवश्यक संसाधन प्रदान करता है, बल्कि हमारे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है। जैव विविधता और स्वस्थ पारिस्थितिक तंत्र हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। ये हमें स्वच्छ हवा, पानी और भोजन प्रदान करते हैं। प्राकृतिक वातावरण प्रदूषण को कम करने, जलवायु को नियंत्रित करने और बीमारियों को फैलने से रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वृक्ष कार्बन-डाई-ऑक्साइड को ऑक्सीजन में परिवर्तित करके मानव जीवन में अमूल्य योगदान करते हैं। स्वच्छ वायु के बिना जीवन संभव नहीं है। गरीबी, असमानता और अन्य सामाजिक कारक पर्यावरणीय स्वास्थ्य असमानताओं को बढ़ावा देते हैं। गरीब लोग अक्सर प्रदूषित वातावरण में रहने, अस्वास्थ्यकर भोजन खाने और स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुँच होने के कारण स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याओं का अधिक सामना करते हैं। पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करते समय सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को दूर करना भी ज़रूरी है। ऊर्जा खपत कम करना, पानी का संरक्षण करना और अपशिष्ट को कम करना पर्यावरणीय स्वास्थ्य की रक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये व्यक्तिगत कार्य संसाधनों के संरक्षण, प्रदूषण को कम करने और स्वस्थ वातावरण बनाने में मदद करते हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ते तापमान से लू लगने, थकावट और निर्जलीकरण जैसी अनेक समस्याएं बढ़ रही हैं। जलवायु परिवर्तन मच्छरों और अन्य रोगवाहकों के प्रजनन के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती है। इससे हवा की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है जिससे श्वसन और हृदय संबंधी समस्याएं बढ़ सकती हैं। जलवायु परिवर्तन से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों के कारण वर्ष 2030 तक हर साल लगभग 2 से 4 अरब डॉलर का आर्थिक नुकसान होने का अनुमान है। जलवायु परिवर्तन और बढ़ता तापमान मानसिक अवसाद को भी उत्पन्न कर सकता है। बदलते मौसम और प्राकृतिक आपदाओं के कारण खाद्य उत्पादन में कमी आ सकती है, जिससे खाद्य असुरक्षा बढ़ सकती है। पर्यावरणीय समस्याओं को कम करने और स्वस्थ वातावरण बनाने के लिए सरकार, समुदाय और प्रत्येक व्यक्ति को मिलकर काम करना होगा। हमें "वन हेल्थ" दृष्टिकोण अपनाने की ज़रूरत है, जो मानव, पशु और पर्यावरणीय स्वास्थ्य के बीच गहरे संबंध को बढ़ावा देता है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय का शीर्ष वर्गिकी शोध संस्थान भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण अपनी स्थापना के बाद से ही भारत के दूरस्थ इलाकों के पेड़-पौधों से संबंधित अनोखे लोक वानस्पतिक ज्ञान को संकलित और अद्यतन करके राष्ट्र की सेवा करता रहा है। विभाग द्वारा वार्षिकी के रूप में प्रकाशित वनस्पति वाणी पर्यावरण, जैव विविधता आदि राजभाषा नीति के कार्यान्वयन को एक सूत्र में पिरोने का साधन है। वनस्पति वाणी का 34वां अंक समस्त देशवासियों के समक्ष प्रस्तुत है। इस अंक में वनस्पति विविधता, अपुष्पीय वनस्पति, लोक वनस्पति विज्ञान, चिर-परिचित वनस्पति, वानस्पतिक यात्रा, तकनीकी/समसामयिक परिदृश्य शीर्षकों के अंतर्गत 34 लेख, पर्यावरण समाचार और विभिन्न कार्यकलापों के चिन्ह सम्मिलित किए गए हैं। आशा है कि पिछले अंकों की तरह यह अंक भी वर्गिकी वैज्ञानिकों और पाठकगण के लिए रोचक और ज्ञानवर्धक होगा।

आवरण चित्र

अगस्त्यमलाई बायोस्फीयर रिजर्व का शोला वन
चित्र – डॉ. सुजना के.ए.
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, दक्षिणी क्षेत्रीय केंद्र, कोयंबतूर

अनुक्रमणिका

वनस्पति विविधता

1	अरुणाचल प्रदेश में औषधीय वनस्पति विविधता : स्थिति, संरक्षण और नीतिगत आवश्यकताएं	डॉ.उमेश कुमार एल. तिवारी	01
2	साइकैस - परिचय	स्नेहा गांधी	09
3	आर्द्रभूमि और फाइकस : एक सहसंबंध	तनय शील, श्रेयोशी सेन शर्मा, छाया देओरी व विजय	12
4	वृक्षों की विरासत - कोलकाता	डॉ. उमेशकुमार एल. तिवारी व सिंचिता बिश्वास	15
5	मेघालय, भारत की तीन अल्प-ज्ञात खाद्य ऑर्किड प्रजातियां	यलातूर महेश, रिकेट्री लिटन, हरेकृष्णा स्वैन, रामलिंगम कोट्टईमुथु व एन. ऑडियो	19

अपुष्पीय वनस्पति

6	*साऐथिया जाइगेन्टिया*: एक संकटग्रस्त प्रजाति, संरक्षणात्मक रणनीति एवं पुनर्वास का एक समग्र अध्ययन	एल. आर. मैती, विजय, सौरभ सचान, बी. बी. टी. थाम, एन.	21
7	*हिल्डेगार्डिया पोप्यूलिफ़ोलिया*: अति संकटापन्न बहुउद्देशीय वृक्ष प्रजाति	गिरिराज सिंह पंवार व संदीप कुमार चौहान	24

लोक वनस्पति विज्ञान

8	*इलेक्स ख़ासियाना*: वितरण, लोकवानस्पतिक महत्त्व और संरक्षण	विजय, रिकेरत्रे लिटन, डेविड लालसामा बियते व छाया देओरी	26
9	लद्दाख के लेह में पाई जाने वाली कुछ महत्वपूर्ण उपयोगी भारतीय औषधीय पौधों की प्रजातियाँ	कुलदीप एस.डोगरा, कुमार अम्बरीश, ब्रजेश मीना, रितेश के. सिंह, युद्धवीर व संजीव कुमार	28
10	आओ बनाएं आर्किड कीकी	सौरभ सचान, एल. आर. मैती, विजय, डेविड एल. बियाते व एन. ऑडियो	32
11	भारत की कुछ सुगंधित जड़ीबूटियां	स्नेहा गांधी	34
12	मेलिंजो- बेलिंजो: एक बहुउपयोगी प्राचीनतम पौधा	सौरभ सचान, एल. आर. मैती, विजय, एन. ऑडियो व डेविड एल. बियाते	39
13	समस्तीपुर (बिहार), भारत के पारंपरिक रूप से उपयोगी प्रमुख खाद्य फूल	तनय शील, छाया देओरी व विजय	40
14	नागालैंड की आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण वनस्पतियां: पारंपरिक ज्ञान और जैव विविधता की धरोहर	आर. मणिकन्दन, प्रमोद मीणा व नंदिता शर्मा	43

चिर- परिचित वनस्पति

15	ब्यूटिया पेलिटा (पटवा): कुमाऊं क्षेत्र की एक स्थानिक और अत्यधिक संकटापन्न प्रजाति का ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा गुणन	गिरिराज सिंह पँवार व भावना जोशी	45
16	दो रोडोडेन्ड्रॉन की कहानी: उत्तराखंड और सिक्किम के राजकीय वृक्षों के बीच अंतर	सत्तम दासगुप्ता, कंकना चक्रवर्ती व सेंउति चौधुरी	47
17	नेपेन्थीज खासियाना जे.डी. हूकर की पारिस्थितिकी एवं रूपात्मक अनुकूलन : वितरण, पोषण, रणनीतियां, उपयोग तथा संरक्षण दृष्टिकोण	विजय, एल. आर. मैती, डेविड एल. बियते, छाया देओरी व एन. ऑडियो	51

वानस्पतिक यात्रा

18	कोरापुट की वानस्पतिक यात्रा	जीवन सिंह जलाल और यशस्विनी राउत	54

अनुक्रमणिका

तकनीकी/समसामयिक परिदृश्य

19	आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा में पादप वर्गीकरण अनुभाग : एक परिचय	देवेन्द्र सिंह, विजय कुमार मासतकर, जे. स्वामी, कैलाश मेघवाल, बिष्णु चरण दे, राहुल देब बर्मन, दिनेश्वर कुमार साह, ज़ीशान मज़हर, रोहन मैइती, सत्तम दास गुप्ता	60
20	पादपालय : पादप प्रतिरुपों का एक व्यवस्थित भंडार	बी. लक्ष्मणाडु, संजय मिश्र, ओंकार नाथ मौर्य, नीलिमा ए.एम, अर्चना राय व विनय रंजन	63
21	आद्रभूमियों के जैव-भू-रसायन	अर्क बनर्जी, वरिष्ठ परिरक्षण सहायक	72
22	भारत में बाह्य-स्थलीय बीज बैंकिंग: अवसंरचना, वैज्ञानिक प्रभावशीलता, संरक्षण-परिणाम तथा नीतिगत दिशा	प्रियंका, सुमन हलदर व संदीप कुमार चौहान	75
23	अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ और लाल सूची	विजय, डेविड लालसामा बियते एवं एन. ऑडियो	78
24	हिमाचल प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यान - जैव विविधता संरक्षण और इको-टूरिज्म के संसाधन	बृजेश मीणा, कुमार अंबरीश, कुलदीप सिंह डोगरा, रितेश कुमार व संजीव कुमार	80
25	बिन्सर वन्यजीव अभयारण्य - एमराल्ड ऑफ़ वेस्टर्न हिमालय	प्रशांत केशव पुसालकर	82
26	पादप संरक्षण के लिए जीआईएस और रिमोट सेंसिंग का एकीकरण: एक व्यापक समीक्षा	महेंद्र कुमार सिंघाड़िया, प्रियंका, सुमन हलदर व संदीप कुमार चौहान	87
27	शहरी हरियाली और पारिस्थितिकीय तंत्र सेवाएँ: भारतीय शहरों में पौधों की भूमिका	महेंद्र कुमार सिंघाड़िया, सुमन हलदर, प्रियंका व संदीप कुमार चौहान	90
28	पर्यावरणीय मुद्दे और उनके निराकरण	विनीत कुमार रावत, श्रीमन लाल मीना व उदय वीर श्रीवास	93
29	पादप ऊतक संवर्धन: एक संक्षिप्त परिचय	दावनरी मार्विन व शिवराज कुमार	95
30	पादपालय डिजिटलीकरण – जैव विविधता संरक्षण की दिशा में एक तकनीकी पहल	प्रमोद मीणा, नंदिता शर्मा व आर. मणिकन्दन	99
31	अनानास की संभावना: मेघालय के लिए धन निर्यात का मार्ग	हरेकृष्णा स्वैन, प्रमोद मीना, रिकेट्री लिटन, यलातूर महेश व रामलिंगम कोट्टईमुथु	102
32	सतत बागवानी में वनस्पति सर्वेक्षण की भूमिका	विजय, रिकेरत्रे लिटन, डेविड लालसमा बियाते व छाया देओरी	104
33	स्थानिकता और संरक्षण	सौरभ सचान, विजय व एल. आर. मैती	107
34	कृत्रिम बुद्धिमत्ता का पर्यावरणीय प्रभाव	कैलाश प्रसाद कुशवाहा	109

पटाक्षेप

35	पर्यावरण समाचार	कैलाश प्रसाद कुशवाहा	111
36	गतिविधियां		112

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 01-08 (2025)

अरुणाचल प्रदेश में औषधीय वनस्पति विविधता : स्थिति, संरक्षण और नीतिगत आवश्यकताएं

डॉ. उमेश कुमार एल. तिवारी

केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

भारत के उत्तर-पूर्वी छोर पर स्थित अरुणाचल प्रदेश राज्य, 83,743 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। इसकी सीमाएँ भूटान, चीन और म्यांमार से लगती हैं। यहाँ की ऊँचाई और जलवायु विविधता अनेक प्रकार के पारिस्थितिक तंत्रों को पोषित करती है। राज्य के लगभग 82% भाग पर वन आच्छादन है जिसमें 5,100 से अधिक आवृतबीजी पौधों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं। औषधीय और सुगंधित पौधे यहाँ की सामुदायिक स्वास्थ्य परंपराओं और क्षेत्रीय जैव-आर्थिकी का एक अभिन्न हिस्सा हैं। हर्बल औषधियों की बढ़ती माँग के साथ, अरुणाचल प्रदेश की वनस्पति संपदा राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर पर भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती जा रही है। यहां की औषधीय और सुगंधित पौधों की प्रजातियाँ उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों से लेकर अल्पाइन क्षेत्र तक पाई जाती हैं।

अरुणाचल प्रदेश की पारंपरिक ज्ञान और जातीय औषधि पद्धति: अरुणाचल प्रदेश में 26 से अधिक प्रमुख जनजातियाँ निवास करती हैं, जिनमें *न्यीशी*, *मोनपा* और *मिश्मी,* आदि प्रमुख हैं। इन समुदायों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक रूप से परिचालित पारंपरिक ज्ञान विकसित किया है, जिसे *मोपूंग* और *बापु* जैसे पारंपरिक उपचारक संरक्षित करते आए हैं। उदाहरणस्वरूप, *मिश्मी* जनजाति विशेष रूप से *कॉप्टिस टीटा (ममीरा)* का उपयोग पाचन संबंधी रोगों के उपचार के लिए करती है। यह उनके स्थानीय पौधों के चिकित्सकीय गुणों की गहरी समझ को दर्शाता है। *मोनपा* जनजाति तिब्बती "*अमची*" चिकित्सा पद्धति को अपनाती है, *स्वर्शिया चिरायता* और *रिउम ऑस्ट्रेल* जैसे पौधों का उपयोग बुखार से लेकर पाचन विकारों तक के लिए होता है। *अपातानी* जनजाति ने 150 से अधिक औषधीय और सुगंधित पौधों की प्रजातियों का प्रलेखन किया है, जो उनके पारंपरिक चिकित्सा तंत्र की समृद्धि को दर्शाता है।

आदिम जनजाति *एल्पिनिया निग्रा* और *कुर्कुमा लोंगा* जैसी प्रजातियों का उपयोग श्वसन और पाचन संबंधी रोगों में करती है, जबकि *न्यीशी* जनजाति *स्वर्शिया चिरायता* और *पिक्रोराइज़ा कुरोआ* का उपयोग बुखार और यकृत रोगों के उपचार में करती है। *मिश्मी* समुदाय *टर्मिनेलिया चेबुला* और *टैक्सस वालिचियाना* जैसे पौधों को भी महत्त्वपूर्ण उपचारात्मक पौधों के रूप में मानता है। इन औषधीय प्रथाओं को अब आयुर्वेद और आधुनिक औषधि उद्योग में भी मान्यता मिलने लगी है। यह ज्ञान केवल औषधीय नहीं है, बल्कि सामाजिक परंपराओं और धार्मिक अनुष्ठानों में भी समाहित है, जो पारंपरिक ज्ञान की भूमिका को जीवन के हर पहलू में रेखांकित करता है।

हालाँकि यह ज्ञान अत्यंत समृद्ध है, फिर भी तेज़ी से हो रहे आधुनिकीकरण, पर्यावरणीय क्षरण और सांस्कृतिक बदलावों के कारण इसके लुप्त होने का खतरा है। इस चुनौती को देखते हुए, अरुणाचल प्रदेश जैवविविधता बोर्ड जैसे संस्थानों और शोधकर्ताओं ने इस पारंपरिक ज्ञान का प्रलेखन, वैज्ञानिक सत्यापन और सतत उपयोग को बढ़ावा देने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। इन प्रयासों का उद्देश्य स्थानीय समुदायों को सशक्त करना, जैवविविधता का संरक्षण करना और पारंपरिक ज्ञान की मुख्यधारा को स्वास्थ्य सेवा और विकास योजनाओं में एकीकृत करना है।

अरुणाचल प्रदेश और भारत में पारंपरिक ज्ञान का शास्त्रीय एवं आधुनिक प्रणालियों के साथ एकीकरण: भारत, विशेषतः अरुणाचल प्रदेश, की पारंपरिक जनजातीय ज्ञान प्रणालियों का आयुर्वेद, सिद्ध जैसी शास्त्रीय चिकित्सा प्रणालियों और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ एकीकरण अब समग्र विकास और सतत संसाधन प्रबंधन के लिए अत्यंत आवश्यक माना जा रहा है। यह पारंपरिक ज्ञान स्थानीय पर्यावरण और अनुभवजन्य शिक्षाओं पर आधारित है, जो शास्त्रीय और आधुनिक ज्ञान का पूरक बनकर पारिस्थितिकीय रूप से स्थायी और सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त समाधानों की पेशकश करता है।

अरुणाचल प्रदेश की पारिस्थितिकीय विविधता और जनजातीय सांस्कृतिक विरासत इस क्षेत्र को जंगली खाद्य और औषधीय पौधों के दृष्टिकोण से अत्यंत समृद्ध बनाती है। *अंगामी* और उनके सहयोगियों (2006) द्वारा किए गए अध्ययन में राज्य के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों से 118 जंगली खाद्य पौधों की पहचान की गई, जिनका स्थानीय समुदायों द्वारा फल, पत्तियाँ, कंद, फूल और तनों के रूप में उपभोग किया जाता है। इनमें से कई प्रजातियाँ जैसे *डिप्लेज़ियम एस्कुलेंटम, फाइलैन्थस एम्ब्लिका*, *सोलेनम नाइग्रम*, *ज़ैंथोज़ाइलम आर्मेटम, और हॉटूनिया कॉर्डेटा* न केवल पोषण में सहायक हैं, बल्कि पारंपरिक औषधीय उपयोगों के लिए भी प्रसिद्ध हैं। लगभग 28% जंगली खाद्य पौधों का उपयोग

औषधि के रूप में होता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भोजन और स्वास्थ्य देखभाल के मध्य गहरा अंतर्संबंध मौजूद है। इस प्रकार के पौधे, विशेष रूप से जो अर्ध-पालन और स्थानीय प्राथमिकता के आधार पर चुने गए हैं, पारंपरिक बग़ीचों और कृषि प्रणालियों में सम्मिलित होकर खाद्य सुरक्षा, पोषण और ग्रामीण आय सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

अरुणाचल प्रदेश के जनजातीय समुदायों द्वारा उपयोग किए जाने वाले कई औषधीय पौधे अब वैश्विक औषधि उद्योग और आयुर्वेदिक चिकित्सा में भी मान्यता प्राप्त कर चुके हैं। *टर्मिनेलिया चेबुला* और *टैक्सस वालिचियाना* जैसी प्रजातियाँ अपने औषधीय गुणों के लिए जानी जाती हैं और विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों तथा कैंसर रोधी यौगिकों के निर्माण में प्रयुक्त होती हैं। राज्य के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में प्रचलित तिब्बती *अमची* चिकित्सा पद्धति में भी कई अल्पाइन औषधीय पौधों का उपयोग होता है, जो इस क्षेत्र की वनस्पति विविधता और पारंपरिक ज्ञान की समृद्धि को दर्शाता है। पारंपरिक, शास्त्रीय और आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों के इस संगम से जैव-अन्वेषण और औषधि अनुसंधान के क्षेत्र में नई संभावनाएँ जन्म ले रही हैं, जहाँ आधुनिक उद्योग स्थानीय समुदायों के अपरिष्कृत संसाधनों से नवीन औषधीय यौगिक और स्वास्थ्य समाधान विकसित कर रहे हैं।

अरुणाचल प्रदेश जैवविविधता बोर्ड ने इस ज्ञान के प्रलेखन, वैज्ञानिक प्रमाणीकरण और इसके संरक्षण व स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में एकीकरण को बढ़ावा देने में सक्रिय भूमिका निभाई है। ये प्रयास न केवल जनजातीय ज्ञान को मान्यता देते हैं, बल्कि सतत उपयोग और वन संसाधनों के संरक्षण को भी प्रोत्साहित करते हैं। उदाहरणस्वरूप, पारंपरिक पारिस्थितिकीय ज्ञान को आधुनिक जैवविविधता प्रबंधन से जोड़ा जा रहा है ताकि औषधीय पौधों जैसे वन संसाधनों की रक्षा करते हुए स्थानीय आजीविका को भी समर्थन मिल सके।

राष्ट्रीय स्तर पर, भारत ने पारंपरिक ज्ञान के प्रलेखन और उसके संरक्षण को संस्थागत रूप से सुनिश्चित करने हेतु *नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन* और *ट्रेडिशनल नॉलेज डिजिटल लाइब्रेरी* जैसे संगठनों की स्थापना की है। ये संस्थाएँ आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध तथा जनजातीय ज्ञान प्रणालियों के स्थानीय नवाचारों और औषधीय ज्ञान को संरक्षित करने, बायोपायरेसी को रोकने और व्यापक वैज्ञानिक तथा व्यावसायिक उपयोग के लिए साझा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

भारत सरकार के आयुष मंत्रालय के अंतर्गत होने वाले विभिन्न कार्यक्रमों में पारंपरिक चिकित्सा को आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं के साथ जोड़ा जा रहा है। अरुणाचल प्रदेश में, आयुष केंद्र अक्सर जनजातीय चिकित्सकों के साथ सहयोग करते हैं, जिससे हर्बल औषधियों और पारंपरिक उपचार पद्धतियों का संयोजन ऐलोपैथिक चिकित्सा के साथ किया जाता है। यह ज्ञान प्रणालियों के बीच पारस्परिक सम्मान और ज्ञान-विनिमय को बढ़ावा देता है, जिससे दूरस्थ जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच में वृद्धि होती है।

हालाँकि, इस एकीकरण में कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे - नैतिक जैव-अन्वेषण और लाभ-साझेदारी की सुनिश्चितता, स्थानीय समुदायों के बौद्धिक संपदा अधिकारों की रक्षा और ज्ञान के व्यावसायीकरण से उत्पन्न जोखिम। साथ ही, भाषाई क्षरण और सामाजिक-आर्थिक बदलावों के कारण यह पारंपरिक ज्ञान धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा है, जो इसकी निरंतरता के लिए एक गंभीर खतरा है।

संक्षेप में, औषधीय पौधों और पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों की मान्यता के माध्यम से अरुणाचल प्रदेश और भारत ने पारंपरिक ज्ञान को शास्त्रीय और आधुनिक प्रणालियों के साथ एकीकृत करने की दिशा में सराहनीय प्रगति की है। ये समेकित प्रयास न केवल पारंपरिक ज्ञान की प्रभावशीलता और पहुँच को बढ़ाते हैं, बल्कि सतत विकास, सांस्कृतिक पहचान की रक्षा और स्वास्थ्य तथा संरक्षण क्षेत्र में नवाचार को भी प्रोत्साहित करते हैं।

आदिवासी ज्ञान का क्षरण : अरुणाचल प्रदेश, जो भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में स्थित है, कई आदिवासी समुदायों का निवास स्थल है, जैसे कि *आदी*, *अपातानी*, *न्यीशी*, *और गालो* जनजातियाँ। प्रत्येक जनजाति के पास समृद्ध पारंपरिक ज्ञान का भंडार होता है। यह आदिवासी ज्ञान कृषि, चिकित्सा, अनुष्ठान, लोककथाएँ और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन जैसे विविध क्षेत्रों में फैला हुआ है। हालांकि, पिछले कुछ दशकों में, यह अमूल्य सांस्कृतिक विरासत अनेक सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय कारणों से तेजी से घटती जा रही है। आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण की वजह से इन समुदायों के कई युवा सदस्यों ने पारंपरिक प्रथाओं को छोड़कर औपचारिक शिक्षा और आधुनिक जीवनशैली अपनाना शुरू कर दिया है। उदाहरण के लिए, *पारंपरिक झूम खेती* (स्थानांतरित खेती) को व्यावसायिक खेती के तरीकों ने प्रतिस्थापित कर दिया है और स्थानीय चिकित्सा पद्धतियों की जगह ऐलोपैथिक उपचारों ने ले ली है।

एक अन्य मुख्य कारण स्थानीय भाषाओं और मौखिक ज्ञान के हस्तांतरण का घट जाना है। अरुणाचल प्रदेश में पारंपरिक ज्ञान अधिकतर मौखिक रूप से बुजुर्गों से युवाओं तक पहुँचता है। परंतु हिंदी और अंग्रेज़ी जैसी मुख्यधारा की भाषाओं का स्कूलों और मीडिया में

वर्चस्व इस महत्वपूर्ण ज्ञान हस्तांतरण के मार्ग को कमजोर कर रहा है। परिणामस्वरूप, कई युवा अपनी मूल भाषाओं और उनमें छुपे सांस्कृतिक कथानकों से अपरिचित हो रहे हैं, जिससे पारंपरिक ज्ञान धीरे-धीरे लुप्त हो रहा है। पर्यावरणीय क्षरण भी एक निर्णायक भूमिका निभा रहा है। वनों की कटाई, भूमि उपयोग में बदलाव और विकास परियोजनाओं ने पारंपरिक प्रथाओं के लिए जरूरी वन संसाधनों जैसे औषधीय पौधों और जंगली खाद्य स्रोतों तक पहुंच को कम कर दिया है, जिससे आदिवासी ज्ञान प्रणाली कमजोर हुई है।

सांस्कृतिक आत्मसात और सरकारी एकीकरण नीतियाँ भी आदिवासी ज्ञान संरक्षण पर असर डाल रही हैं। जहां विकासात्मक पहलकदमियाँ बुनियादी ढांचे और संपर्क को बेहतर बनाने के उद्देश्य से शुरू की गई हैं, वे ही कभी-कभी अनजाने में जनजातीय स्वायत्तता और सांस्कृतिक प्रथाओं को कमज़ोर कर देती हैं। धार्मिक परिवर्तन और मिशनरी गतिविधियों ने पारंपरिक विश्वास प्रणालियों को प्रभावित किया है, जिससे समुदाय अपने पूर्वजों के ज्ञान से दूर हो रहे हैं।

इसके अलावा, अधिकांश आदिवासी ज्ञान अभी भी औपचारिक रूप से अभिलेखित या मान्यता प्राप्त नहीं है, जिससे यह बुजुर्ग ज्ञान धारकों के मरने के साथ समाप्त होने का खतरा बढ़ा देता है। इस विरासत को सुरक्षित रखने के लिए व्यवस्थित प्रलेखन, डिजिटल अभिलेखागार और जैव विविधता अधिनियम जैसे कानूनी संरक्षण की सख्त आवश्यकता है।

अरुणाचल प्रदेश में आदिवासी ज्ञान का क्षरण केवल सांस्कृतिक पहचान को ही खतरे में नहीं डालता बल्कि समुदाय की अपनी पर्यावरणीय संसाधनों का सतत प्रबंधन करने की क्षमता को भी कम करता है। पारंपरिक प्रथाओं ने जैव विविधता संरक्षण और पर्यावरणीय परिवर्तन के प्रति स्थिरता में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यदि ये प्रथाएँ लुप्त हो गईं, तो पारिस्थितिकीय स्थिरता कम हो सकती है और जलवायु परिवर्तन व सामाजिक बदलावों के प्रति समुदाय की अनुकूलन क्षमता घट सकती है।

इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए, समुदाय-नेतृत्व वाली पहलकदमियाँ जो पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों के साथ जोड़ती हैं, प्रभावी सिद्ध हो रही हैं। साथ ही, पारंपरिक ज्ञान को औपचारिक शिक्षा और नीति निर्माण में शामिल करने से इन सांस्कृतिक संपत्तियों को पुनर्जीवित और संरक्षित किया जा सकता है, ताकि वे आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित रहें।

संरक्षण की चुनौतियाँ :

मानवजनित दबाव

- अतिरिक्त संग्रहण: *ऐकोनिटम हेटरोफाइलम* और *कॉप्टिस टीटा* जड़ों के अत्यधिक संग्रहण के कारण विलुप्ति के खतरे से जूझ रहे हैं।
- आवासीय विनाश: झूम खेती, जल परियोजनाएं और सड़क विस्तार जैसे विकास कार्य महत्वपूर्ण प्राकृतिक आवासों का विनाश कर रहे हैं।
- जलवायु परिवर्तन: हिमालयी जड़ी-बूटियों में फेनोलॉजिकल (फूलना, फलना-फूलना आदि) परिवर्तन दिख रहे हैं, उदाहरण के लिए, *डैक्टिलोराइजा हेटेगिरिया* ।

संकटग्रस्त प्रजातियाँ :

वैज्ञानिक नाम	स्थिति	उपयोग
कॉप्टिस टीटा	गंभीर रूप से संकटग्रस्त	जीवाणुरोधी, दस्त रोग में उपयोगी
पोडोफिलम हेक्सैंड्रम	संकटग्रस्त	कैंसररोधी
एंजेलिका ग्लौका	संकटग्रस्त	पाचन सुधारक, सुगंधित
डैक्टिलोराइजा हेटेगिरिया	संकटग्रस्त	टॉनिक, कामोद्दीपक
स्वर्शिया चिरायता	संवेदनशील	यकृत टॉनिक

सीमा-पार व्यापार और नीति में कमी : अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं पर कमजोर कानून प्रवर्तन के कारण *टैक्सस वालिचियाना* और *पोडोफाइलम हेक्सेंड्रम* के अवैध व्यापार को बढ़ावा मिल रहा है। अरुणाचल प्रदेश में राज्य स्तर पर "एक्सेस और बेनिफिट शेयरिंग" का कोई प्रभावी ढांचा नहीं है, जिससे पारंपरिक संसाधनों के संरक्षण और न्यायसंगत लाभ वितरण में बाधा आती है।

संरक्षण रणनीतियाँ :

अरुणाचल प्रदेश में औषधीय पौधों का स्थलांतर संरक्षण: अरुणाचल प्रदेश में औषधीय और सुगंधित पौधों के प्राकृतिक आवासों को सुरक्षित रखने में स्थलांतर संरक्षण का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है। इस राज्य की समृद्ध जैव विविधता की रक्षा संरक्षित क्षेत्रों, सामुदायिक पहलों और सहभागितात्मक वन प्रबंधन कार्यक्रमों के माध्यम से की जाती है, ताकि ये औषधीय पौधे अपनी मूल पारिस्थितिक तंत्र में फल-फूल सकें।

अरुणाचल प्रदेश के कई संरक्षित क्षेत्र औषधीय पौधों की विविधता के लिए प्रमुख हॉटस्पॉट हैं। नमदाफा टाइगर रिज़र्व, जो भारत के सबसे बड़े संरक्षित क्षेत्रों में से एक है, यहां महत्वपूर्ण औषधीय प्रजातियां जैसे *कॉप्टिस टीटा*— एक दुर्लभ और संकटग्रस्त जड़ी-बूटी जो *मिश्मी* जनजाति द्वारा पारंपरिक रूप से पाचन संबंधी रोगों में उपयोग की जाती है — और *स्वर्शिया चिरायता*, जो पाइरिया और यकृत संरक्षण के लिए मूल्यवान है, पाई जाती हैं। सेसा ऑर्किड अभयारण्य अपने समृद्ध ऑर्किड विविधता के लिए प्रसिद्ध है, जिसमें कई औषधीय ऑर्किड प्रजातियां शामिल हैं जो जनजातीय स्वास्थ्य प्रणालियों के लिए आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त, ईगलनेस्ट वन्यजीव अभयारण्य में *इलिसियम ग्रिफि*थियाइ की आबादी पाई जाती है, जो पारंपरिक चिकित्सा में उपयोग होने वाला एक महत्वपूर्ण सुगंधित पौधा है।

औपचारिक संरक्षित क्षेत्रों से परे, अरुणाचल प्रदेश में सामुदायिक नेतृत्व वाली संरक्षण पहल भी अत्यंत महत्वपूर्ण साबित हुई हैं। उदाहरण स्वरूप, जीरो घाटी और डामबुक के आदिवासी समुदायों ने पवित्र वन क्षेत्र स्थापित किए हैं और उनकी सुरक्षा करते हैं, जो दुर्लभ और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण पौधों के स्थलांतर संरक्षण स्थल के रूप में कार्य करते हैं। ये पवित्र वन अक्सर सामुदायिक संरक्षित क्षेत्र के रूप में प्रबंधित होते हैं, जहां पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान और रीति-रिवाजों के तहत संग्रहण और जैव विविधता संरक्षण नियंत्रित होता है।

स्थानीय समुदायों और वन विभाग के संयुक्त वन प्रबंधन समितियां भी वन संसाधनों सहित औषधीय पौधों के सतत प्रबंधन में योगदान देती हैं। संयुक्त वन प्रबंधन के माध्यम से समुदाय वन संरक्षण, पुनरुत्पादन, और नियंत्रित संग्रहण में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं, जिससे जीविका की आवश्यकताओं और संरक्षण लक्ष्यों के बीच संतुलन बना रहता है। ऐसे सहयोगात्मक शासन मॉडल स्थानीय देखरेख को वैज्ञानिक वानिकी प्रथाओं के साथ जोड़कर स्थलांतर संरक्षण को मजबूत करते हैं।

हालांकि कई सफलताएं मिली हैं, फिर भी अतिक्रमण, आवासीय खंडन और सीमित संस्थागत समर्थन जैसी चुनौतियां स्थलांतर संरक्षण को गंभीर रूप से प्रभावित करती हैं। समुदाय की भागीदारी को सशक्त बनाना, तकनीकी सहायता प्रदान करना और पारंपरिक ज्ञान को वैज्ञानिक प्रबंधन के साथ एकीकृत करना आवश्यक है ताकि औषधीय पौधों की प्राकृतिक आवासों में रक्षा सुनिश्चित हो सके।

बाह्य स्थल संरक्षण:

इस पारंपरिक ज्ञान को संरक्षण और संवर्धन पहलों के माध्यम से बढ़ावा दिया जा रहा है ताकि संकटग्रस्त औषधीय पौधों की प्रजातियों को सुरक्षित किया जा सके और उनका सतत उपयोग सुनिश्चित हो सके। अरुणाचल प्रदेश राज्य औषधीय पादप बोर्ड, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, और भारतीय घासभूमि एवं चारा अनुसंधान संस्थान जैसे संस्थानों के साथ मिलकर कई बहिस्थानिक संरक्षण सुविधाओं का संचालन करता है, जिनमें औषधीय पौधों के नर्सरी शामिल हैं। ये नर्सरी महत्वपूर्ण प्रजातियों जैसे *रुबिया कॉर्डिफोलिया, कर्क्यूमा काएसिया, और स्टीविया रिबॉडियाना* (प्राकृतिक मिठास देने वाला पौधा) के संवर्धन और संरक्षण पर केंद्रित हैं। ये प्रयास स्थलांतर संरक्षण की पूरक भूमिका निभाते हैं और आवासीय विनाश तथा अति संग्रहण से उत्पन्न खतरों से निपटने में मदद करते हैं।

विशेष रूप से, अरुणाचल प्रदेश ने औषधीय पौध संरक्षण क्षेत्र स्थापित किए हैं — ये वन क्षेत्रों के विशेष टुकड़े होते हैं जहां औषधीय पौधों के सतत संग्रहण और संरक्षण को प्राथमिकता दिया जाता है, जिसमें अक्सर समुदाय की भागीदारी होती है। औषधीय पौध संरक्षण क्षेत्र का उद्देश्य जैव विविधता बनाए रखना और पारंपरिक पौध उपयोग के आधार पर जीविका को सहारा देना है। हालांकि औषधीय पौध संरक्षण क्षेत्र संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हैं, लेकिन इनके प्रभावी प्रबंधन में अभी भी प्रवर्तन, संसाधन आवंटन, और स्थानीय सहभागिता जैसी चुनौतियां बनी हुई हैं।

राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो और जी.बी. पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान जैसे अनुसंधान संस्थान अरुणाचल प्रदेश के औषधीय पौध *जर्मप्लाज्म* के संग्रहण, भंडारण, और वैज्ञानिक अध्ययन में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। इनके कार्य *जर्मप्लाज्म* संरक्षण को बढ़ावा देते हैं और सतत उपयोग एवं प्रजनन कार्यक्रमों के लिए वैज्ञानिक आधार प्रदान करते हैं।

इन सकारात्मक पहलों के बावजूद, अरुणाचल प्रदेश में संरक्षण कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन में कई बाधाएं हैं। राज्य की कठिन और दुर्गम भौगोलिक स्थिति नर्सरियों और संरक्षण स्थलों की निगरानी और रखरखाव को जटिल बनाती है, जिससे समय पर हस्तक्षेप में बाधा

आती है। इसके अतिरिक्त, अपर्याप्त वित्त पोषण संवर्धन कार्यक्रमों के विस्तार और दीर्घकालिक रखरखाव को सीमित करता है। एक और महत्वपूर्ण चुनौती स्थलांतर संरक्षण प्रयासों और बाह्यस्थल कार्यक्रमों (जैसे नर्सीरियां और जर्मप्लाज्म बैंक) के बीच समन्वय की कमी है, जो कुल मिलाकर संरक्षण की दक्षता को कम करती है।

इन खामियों को दूर करने के लिए नीति समर्थन को मजबूत करना, समुदाय की भागीदारी बढ़ाना और पारंपरिक ज्ञान को वैज्ञानिक संरक्षण विधियों के साथ मिलाकर समग्र प्रबंधन रणनीतियों को लागू करना आवश्यक है। ऐसा व्यापक दृष्टिकोण अरुणाचल प्रदेश की समृद्ध जातीय औषधीय विरासत और इसे पोषित करने वाली जैव विविधता के संरक्षण के लिए अनिवार्य है।

क्रियान्वयन में चुनौतियां:

- दुर्गम भूगोल के कारण निगरानी और नर्सरी के रखरखाव में कठिनाई।
- सीमित वित्त पोषण से संवर्धन और दीर्घकालिक देखभाल बाधित।
- स्थलांतर और बहिर्स्थानिक संरक्षण प्रयासों के बीच समन्वय की कमी।

नीति और संस्थागत ढांचा:

शासन संस्थाएँ

- **अरुणाचल प्रदेश राज्य औषधीय पौधा बोर्ड:** यह संस्था औषधीय और सुगंधित पौधों से संबंधित नीतियों का समन्वय करती है और केंद्र सरकार की योजनाओं को लागू करती है।

- **बागवानी नीति (2025–35):** इस नीति में एक विशेष एमएपी मिशन की शुरुआत की गई है, जिसमें औषधीय पौधों के वैध व्यापार के प्रावधान शामिल हैं।

प्रमुख नीति सिफारिशें

चुनौती	कमजोरी	सिफारिश
अधिक कटाई	कमजोर प्रवर्तन	वन विभाग की गश्त और निगरानी को मजबूत करें
पारंपरिक ज्ञान का नुकसान	बौद्धिक संपदा अधिकारों का अभाव	पारंपरिक ज्ञान का डिजिटल पुस्तकालय लॉन्च करें
बाजार की बाधाएं	कमजोर आपूर्ति श्रृंखला	एमएपी किसान सहकारिता को प्रोत्साहित करें
लाभ वितरण	एबीएस तंत्र का अभाव	राज्य स्तर पर एबीएस दिशानिर्देश तैयार करें

वैश्वीकरण और बाज़ार एकीकरण: वैश्विक स्तर पर हर्बल उत्पादों की बढ़ती मांग ने एमएपी की खेती में रुचि बढ़ाई है। वर्ष 2025 में राज्य सरकार, उद्योग, और किसान सहकारिताओं के बीच एक त्रिपक्षीय समझौता हुआ, जिसके तहत न्यूनतम समर्थन मूल्य और प्रशिक्षण सुनिश्चित किए गए। हालांकि, मध्यस्थों की उपस्थिति और बुनियादी ढांचे की कमी, जैसे ठंडी श्रृंखला, सही मूल्यांकन में बाधक हैं जिसके कारण किसानों को न्यायसंगत लाभ नहीं मिल पाता।

निष्कर्ष और भविष्य की दिशा: अरुणाचल प्रदेश अपनी अद्वितीय जैव विविधता और समृद्ध आदिवासी सांस्कृतिक विरासत के साथ एक महत्वपूर्ण मोड़ पर खड़ा है, जहाँ उसे अपनी जैविक संपदा के संरक्षण और जैव-आर्थिक अवसरों के सतत विकास के बीच संतुलन साधना है। यहाँ का व्यापक जातीय औषधीय ज्ञान और औषधीय एवं सुगंधित पौधों की विविधता न केवल एक अमूल्य सांस्कृतिक विरासत है, बल्कि यह आजीविका, स्वास्थ्य देखभाल और औषधि क्षेत्र में नवाचारों के लिए भी व्यापक संभावनाएँ प्रस्तुत करती है।

इस क्षमता को पूरी तरह से जागरूक करने के लिए बहु-आयामी रणनीति आवश्यक है। सबसे पहले, औषधीय एवं सुगंधित पौधों एमएपी के विकास हेतु एक समर्पित नीति का निर्माण एवं क्रियान्वयन जरूरी है, जो संरक्षण, खेती, शोध और व्यावसायीकरण को दिशा दे सके। इस नीति में पारंपरिक ज्ञान की सुरक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए ताकि आदिवासी समुदायों को उनके बौद्धिक और सांस्कृतिक अधिकारों का सम्मान मिले।

चित्र 1. *एकोनिटम हेटेरोफिलम* वाल. के बाद रॉयल; 2. *एकोनिटम नागारम* स्टाप्फ; 3. *ऐकोरस कैलामस* एल.; 4. *ऐस्कुलस असमिका* ग्रिफ.; 5. *एगलैया एडुलिस* (रॉक्सब.) वाल.; 6. *एलियम हूकेरी* थ्वाइटस; 7. *अमोमम सबउलेटम* रॉक्सब; 8. *अमोर्फोफैलस पियोनिफोलियस* (डेन्स्ट) निकोल्सन; 9. *ब्यूमॉनसिया ग्रान्डीफ्लोरा* वाल.

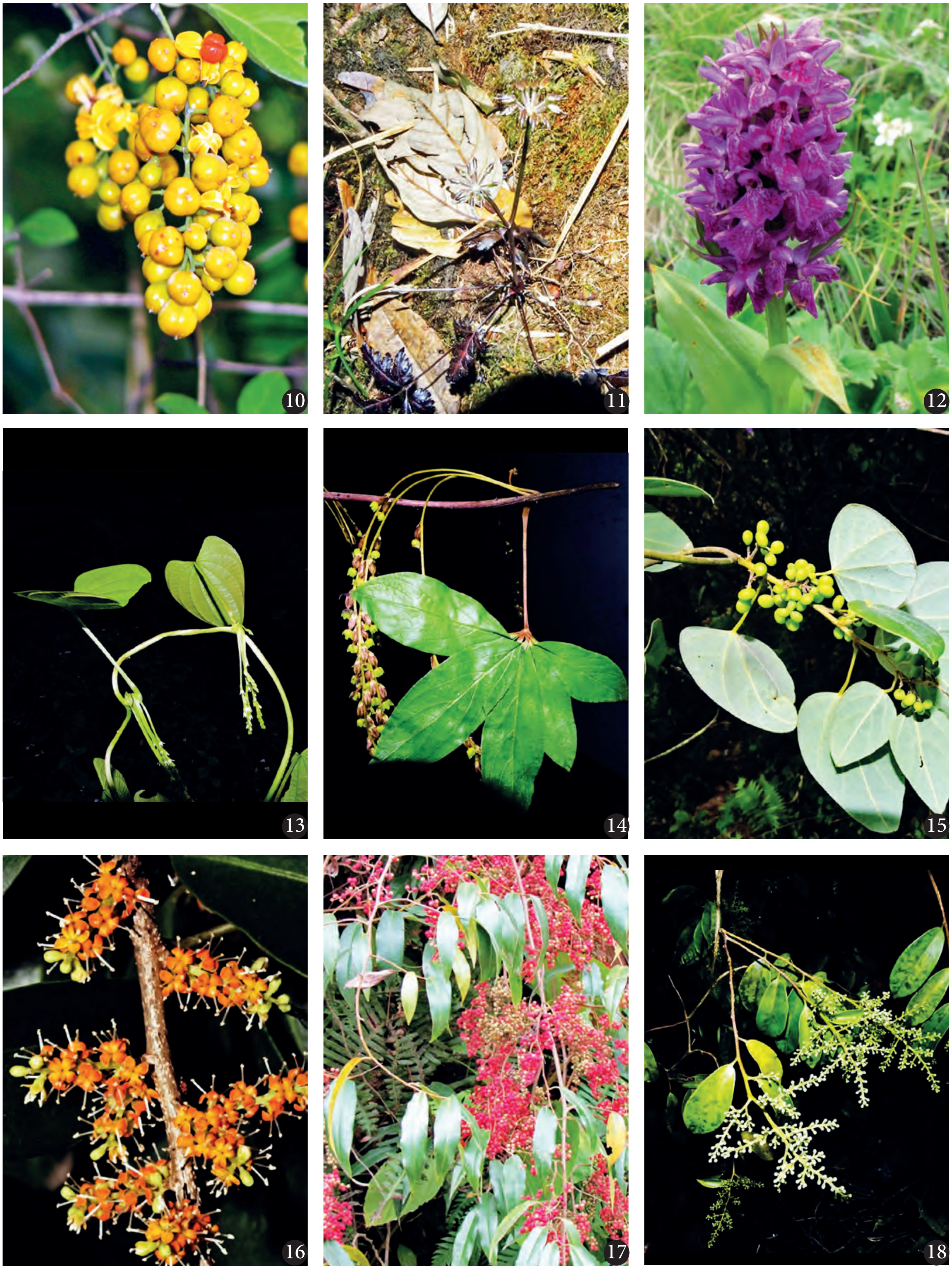

चित्र 10. *सिलास्ट्रस पैनीकुलेटस* विल्ड.; 11. *कॉप्टिस टीटा* वाल.; 12. *डैक्टाइलोराइजा हेटेजिरिया* (डी. डॉन) सू.; 13. *डाइऑस्केरिया बल्बिफेरा* एल.; 14. *डाइऑस्केरिया पेंटाफिला* एल.; 15. *डिप्लोक्लिसिया ग्लौकेसेन्स* (ब्लूम) डायल्स; 16. *एम्बेलिया बेसाल* (रोएम व शूल्ट) ए. डीसी.; 17. *एम्बेलिया फ्लोरिबुंडा* वाल.; 18. *एम्बेलिया राइबीज* बर्म. एफ.।

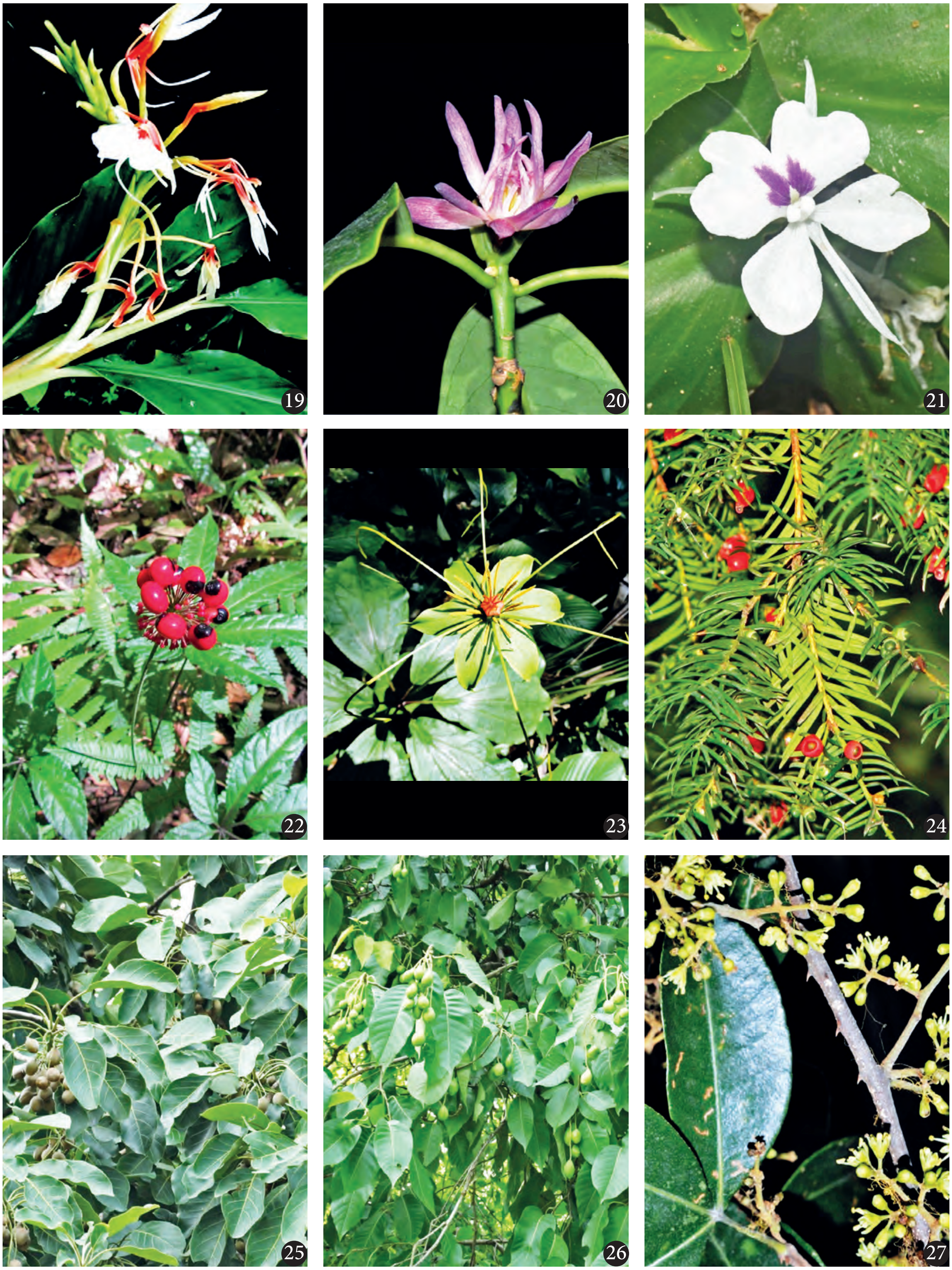

चित्र 19. *हिडिकियम स्पाइकेटम* स्म.; 20. *इलिसियम ग्रिफिथियाइ* हूक. एफ. व थॉमसन; 21. *कैम्फेरिया रोटुंडा* एल.; 22. *पैनेक्स स्यूडोजिन्सेंग* वाल.; 23. *पैरिस पॉलीफिला* स्म.; 24. *टैक्सस वालिचियाना* जुक.; 25. *टर्मिनेलिया बेलिरिका* (गार्टन.) रोक्सब.; 26. *टर्मिनेलिया चेबुला* रेट्ज; 27. *जैन्थोजाइल एशियाटिकम* (एल.) एप्पलहांस, ग्रोप्पो व जे. वेन।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 09-11 (2025)

साइकैस-परिचय

स्नेहा गांधी

दक्कन क्षेत्रीय केंद्र, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हैदराबाद

"*साइकैस*" एकल वंशीय कुल साइकैडेसी का आद्य वंश है। जुरासिक काल को सामान्यतः "साइकैस युग" के रूप में जाना जाता है, क्योंकि इस दौरान साइकैस की प्रचुरता और विविधता अपने शिखर पर थी। वैज्ञानिकों का मानना है कि *साइकैड* विशाल शाकाहारी डायनासोर का पसंदीदा भोजन था। डायनासोर तो पूरी तरह से गायब हो गए हैं, लेकिन कुछ *साइकैड* आज भी जीवित हैं, इसलिए उन्हें "जीवित जीवाश्म" समझा जाता है। उन्हें "प्लांट डायनासोर" भी कहा जाता है। *साइकैड* उस समय दुनिया भर में व्याप्त थे, लेकिन अब वे केवल उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों तक ही सीमित हैं।

साइकैस का तना भूमिगत और आमतौर पर बिना शाखाओं वाला होता है, लेकिन *साइकैस स्वामी* और *साइकैस साईनाथियाइ* जैसी कुछ प्रजातियों में शाखाएं पाई जाती हैं। *साइकैस* को आईयूसीएन रेड डेटा बुक में एक संकटग्रस्त प्रजाति के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। साथ ही इसे "दुनिया के संकटग्रस्त पौधों की सूची-1997" में विश्व के सबसे अधिक संकटग्रस्त पौधों के कुलों के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। वर्तमान में भारत में *साइकैड* के लिए दो मुख्य खतरे मौजूद हैं, आवास का नुकसान और व्यापारिक उपयोग के लिए अतिदोहन। *साइकैस* पौधों को उनके प्राकृतिक आवास में संरक्षित करना एक आदर्श संरक्षण पद्धति है।

साइकैड की विश्व सूची (ऑनलाइन संस्करण) के अनुसार, भारत में *साइकैस* की 12 प्रजातियाँ हैं। वर्णित *साइकैस* की पहली प्रजाति भारत से *साइकैस सर्सिनेलिस* थी, जिसे भारत के लिए स्थानिक माना जाता है। भारत में, साइकैस *सर्सिनेलिस* सबसे व्यापक रूप से वितरित और शायद सबसे विविध है। *साइकैस* भारत के दक्षिणी-पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट, उत्तर-पूर्वी राज्यों और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में वितरित हैं। इस लेख में भारत में पाई जाने वाली *साइकैस* की विभिन्न प्रजातियों के वितरण, अभिनिर्धारण के लक्षण, विशिष्ट विशेषताओं, उपयोगों और संरक्षण स्थिति पर प्रकाश डाला गया है।

भारत में साइकैस का वितरण और विविधता: मुख्य प्रजातियों में *साइकैस सर्सिनेलिस*, *साइकैस पेक्टीनेटा*, *साइकैस बेडडोमी*, *साइकैस रेवोलुटा*, *साइकैस रम्फी* और *साइकैस ज़ेलेनिका* शामिल हैं।

1. **साइकैस सर्सिनेलिस :** इसे क्वीन सागो के नाम से भी जाना जाता है। यह प्रजाति मुख्य रूप से केरल, तमिलनाडु और कर्नाटक में फैले पश्चिमी घाट के पर्णपाती जंगलों में पाई जाती है। इसमें बड़े, पंखदार पत्ते और विशिष्ट नारंगी-लाल बीज होते हैं। *साइकैस सर्सिनेलिस* का उपयोग आमतौर पर सजावटी उद्देश्यों और पारंपरिक चिकित्सा में किया जाता है। जंगली-मदन-मस्त-का-फूल, मदनकमल, मुण्डिकाळु, ऑर्गुना, ओडासा-मारी, कैनिंगे, मदनगमा, कमाक्षी इसके स्थानीय नाम हैं। पुष्प बाजार के लिए पत्तियों की कटाई की जाती है। पत्तियों और तने के गूदे में औषधीय गुण होते हैं। पेड़ का कांद (गूदा) निकालने के लिए बड़े और पुराने पेड़ो को काट दिया जाता है। बीजों को भोजन का नियमित हिस्सा माना जाता है व बीजों से एक प्रकार का आटा बनाया जाता है।

2. **साइकैस पेक्टीनेटा**: यह प्रजाति असम, मेघालय और मणिपुर सहित पूर्वोत्तर राज्यों की स्थानिक प्रजाति है। यह उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय जंगलों में पनपता है। इसके बीजों को स्टार्च के लिए संसाधित किया जाता है, जिसका उपयोग स्थानीय व्यंजनों में किया जाता है। थलजिमुरा, बर्मी - मोंडाइन, बी-ची सू-तिए, फेंग-वेई-जियाओ, दान, डिएङ्ग-सिया-गोडा, थकाल, थलजिमुरा, बोका, प्लॉन्ग, प्रोंग खाओ, प्रोंग पा इसके स्थानीय नाम हैं। असम में पहाड़ी जनजातियाँ बीज और नवोत्पन्न पत्तियाँ खाती हैं। मांसल तने को पीसकर बाल धोने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। ओडिशा में नर शंकु का उपयोग कीटनाशक के रूप में किया जाता है। हालाँकि यह एक प्रचुर और व्यापक प्रजाति है, लेकिन इसके प्राकृतवास में निरंतर कमी और जनसंख्या में गिरावट आ रही है। इसे संवेदनशील A2C (आईयूसीएन रेड लिस्ट ऑफ़ थ्रेटन्ड स्पीशीज़, 2009) के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।

3. **साइकैस बेडडोमी**: *साइकैस बेडडोमी* का तना पतला और पत्तियाँ गहरे हरे रंग की होती हैं। इसके पत्तों का उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है। आंध्र प्रदेश में पूर्वी घाटों के लिए यह एक स्थानिक प्रजाति है। इसके गूदे का उपयोग दुर्बलता को ठीक करने के लिए आहार में किया जाता है। गर्भपात में भी इसका उपयोग किया जाता है। स्थानीय लोगों द्वारा इसके बीजों से आटा तैयार किया जाता है।

स्थानीय यानाडी जनजातियों और ग्रामीण समुदायों द्वारा नर शंकु अर्क का उपयोग स्वास्थ्य टॉनिक तैयार करने के लिए किया जाता है। पूरे पौधे को सजावटी उद्देश्यों के लिए भी काटा जाता है।

4. **साइकैस रेवोलुटा:** *साइकैस रेवोलुटा* एक विदेशी प्रजाति है जो जापान में स्थानिक है। इसे आमतौर पर जापानी सागो पाम के नाम से जाना जाता है। इसे सजावटी पौधे के रूप में पूरे भारत के बगीचों में व्यापक रूप से उगाया जाता है। इसका तना धीमी गति से बढ़ता है, पत्तियाँ पंखदार होती हैं और यह विभिन्न जलवायु परिस्थितियों के प्रति उच्च सहनशीलता रखता है।

5. **साइकैस रुम्फि**: यह अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में पाया जाता है। *साइकैस रुम्फि* या समुंद्री सागो, तटीय वातावरण के लिए अनुकूल है। स्पंजी ऊतक की मोटी परत की उपस्थिति के कारण, बीज नमकीन पानी में डूबते नहीं हैं व जीवनक्षम रहते है। यह विशेषता बीज के जलीय फैलाव में मदद करती है। इसकी चौड़ी, चमकदार पत्तियाँ होती हैं और इसका उपयोग अक्सर बागवानी और पारंपरिक चिकित्सा में किया जाता है।

6. **साइकैस ज़ेलेनिका**: यह विशिष्ट विशेषण '*ज़ेलोना*' से लिया गया है, जो सीलोन (श्रीलंका) का लैटिनकृत प्रतिपादन है। सीलोन से इस प्रजाति के प्रकार एकत्र किए गए थे। इसका उपयोग पारंपरिक समारोहों और सजावटी उद्देश्यों के लिए किया जाता है। बीजों का उपयोग औषधीय उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।

7. **साइकैस स्फेरिका**: विशिष्ट विशेषण *स्फेरिका*, लैटिन शब्द '*स्फेरिकल*' से लिया गया है, जो इसके गोल बीज को दर्शाता है। यह भारत में पोटीथा, अर्जुन चेट्टू, नासी चेट्टू, ओरुगुना के नाम से भी जाना जाता है। *साइकैस स्फेरिका* के तने के गूदे से 'सागो आटा' बनाया जाता है। *सी. स्फेरिका* बीज का आटा उच्च पोषण मूल्य रख सकता है और इसे खाद्य पूरक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

8. **साइकैस एनाइकलेंसिस**: शब्द 'एनाइकलेंसिस', अन्नाइकल पर्वत क्षेत्र के नाम पर आधारित है, जहां से इस प्रजाति का वर्णन किया गया है। मलयालम में, अन्नाई का अर्थ हाथी और कल का अर्थ चट्टान है। नर शंकु का उपयोग कीट विकर्षक के रूप में किया जाता है।

9. **साइकैस नैथॉर्स्टियाइ**: इसका तना स्थानीय दवा में इस्तेमाल किया जाता है।

10. **साइकैस दर्शियाइ :** इसका वर्णन पहली बार ए.जे.सी.बी.आई.बी.जी., भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा के वैज्ञानिक डॉ. आर.सी. श्रीवास्तव ने एक नई प्रजाति के रूप में किया था। उन्होंने इस वर्गक का नाम अपने पोते 'दर्श' के नाम पर रखा है। संभवतः इन पौधों का संग्रह अंडमान और निकोबार द्वीप समूह से किया गया था।

11. **साइकैस इडेंटेटा:** इसका प्रचलित नाम बेयिट, दंतहीन साइकैस, पाकु राजा, टूथलेस साइकैड, क्वाले पहांग है। *साइकैस* को बगीचों में सजावटी पौधे के रूप में उगाया जाता है और इसकी पत्तियों का उपयोग वियतनाम के कुछ हिस्सों में सब्जी के रूप में किया जाता है।

12. **साइकैस साईनाथियाइ :** इसके पौधों की पत्तियों का उपयोग धार्मिक और सांस्कृतिक समारोहों के दौरान किया जाता है। तरुणत पत्तियों के शीर्ष ताज और बीजांड को रांची सेटलर्स द्वारा पकाकर अंडमान के उन क्षेत्रों में सब्जी के रूप में खाया जाता है जहां यह स्वाभाविक रूप से पाया जाता है।

पारिस्थितिकी और सांस्कृतिक महत्व: *साइकैस* पौधे अपनी पारिस्थितिकी लाभ और सांस्कृतिक महत्व के लिए महत्वपूर्ण हैं। भारत में, *साइकैस* प्रजातियों का महत्व अपर्णिहत चिंगुलार, मीठा, गुड़दड और नारियल के साथ मिलाकर उपयोग किया जाता है। दक्षिण भारत और अंडमान द्वीप में, साइकैस पत्तियों का धार्मिक और सजावटी उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाता है। इनकी अलंकारिक दिखावट, मजबूती और अनुकूलता के कारण, ये बक्से बनाने में उपयोग होते हैं। *साइकैस सर्सिनेलिस* के बीज की दृढ़चोल को स्नफ बॉक्स बनाने के लिए उपयोग किया जाता है। बीज अक्सर स्टार्च निकालने के लिए प्रसंस्कृत किए जाते हैं, जो कुछ क्षेत्रों में महत्वपूर्ण खाद्य के रूप मे उपयोग होता है।

साइकैस पौधों के खतरे: इनकी महत्वपूर्णता के बावजूद, साइकैस पौधे कई खतरों का सामना कर रहे हैं:

❖ **पर्यावरण की नष्टता:** शहरीकरण, वनों की कटाई और कृषि के विस्तार ने उनके प्राकृतवास की भारी क्षति की है, जिससे *साइकैस* की जनसंख्या पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा है।

- **अधिश्रवण:** *साइकैस* पौधों को अपनी अलंकारिक मूल्य, बीज और पत्तियों के लिए अधिश्रवण के लिए उठाया जाता है। असंतुलित अधिश्रवण विधियां उनकी संख्या में तेजी से गिरावट का कारण बनी हैं।
- **जलवायु परिवर्तन:** जलवायु पैटर्न में परिवर्तन, जैसे कि तापमान और वर्षा का विस्तार, *साइकैस* प्रजातियों के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा प्रस्तुत करते हैं, जो अक्सर विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होते हैं।
- **अवैध व्यापार:** *साइकैस* प्रजातियों का उनके सजावटी उपयोग के कारण अवैध व्यापार किया जाता है जिससे जंगल में इसका संरक्षण और भी कठिन हो जाता है।

संरक्षण प्रयास:

- **स्वस्थानिक संरक्षण:** *साइकैस* प्रजातियों को उनके प्राकृतिक आवास में संरक्षित करना महत्वपूर्ण है। इसमें समायोजित और प्रबंधित संरक्षण क्षेत्रों की स्थापना और प्रबंधन शामिल है, जैसे कि राष्ट्रीय उद्यान और वन्यजीव अभ्यारण्य, जहां *साइकैस* जनसंख्या फलित हो सकती है। पर्यावरणीय कानूनों के तंत्र का और सख्ती से पालन करने और सतत भूमि उपयोग प्रथाओं को प्रशासित करने के प्रयास महत्वपूर्ण हैं।
- **बहिर्स्थानिक संरक्षण:** वनस्पति उद्यान और बीज बैंक वनस्पति प्रजातियों के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। केरल में ट्रॉपिकल बॉटैनिकल गार्डन और रिसर्च इंस्टीट्यूट (टीबीजीआरआई) जैसे संस्थान सक्रिय रूप से *साइकैस* पौधों को उगाते और संरक्षित करते हैं। बीज बैंक्स जेनेटिक सामग्री के संरक्षण को सुनिश्चित करते हैं, जिसे भविष्य में पुनर्वास और पुनर्स्थापन परियोजनाओं में उपयोग किया जा सकता है।
- **सामुदायिक भागीदारी:** संरक्षण प्रयासों में स्थानीय समुदायों को शामिल करना उनकी सफलता के लिए महत्वपूर्ण है। जागरूकता अभियान और शिक्षा कार्यक्रम समुदायों को *साइकैस* पौधों की महत्वता समझाने में मदद कर सकते हैं और सतत अधिश्रवण प्रथाओं को प्रोत्साहित कर सकते हैं। स्थानीय लोगों को संरक्षण रणनीतियों में शामिल करना *साइकैस* संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है, जो *साइकैस* संरक्षण में उनकी परंपरागत ज्ञान और प्रथाओं को संरक्षित करने में मदद कर सकती है।
- **अनुसंधान और मॉनिटरिंग:** *साइकैस* प्रजातियों की पारिस्थितिकी, प्रजनन जैविकी और आनुवंशिक संविविधता को समझने के लिए चल रहे अनुसंधान आवश्यक हैं। विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों और संरक्षण संगठनों की सहयोगी अनुसंधान परियोजनाएँ *साइकैस* पौधों के ज्ञान और संरक्षण को बढ़ा सकती हैं।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 12-14 (2025)

आर्द्रभूमि और फाइकस: एक सहसंबंध

तनय शील, श्रेयोशी सेन शर्मा, छाया देओरी व विजय

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा-711103
वनस्पति विज्ञान विभाग, विज्ञान संकाय, असम डाउनटाउन विश्वविद्यालय, पानीखैती-781026
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग

आर्द्रभूमियाँ धरती पर उपस्थित सबसे अधिक उत्पादक पारिस्थितिक तंत्रों में से एक हैं, जो अपनी उल्लेखनीय जैव विविधता के कारण अक्सर वर्षा वनों और प्रवाल भित्तियों से समानता दर्शाती हैं। ये पारिस्थितिक संतुलन से संबंधित कई महत्वपूर्ण कार्य जैसे प्राकृतिक जल शोधक, कार्बन सिंक, बाढ़ नियामक और विभिन्न प्रजातियों के आवास के रूप में कार्य करती हैं। आर्द्रभूमि पारिस्थितिक तंत्रों में *फाइकस* वंश के वृक्षों की भूमिका एक अत्यंत रोचक और पारिस्थितिक दृष्टि से महत्वपूर्ण विषय है, जो अपेक्षाकृत कम चर्चित है तथा आमतौर पर इन्हें अंजीर के वृक्ष के रूप में जाना जाता है। हालाँकि *फाइकस* वंश की प्रजातियाँ आमतौर पर उष्णकटिबंधीय वनों और शहरी परिदृश्यों से जुड़ी होती हैं, लेकिन कई प्रजातियाँ आर्द्रभूमि के किनारों, दलदली क्षेत्रों में या उनके आस-पास भी पनपती हैं, जहाँ वे महत्वपूर्ण पारिस्थितिक भूमिकाएँ निभाती हैं। यह लेख आर्द्रभूमि पारिस्थितिक तंत्रों में *फाइकस* वंश की प्रजातियों की भूमिका का विश्लेषण करता है और साथ ही इन दोनों के मध्य पारिस्थितिक परस्परता, सह-अस्तित्व तथा उनके संयुक्त जैव-विविधतामूलक योगदान को रेखांकित करता है।

आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्र

आर्द्रभूमि वह क्षेत्र होता हैं, जहाँ जल या तो मिट्टी को संतृप्त करता है या वर्ष भर लंबे समय तक सतह या उसके आस-पास बना रहता है। ये क्षेत्र स्थायी या अस्थायी रूप से जलमग्न हो सकते हैं तथा वर्षा, सतही जल या भूमिगत जल स्रोतों पर निर्भर रहते है। इस श्रेणी में दलदल, दलदली भूमि से सम्बंधित विविध पारिस्थितिक तंत्र शामिल हैं। ये प्राकृतवास जल स्तर को नियंत्रित करके, प्रदूषकों को छानकर और विभिन्न जलीय प्रजातियों के प्रजनन स्थल के रूप में कार्य करके पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आर्द्रभूमि में पाई जाने वाली वनस्पतियां इन जलभराव स्थितियों के लिए विशिष्ट रूप से अनुकूलित होती हैं। इनमें आमतौर पर जलीय या जलोद्भिद (हाइड्रोफाइटिक) पौधे शामिल होते हैं जो कम ऑक्सीजन वाले वातावरण में भी पनप सकते हैं। यह विशिष्ट पादप समुदाय आर्द्रभूमि पारिस्थितिक तंत्रों के समग्र स्वास्थ्य और कार्यक्षमता में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता हैं।

फाइकस वंश

फाइकस वंश में वृक्षों, झाड़ियों और लताओं की 850 से अधिक प्रजातियाँ शामिल हैं। पारिस्थितिक समुदायों की संरचना और स्थिरता बनाए रखने के लिए अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के कारण कई *फाइकस* प्रजातियों को कीस्टोन प्रजाति माना जाता है। अंजीर वृक्ष अंजीर ततैयाओं के साथ अपने अनोखे पारस्परिक संबंध के लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अंजीर के पुष्पक्रम बंद होते हैं और सामान्य परागणकों के लिए सुलभ नहीं होते है, ऐसे में अंजीर ततैया ही वे एकमात्र कीट होते हैं जो इनमें प्रवेश कर परागण की प्रक्रिया को संभव बनाते हैं, इसके बदले में ये ततैयाएँ अंजीर के भीतर अंडे देती हैं, जिससे उनकी अगली पीढ़ी का जन्म होता है। यह सहजीवी संबंध दोनों प्रजातियों के अस्तित्व के लिए आवश्यक होता है। यह विशिष्ट अंतःक्रिया न केवल प्रजनन सुनिश्चित करती है, बल्कि जैव विविधता को बनाए रखने में *फाइकस* के महत्व को भी रेखांकित करती है। *फाइकस* प्रजातियों के फल पक्षियों, स्तनधारियों और कीड़ों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए महत्वपूर्ण खाद्य स्रोत होते हैं, विशेषकर संकट की स्थिति में, जैसे भोजन की कमी के समय, ये प्रजातियाँ आर्द्रभूमियों या पारिस्थितिक तंत्रों की खाद्य श्रृंखला और पोषी स्तरों को सहारा प्रदान करती है। हालाँकि *फाइकस* आमतौर पर आर्द्रभूमि के बजाय उष्णकटिबंधीय जंगलों और शहरी हरित क्षेत्रों से अधिक जुड़ा हुआ है, फिर भी कई प्रजातियाँ नम वातावरण के प्रति उल्लेखनीय सहनशीलता और अनुकूलनशीलता प्रदर्शित करती हैं। उदाहरण के लिए, *फाइकस रिलीजिओसा* (पीपल/पवित्र अंजीर), *फाइकस बेंगालेन्सिस* (बरगद), *फाइकस हिस्पिडा* और *फाइकस इलेस्टिका* (रबर फ़िग) नदी तटीय क्षेत्रों, तालाबों, नदी तटों और अस्थायी आर्द्रभूमि आवासों में पाई जाती हैं। ये प्रजातियाँ अक्सर अपनी मजबूत और फैली हुई जड़ों को संतृप्त मिट्टी में स्थापित करती हैं, जिससे वे आर्द्रभूमि के किनारों को स्थिर रखने और मिट्टी के कटाव को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार, ये न केवल भौगोलिक दृष्टि से भूमि की संरचना को सुरक्षित रखती हैं, बल्कि आर्द्रभूमियों के पारिस्थितिक कार्यों जैसे पोषक तत्वों का प्रवाह, जल निस्यंदन और जैव विविधता संरक्षण को भी सुदृढ़ बनाती हैं।

आर्द्रभूमि और फाइकस वृक्षों के बीच संबंध अत्यंत जटिल है:

- **जलवैज्ञानिक अनुकूलन**: कुछ *फाइकस* प्रजातियों ने विशिष्ट जड़ संरचनाएँ विकसित की हैं, जैसे हवाई जड़ें और सहायक जड़ें, जो

उन्हें बाढ़-प्रवण और जलभराव वाले वातावरण में पनपने में सक्षम बनाती हैं। ये अनुकूलन न केवल संरचनात्मक सहारा प्रदान करते हैं, बल्कि संतृप्त मिट्टी में जहाँ ऑक्सीजन की उपलब्धता अक्सर सीमित होती है, वहां ऑक्सीजन की आपूर्ति को सुनिश्चित करती हैं। साथ ही जलमग्न परिस्थितियों में पोषण अवशोषण को भी संभव बनाती हैं। अत: जहाँ पारंपरिक जड़ प्रणालियाँ लगातार मिट्टी की संतृप्ति और कम ऑक्सीजन स्तर के कारण कार्य करने में कठिनाई महसूस कर सकती हैं, वहां इस प्रकार के शारीरिक लक्षण आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्रों में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

❖ **मृदा एवं जल संरक्षण**: आर्द्रभूमि क्षेत्रों में या उसके आस-पास उगने वाले *फाइकस* के वृक्ष, मृदा स्थिरीकरण और सतही अपवाह को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनकी विस्तृत जड़ प्रणालियाँ मृदा को स्थिर रखती हैं तथा नदी एवं आर्द्रभूमि के किनारों पर कटाव को रोकती हैं। इसके अतिरिक्त, इनकी चौड़ी छतरियाँ वर्षा को रोककर भूमि पर उसके प्रत्यक्ष प्रभाव के साथ ही कटाव को भी कम करती हैं। इन कार्यों के माध्यम से, *फाइकस* प्रजातियाँ आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्र की संरचनात्मक अखंडता और पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

❖ **जैव विविधता को बढ़ावा**: *फाइकस* वृक्षों के फल वर्ष भर विविध प्रकार के वन्यजीवों के लिए एक निरंतर और विश्वसनीय भोजन स्रोत प्रदान करते हैं। आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्रों में, जहाँ मौसमी उतार-चढ़ाव भोजन की उपलब्धता को अक्सर प्रभावित करते हैं, वहाँ *फाइकस* प्रजातियाँ एक स्थिर और लचीले पशु समुदाय के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये वृक्ष वर्ष भर फल देते हैं, जिससे पक्षी, बंदर, चमगादड़ और यहाँ तक कि कुछ मछलियाँ भी गिरे हुए अंजीर खाती हैं तथा निरंतर पोषण प्राप्त करती हैं। *फाइकस* द्वारा प्रदान किए जाने वाले पोषक तत्व विविध प्रजातियों के बीच पोषण संबंधी जाल को बनाए रखने में सहायक होते हैं। इस निरंतरता के कारण आर्द्रभूमि जैसे संवेदनशील आवासों में *फाइकस* वृक्ष पारिस्थितिक संतुलन के स्थायी आधारस्तंभ के रूप में कार्य करते हैं।

❖ **सूक्ष्म प्राकृतवास निर्माण**: *फाइकस* वृक्षों की विशिष्ट भौतिक संरचना, जैसे मोटे तने, विस्तृत शाखाएँ और हवाई जड़ें, आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्र में कई प्रजातियों को आवश्यक आवासीय सुविधाएँ प्रदान करती है। अनेक पक्षी इन वृक्षों की शाखाओं और तनों में बने प्राकृतिक गुहाओं का उपयोग अपने घोंसले बनाने के लिए करते हैं, जबकि सरीसृप और उभयचर इन संरचनाओं में आश्रय तथा विश्राम स्थल पाते हैं। इसके अतिरिक्त, *फाइकस* की गहन और फैली हुई जड़ प्रणाली नम मिट्टी में सूक्ष्म आवास का निर्माण करती है, जो अकशेरुकी एवं सूक्ष्मजीवों के विविध समुदायों का पोषण करती है। ये सूक्ष्म जीव न केवल पोषक तत्त्वों के चक्रण में योगदान देते हैं, बल्कि मृदा की गुणवत्ता और संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यप्रणाली को भी सुदृढ़ बनाते हैं। इस प्रकार, *फाइकस* वृक्ष केवल खाद्य स्रोत नहीं, बल्कि बहुस्तरीय आवास और पारिस्थितिक स्थिरता के भी केंद्र बिंदु हैं।

❖ **सांस्कृतिक और संरक्षण संबंधी निहितार्थ:** दक्षिण एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया की विविध संस्कृतियों में *फाइकस* वृक्षों को अत्यंत पवित्र और पूजनीय माना गया है। ये वृक्ष न केवल धार्मिक अनुष्ठानों का हिस्सा हैं, बल्कि ग्रामीण समाजों में सामाजिक, आध्यात्मिक और भौगोलिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेषकर आर्द्रभूमियों के समीप स्थित *फाइकस* वृक्ष समुदायों के लिए प्रमुख स्थलचिह्न, छाया के स्रोत, पारंपरिक औषधीय संसाधन, और सामुदायिक सभा स्थलों के रूप में कार्य करते हैं। पारिस्थितिक संरक्षण के दृष्टिकोण से, *फाइकस* प्रजातियाँ अपने गहन जड़ तंत्र के कारण मिट्टी की अपरदन से रक्षा, स्थानीय जलवायु की स्थिरता, और जैव विविधता के पोषण में सहायक होती हैं। विशेष रूप से क्षरित या लुप्तप्राय: आर्द्रभूमियों में इन वृक्षों का योजनाबद्ध रोपण न केवल परिदृश्य को पुनः जीवंत कर सकता है, बल्कि यह पुनर्वनीकरण परियोजनाओं और आर्द्रभूमि बफर ज़ोन के निर्माण में भी सहायक सिद्ध हो सकता है। अत: इनकी उपस्थिति अनायास ही आसपास की पारिस्थितिकी को संरक्षण प्रदान करती है। इस प्रकार, जब पारंपरिक सांस्कृतिक मूल्य और पारिस्थितिकीय सेवाएँ एक साथ जुड़ते हैं, तो *फाइकस* वृक्ष स्थायी आर्द्रभूमि प्रबंधन और पुनर्स्थापन रणनीतियों में एक केंद्रीय भूमिका निभा सकते हैं। यह दृष्टिकोण केवल पारिस्थितिकी के संरक्षण को ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक उत्तराधिकार की रक्षा को भी सुनिश्चित करता है।

निष्कर्ष: आर्द्रभूमि और *फाइकस* प्रजातियों के बीच का संबंध पारिस्थितिक परस्पर निर्भरता के एक सशक्त मॉडल का उदाहरण है। हालाँकि, *फाइकस* प्रजातियाँ पारंपरिक रूप से आर्द्रभूमि वनस्पतियों के रूप में वर्गीकृत नहीं की जाती हैं, फिर भी वे इन पारिस्थितिक प्रणालियों के स्वास्थ्य, लचीलेपन और दीर्घकालिक स्थिरता में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती हैं। ये वृक्ष अपने गहन जड़-तंत्र के माध्यम से मिट्टी को स्थिर करना, कटाव को नियंत्रित करना तथा स्थानीय जैव विविधता को पोषण प्रदान करने के साथ-साथ, अपने फलों, छालों और पत्तियों के द्वारा विभिन्न जीवों को सतत पोषण व आवास भी उपलब्ध कराते है, इससे आर्द्रभूमि की पारिस्थितिक जटिलता और कार्यात्मकता को भी बल मिलता है। तेजी से हो रहे विकास, शहरीकरण, जलवायु परिवर्तन और कृषि विस्तार के कारण जब आर्द्रभूमियाँ नष्ट या क्षीण हो

रही हैं, तब भी *फाइकस* जैसी बहुक्रियाशील प्रजातियों का प्रयोग एक सक्रिय पुनर्स्थापन रणनीति के रूप में उभर रहा है। इन वृक्षों की नम पर्यावरण के प्रति अनुकूलनशीलता और कई क्षेत्रों में इनका सांस्कृतिक व आध्यात्मिक महत्व, इन्हें संरक्षण परियोजनाओं के लिए सामाजिक स्वीकार्यता भी प्रदान करता है। अतः ऐसे पौधों की भागीदारी न केवल पारिस्थितिकीय सेवाओं को पुनः सशक्त कर सकती है, बल्कि संरक्षण को स्थानीय सांस्कृतिक मूल्यों से भी जोड़ सकती है। इस दृष्टिकोण से, *फाइकस* प्रजातियाँ आर्द्रभूमि प्रबंधन के लिए एक समग्र, बहु-आयामी समाधान प्रस्तुत करती हैं जो पारिस्थितिकीय कार्यों और मानव-सांस्कृतिक संदर्भों के बीच संतुलन स्थापित कर सकता है।

आर्द्रभूमि के किनारे फाइकस 1. *फाइकस बेंगालेंसिस* एल. 2. *फाइकस हिरटा* उप प्रजाति *ट्राईलोबा* (बुच.-हैम. एक्स वोइग्ट) एल.बी. चौधरी 3. *फाइकस रेसीमोसा* एल. एवं *फाइकस हिस्पिडा* एल. एफ. 4. *फाइकस रेलिजिओसा* एल.

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 15-18 (2025)

वृक्षों की विरासत- कोलकाता

डॉ. उमेशकुमार एल. तिवारी व सिंचिता बिश्वास

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग

इस लेख के माध्यम से कोलकाता की समृद्ध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और पारिस्थितिक धरोहर पर गहन दृष्टि डालने का प्रयास किया गया है। यह केवल पौधों या वृक्षों की सूची ही नहीं है, बल्कि एक ऐसा अध्ययन है जिसमें यह समझने का प्रयास किया गया है कि कैसे कोलकाता का भूगोल, इतिहास, औपनिवेशिक अतीत और आधुनिक शहरीकरण उसकी वानस्पतिक संरचना और जैव विविधता को प्रभावित करते हैं। इसमें शहर की वनस्पति विविधता को केंद्र में रखते हुए उसे सामाजिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य से भी जोड़ा गया है। इससे हमें यह समझने में मदद मिलती है कि किसी भी शहर की पहचान केवल उसकी इमारतों, सड़कों और आर्थिक गतिविधियों से नहीं होती, बल्कि उसकी हरियाली, उसके वृक्ष और उसकी जैव विविधता भी उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कोलकाता का इतिहास, उसकी संस्कृति और उसकी पारिस्थितिकी इस बात के प्रमाण हैं कि यह शहर आज भी अपनी हरित धरोहर को जीवित रखे हुए है और भविष्य में भी इसे संरक्षित करने की आवश्यकता बनी रहेगी।

कोलकाता की भौगोलिक स्थिति ने यहाँ की वनस्पति को विशेष रूप से प्रभावित किया है। गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा क्षेत्र में बसा यह शहर कभी दलदली भूमि से घिरा हुआ था, जिसे समय के साथ ब्रिटिश शासन और बाद में स्वतंत्र भारत में योजनाबद्ध तरीके से विकसित किया गया। गंगा की सहायक धारा हुगली नदी के किनारे स्थित होने के कारण यह भूमि अत्यंत उपजाऊ रही है। इस क्षेत्र की पलवार मिट्टी ने यहाँ के पेड़ों, फसलों और उद्यानों को पोषण देकर वनस्पति विविधता को बढ़ावा दिया है। औपनिवेशिक काल ने कोलकाता की वनस्पति पर गहरा प्रभाव डाला। ब्रिटिश शासन के दौरान विदेशी पौधों को यहाँ लाया गया और वनस्पति उद्याने बनाई गई जहां न केवल नई प्रजातियों को रोपित किया गया बल्कि उन्हें भारतीय परिस्थितियों में अनुकूल बनाने का प्रयास भी किया गया। इस प्रकार कोलकाता केवल व्यापार और प्रशासन का केंद्र नहीं रहा, बल्कि यह पौधों और वृक्षों के वैज्ञानिक अध्ययन का भी वैश्विक केंद्र बना। औपनिवेशिक प्रभाव ने जहाँ कुछ देशी प्रजातियों को हाशिए पर डाला, वहीं कई विदेशी प्रजातियाँ यहाँ की पारिस्थितिकी में स्थायी रूप से शामिल हो गई।

वनस्पति उद्यानों की भूमिका कोलकाता की पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा है। विक्टोरिया मेमोरियल गार्डन और शहर के अन्य हरित क्षेत्र केवल सौंदर्य और मनोरंजन के लिए नहीं, बल्कि संरक्षण, शिक्षा और वैज्ञानिक शोध के केंद्र भी हैं। इन उद्यानों ने यह दिखाया कि कैसे एक महानगर, जो निरंतर फैलता और बदलता है, अपने भीतर हरित धरोहर को भी सहेज सकता है। आधुनिक शहरीकरण और प्रदूषण के युग में शहरी हरियाली का महत्व और बढ़ गया है। वृक्ष न केवल ऑक्सीजन और छाया प्रदान करते हैं, बल्कि प्रदूषण कम करने, जल संरक्षण करने और जैव विविधता को बनाए रखने में भी मददगार होते हैं। शहरी जीवन की आपाधापी में पार्क, उद्यान और वृक्षों से आच्छादित सड़कें नागरिकों को मानसिक शांति और शारीरिक स्वास्थ्य का आधार प्रदान करती हैं। इस दृष्टि से कोलकाता की वानस्पतिक संरचना केवल प्राकृतिक धरोहर ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक संपदा भी है।

कोलकाता, जिसे पहले कलकत्ता कहा जाता था, भारत के इतिहास और संस्कृति का एक अनूठा संगम है। यह शहर केवल बंगाल ही नहीं बल्कि पूरे भारतीय उपमहाद्वीप की राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षणिक चेतना का केंद्र रहा है। इसकी जड़ें तीन छोटे गाँवों—गोविंदपुर, सुतानटी और कालिकाता—में निहित हैं। 17वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में इन गाँवों के संगम ने धीरे-धीरे एक ऐसे नगर का रूप लिया जो आगे चलकर ब्रिटिश उपनिवेश का प्रशासनिक और व्यापारिक केंद्र बना। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1690 के दशक में यहाँ अपना ठिकाना बनाया और समय के साथ यह शहर ब्रिटिश भारत की राजधानी घोषित हुआ। 1911 तक यह राजधानी बना रहा और इसी दौरान शहर ने औपनिवेशिक वास्तुकला, प्रशासनिक ढाँचे और शिक्षा व्यवस्था में तीव्र विकास देखा। विक्टोरिया मेमोरियल, फोर्ट विलियम, राज भवन जैसे भवन आज भी उस युग के प्रतीक हैं। परंतु केवल प्रशासनिक महत्व ही नहीं, कोलकाता ने समाज सुधार और सांस्कृतिक पुनर्जागरण में भी अग्रणी भूमिका निभाई। प्राकृतिक दृष्टि से देखा जाए तो कोलकाता का भूगोल भी इसके ऐतिहासिक और सांस्कृतिक स्वरूप को आकार देता रहा है। हुगली नदी के किनारे स्थित होने के कारण यहाँ व्यापार और नौपरिवहन की प्रचुर संभावनाएँ रही हैं। गंगा के उपजाऊ मैदानों ने यहाँ कृषि और वृक्षारोपण को प्रोत्साहित किया। यही कारण है कि समय के साथ यह क्षेत्र न केवल राजनीतिक और सांस्कृतिक राजधानी बना बल्कि अपनी हरियाली और वनस्पति विविधता के लिए भी प्रसिद्ध हुआ।

कोलकाता की वनस्पति विविधता पर ब्रिटिश उपनिवेश काल का गहरा प्रभाव पड़ा। जिस समय ईस्ट इंडिया कंपनी ने यहाँ अपना मुख्यालय स्थापित किया, उसी समय से पौधों और वृक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन, विदेशी प्रजातियों का आयात और व्यापारिक दृष्टि से उपयोगी फसलों की खेती को प्राथमिकता दी जाने लगी। यह प्रक्रिया केवल स्थानीय पारिस्थितिकी तक सीमित नहीं रही, बल्कि पूरे भारत की कृषि, वनस्पति विज्ञान और पर्यावरणीय संरचना को प्रभावित करने वाली साबित हुई। ब्रिटिश शासन ने सबसे पहले विदेशी पौधों को यहाँ लाने और उन्हें भारतीय परिस्थितियों में अनुकूल बनाने का कार्य आरंभ किया। कई पौधे, जिनका वाणिज्यिक मूल्य अधिक था, जैसे *हेविया ब्राजीलिएन्सिस* (रबर का वृक्ष), कोलकाता में लाए गए और यहाँ के जलवायु में उगाने का प्रयास किया गया। इसी प्रकार नील और जूट जैसी नकदी फसलों को बड़े पैमाने पर उगाया गया। इन फसलों ने जहाँ ब्रिटिश अर्थव्यवस्था को मजबूती दी, वहीं स्थानीय कृषि प्रणाली और जैव विविधता को नुकसान भी पहुँचाया। एक ही फसल पर आधारित कृषि प्रणाली (मोनोकल्चर) ने मिट्टी की उर्वरता को कम किया, कीट और बीमारियों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाई और पारंपरिक खेती को हाशिए पर धकेल दिया।

औपनिवेशिक दौर में वनस्पति उद्यानों का महत्व भी तेजी से बढ़ा। 1787 में स्थापित "रॉयल बॉटैनिक गार्डन" (अब आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान) केवल पौधों के संरक्षण का स्थान नहीं था, बल्कि यह वैज्ञानिक शोध और औपनिवेशिक अर्थनीति का केंद्र भी था। यहाँ विदेशी पौधों को वर्गीकृत किया गया, उनकी खेती की संभावनाएँ जाँची गईं और उन्हें साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में भेजा गया। इस प्रकार कोलकाता वैश्विक वनस्पति नेटवर्क का महत्वपूर्ण केंद्र बन गया। हालाँकि, इस प्रक्रिया के दुष्परिणाम भी सामने आए। विदेशी प्रजातियों के तेजी से फैलाव ने कई बार देशी प्रजातियों को प्रतिस्पर्धा में पीछे छोड़ दिया। कुछ पौधों ने स्थानीय संसाधनों—जैसे मिट्टी के पोषक तत्व, धूप और जल—पर एकाधिकार जमा लिया, जिसके कारण स्थानीय प्रजातियों की संख्या में कमी आई। कई प्रजातियाँ विलुप्ति के कगार तक पहुँच गईं। इस प्रकार औपनिवेशिक वनस्पति नीति ने जहाँ एक ओर नई प्रजातियों के अभिनिर्धारण और वर्गीकरण को प्रोत्साहन दिया, वहीं दूसरी ओर पारंपरिक पारिस्थितिकीय संतुलन को भी बाधित किया। इसके साथ ही, ब्रिटिश शासन ने वनस्पति को केवल आर्थिक संसाधन के रूप में देखा। औषधीय पौधों और पारंपरिक हर्बल ज्ञान को नज़रअंदाज़ कर केवल उन पौधों को प्राथमिकता दी गई जो साम्राज्य के लिए आर्थिक लाभकारी थे। हालाँकि समय के साथ कई विदेशी प्रजातियाँ जैसे नीम, इमली और कुछ सजावटी वृक्ष स्थानीय संस्कृति और जीवन का हिस्सा बन गईं। इन पौधों का उपयोग औषधि, भोजन और सांस्कृतिक अनुष्ठानों में होने लगा।

औपनिवेशिक वानस्पतिक प्रभाव का सबसे बड़ा योगदान यह रहा कि कोलकाता वनस्पति विज्ञान का केंद्र बन गया। यहाँ वैज्ञानिक अध्ययन, वर्गिकी और नई प्रजातियों के प्रलेखन का कार्य हुआ। विलियम रॉक्सबर्ग जैसे वनस्पतिशास्त्रियों ने "फ्लोरा इंडिका" जैसी कृतियाँ लिखीं, जिनके आधार पर आगे चलकर भारतीय वनस्पति विज्ञान की नींव रखी गई। अतः यह कहा जा सकता है कि औपनिवेशिक वानस्पतिक प्रभाव ने कोलकाता की पारिस्थितिकी और संस्कृति दोनों को गहराई से प्रभावित किया। यह प्रभाव दोहरा था—एक ओर नई प्रजातियों और वैज्ञानिक अध्ययन की नींव पड़ी, तो दूसरी ओर स्थानीय जैव विविधता और पारंपरिक कृषि व्यवस्था पर गहरा आघात भी हुआ। आज जब हम कोलकाता की हरियाली और पौधों की विविधता को देखते हैं, तो उसमें ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों की छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

कोलकाता केवल अपनी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहर के लिए ही नहीं, बल्कि अपने हरे-भरे उद्यानों और हरित स्थलों के लिए भी जाना जाता है। यह शहर लंबे समय तक ब्रिटिश शासन का केंद्र रहा और इसी दौरान यहाँ कई उद्यानों की स्थापना की गई। समय के साथ ये स्थल केवल औपनिवेशिक प्रयोगशालाएँ नहीं रहे, बल्कि संरक्षण, शिक्षा, शोध और आम जनता के लिए हरित शांति स्थल के रूप में विकसित हुए। सबसे प्रमुख स्थल है आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान (पूर्व में रॉयल बॉटैनिक गार्डन), जिसकी स्थापना 1787 में कर्नल रॉबर्ट काइड ने की थी। उस समय इसका उद्देश्य आर्थिक दृष्टि से उपयोगी पौधों को उगाना और उनका अध्ययन करना था। यहाँ दालचीनी, जायफल, काली मिर्च जैसे पौधे लगाए गए, जिन्हें ब्रिटिश साम्राज्य के लिए महत्वपूर्ण माना जाता था। समय के साथ यह उद्यान केवल व्यापारिक पौधों तक सीमित नहीं रहा बल्कि वैज्ञानिक वर्गिकी और शोध का केंद्र बना। आज यहाँ लगभग 12,000 से अधिक पौधे मौजूद हैं, जिनमें से कई दुर्लभ और लुप्तप्राय: भी हैं। इस उद्यान का सबसे आकर्षक स्थल है महान वटवृक्ष, जिसकी छत्रछाया दुनिया के सबसे बड़े वृक्षों में गिनी जाती है। इसके अलावा विक्टोरिया मेमोरियल गार्डन भी अत्यंत प्रसिद्ध है। यह ऐतिहासिक स्मारक, जिसका निर्माण 1906 से 1921 के बीच हुआ, सुंदर उद्यानों से घिरा हुआ है। लगभग 57 एकड़ में फैले इन उद्यानों में ऐडनसोनिया (बाओबाब), लिट्सिया, बिश्कोफिया जैसे वृक्ष लगाए गए हैं। ये उद्यान न केवल पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र हैं बल्कि शहर के लिए एक महत्वपूर्ण हरित फेफड़े का काम करते हैं। "मैदान" कोलकाता का सबसे बड़ा खुला हरा क्षेत्र है। लगभग 304 हेक्टेयर में फैला यह क्षेत्र "सिटी ऑफ जॉय" का वास्तविक

श्वसन तंत्र कहलाता है। यहाँ बड़ी संख्या में वृक्षों की विविधता है, जो न केवल वायु प्रदूषण को नियंत्रित करते हैं बल्कि नागरिकों को खेलकूद और मनोरंजन के लिए भी विशाल खुला क्षेत्र प्रदान करते हैं। इसी क्षेत्र में ईडन गार्डन भी स्थित है, जो विश्वप्रसिद्ध क्रिकेट मैदान है और साथ ही हरे-भरे पेड़ों और उद्यानों से सुसज्जित है। शहर के दक्षिण भाग में स्थित रवींद्र सरोवर (ढाकुरिया झील) भी एक प्रमुख हरित स्थल है। यह कृत्रिम झील 1950 के दशक में विकसित की गई थी। इसके चारों ओर 11,000 से अधिक वृक्ष हैं और लगभग 178 प्रजातियाँ यहाँ पाई जाती हैं। इसे "दक्षिण कोलकाता का फेफड़ा" कहा जाता है क्योंकि यह वायु शुद्धिकरण और तापमान नियंत्रण में विशेष भूमिका निभाता है। यह स्थल प्रवासी पक्षियों और स्थानीय जीव-जंतुओं के लिए भी आवास का कार्य करता है। इसी तरह सेंट्रल पार्क (सॉल्ट लेक) और ईको पार्क (न्यू टाउन) आधुनिक हरित स्थलों के रूप में उभरे हैं। सेंट्रल पार्क लगभग 150 एकड़ में फैला है और स्थानीय वनस्पति के साथ-साथ कई प्रवासी पक्षियों को भी आश्रय देता है। वहीं ईको पार्क, 480 एकड़ क्षेत्र में फैला, 2012 में स्थापित किया गया। इसमें थीम आधारित उद्यान जैसे बटरफ्लाई गार्डन, जापानी गार्डन, हर्बल गार्डन आदि हैं। यह पार्क केवल मनोरंजन का स्थल ही नहीं बल्कि शहरी पारिस्थितिकी और संरक्षण का भी प्रतीक है। इसके अलावा टॉलीगंज क्लब, अलीपुर प्राणिसंग्रहालय के उद्यान, गवर्नर हाउस (राज भवन) का गार्डन, और एग्री-हॉर्टिकल्चरल सोसाइटी का गार्डन भी शहर की हरियाली में योगदान करते हैं।

तेज़ी से बढ़ते शहरीकरण और औद्योगीकरण ने आधुनिक नगरों को सुविधाओं से परिपूर्ण तो बना दिया है, परंतु इसके साथ ही वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, हीट आइलैंड प्रभाव, जल संकट और हरियाली की कमी जैसी गंभीर समस्याएँ भी खड़ी कर दी हैं। इन चुनौतियों से निपटने में शहरी वृक्षारोपण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। कोलकाता जैसे महानगरों में वृक्ष केवल सौंदर्य बढ़ाने का साधन नहीं हैं, बल्कि ये जीवन की गुणवत्ता सुधारने और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए अनिवार्य हैं। शहरी वृक्ष प्रदूषण नियंत्रण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह ज्ञात तथ्य है कि वृक्ष वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड और सल्फर डाइऑक्साइड जैसी हानिकारक गैसों को अवशोषित कर वातावरण को शुद्ध करते हैं। पत्तियाँ धूलकण और सूक्ष्म कणों को पकड़कर वायु की गुणवत्ता में सुधार करती हैं। इसके अतिरिक्त, वृक्ष अपनी छाया और वाष्पोत्सर्जन के माध्यम से शहरी तापमान को कम कर "हीट आइलैंड प्रभाव" को घटाते हैं। वृक्ष शहरी अर्थव्यवस्था के लिए भी मूल्यवान संसाधन हैं। गर्मियों में छाया प्रदान कर ये बिजली की खपत घटाते हैं जिसके कारण एयर कंडीशनर और कूलर की आवश्यकता कम होती है। कई अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि हरे-भरे क्षेत्रों के आसपास की संपत्तियों के मूल्य अधिक होते हैं। इस प्रकार वृक्ष अप्रत्यक्ष रूप से संपत्ति के मूल्य और कर संग्रह में वृद्धि करते हैं। वृक्षारोपण और हरित क्षेत्रों के रख-रखाव से स्थानीय स्तर पर माली, नर्सरी प्रबंधन, लैंडस्केपिंग और पर्यावरणीय सेवाओं जैसे रोजगार भी उत्पन्न होते है।

कोलकाता का वनस्पति संसार केवल संख्या के दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि विविधता और संरचना की दृष्टि से भी अत्यंत समृद्ध है। शहर में किए गए विस्तृत सर्वेक्षणों में 72 कुलों और 232 वंशों के अंतर्गत लगभग 336 पादप प्रजातियाँ दर्ज की गई हैं। यह विविधता न केवल शहर की प्राकृतिक परिस्थितियों का प्रतिबिंब है बल्कि औपनिवेशिक काल से लेकर आधुनिक शहरी योजनाओं तक फैले विभिन्न प्रभावों का परिणाम भी है। ज्ञात प्रजातियों में *फैबेसी* सबसे प्रमुख कुल है, जिसमें 34 प्रजातियाँ आती हैं। इसके अलावा *ऐरेकेसी* में 28, *मिमोसेसी* में 21, *बिग्नोनेसी* में 18 और *मोरेसी* में 17 प्रजातियाँ दर्ज की गई है। अन्य प्रमुख कुलों में सीज़लपिनिएसी, स्टर्कुलिएसी, मर्टेसी और ऐपोसाइनेसी शामिल हैं। वंश के स्तर पर *फाइकस* सबसे प्रमुख है, जिसकी 12 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इसके अलावा *बौहिनिया*, *टर्मिनेलिया*, *सिज़ीज़ियम*, *डेल्बर्जिया*, *ऐल्बिज़िया*, *सिट्रस* और *प्लूमेरिया* जैसे वंश भी व्यापक रूप से मौजूद हैं। कोलकाता की वनस्पति विविधता केवल स्थानीय नहीं है, बल्कि यह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जुड़ी हुई है। 336 प्रजातियों में से लगभग 107 प्रजातियाँ उष्णकटिबंधीय एशिया से हैं। इसके अलावा 71 प्रजातियाँ उष्णकटिबंधीय अमेरिका, 36 अफ्रीका और 32 भारतीय उपमहाद्वीप में पाई जाती हैं। अन्य प्रजातियों में एशिया, यूरोप, दक्षिण-पूर्व एशिया, ऑस्ट्रेलिया, चीन, भूमध्यसागरीय क्षेत्र, पश्चिम एशिया और मध्य अमेरिका के समशीतोष्ण क्षेत्रों का योगदान है। इस वैश्विक मिश्रण ने कोलकाता की वनस्पति को एक "सर्वदेशीय" रूप प्रदान किया है।

कोलकाता के वृक्ष केवल पारिस्थितिक भूमिका ही नहीं निभाते बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी यह अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। नीम प्राकृतिक कीट-प्रतिरोधक है, पीपल ऑक्सीजन का बड़ा स्रोत है, जबकि वटवृक्ष पक्षियों और जीव-जंतुओं के लिए आश्रय प्रदान करता है। बेल और पीपल जैसे वृक्ष हिंदू धार्मिक अनुष्ठानों में पवित्र माने जाते हैं। अशोक, प्रेम और पवित्रता का प्रतीक है, जबकि आम न केवल फल के कारण प्रसिद्ध है बल्कि त्योहारों और रीति-रिवाजों में भी अहम भूमिका निभाता है। गुलमोहर, अमलतास, कदंब, और टेबेबुइया जैसे वृक्ष अपनी मनमोहक फूलों से शहर की सुंदरता बढ़ाते हैं। वसंत और गर्मियों में इन वृक्षों की खिली शाखाएँ कोलकाता की सड़कों और उद्यानों को जीवंत रंगों से भर देती हैं।

कुछ वृक्ष आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं। जैसे शिशम, सागौन और महोगनी जैसे वृक्ष उच्च गुणवत्ता वाली लकड़ी प्रदान करते हैं। वहीं जामुन और इमली जैसे फलदार वृक्ष पोषण और औषधीय मूल्य से युक्त हैं। कोलकाता के कई वृक्ष स्थानीय वन्यजीवों को सहारा देते हैं। *ब्यूटिया मोनोस्पर्मा* (ढाक, पलाश) और *बामबेक्स सीबा* जैसे वृक्ष परागणकर्ताओं को आकर्षित करते हैं, जबकि नीम और आम जैसे वृक्ष पक्षियों, गिलहरियों और कीटों को आश्रय प्रदान करते हैं। इस प्रकार वृक्ष केवल शहरी हरियाली का हिस्सा नहीं बल्कि शहरी पारिस्थितिकी तंत्र के स्तंभ हैं।

कोलकाता में हो रही तीव्र शहरीकरण, बढ़ती जनसंख्या और प्रदूषण ने शहर के पर्यावरणीय संतुलन पर गहरा असर डाला है। शहर की हरित संरचना और जैव विविधता आज असमान रूप से वितरित है—कुछ क्षेत्रों में हरियाली प्रचुर मात्रा में है, जबकि कई हिस्सों में वृक्षों और खुले स्थानों की कमी है। ऐसे में शहर की हरित संभावनाओं का मूल्यांकन और संरक्षण की रणनीति बनाना अत्यंत आवश्यक है। सर्वेक्षणों से स्पष्ट हुआ है कि कोलकाता में कुछ स्थल—जैसे रवींद्र सरोवर (190 वृक्ष प्रजातियाँ), विक्टोरिया मेमोरियल गार्डन (178 प्रजातियाँ) और टॉलीगंज क्लब गार्डन (165 प्रजातियाँ)—जैव विविधता से भरपूर हैं। इन स्थानों को अपेक्षाकृत बेहतर संरक्षण, सुव्यवस्थित बागवानी और बड़े खुले क्षेत्र उपलब्ध होने का लाभ मिला है। दूसरी ओर, कई पुराने मोहल्ले, भीड़भाड़ वाली गलियाँ और संकरी सड़कें हरे-भरे वृक्षों से वंचित हैं। इससे न केवल सौंदर्य प्रभावित होता है बल्कि वायु प्रदूषण और तापमान असंतुलन की समस्याएँ भी गहरी होती हैं।

कोलकाता एक ऐसा महानगर है जिसकी पहचान केवल उसके ऐतिहासिक भवनों, साहित्यिक योगदानों या सांस्कृतिक गतिविधियों से ही नहीं होती, बल्कि उसकी हरियाली और वनस्पति धरोहर से भी गहराई से जुड़ी हुई है। "कोलकाता के पौधे" शीर्षक दस्तावेज़ इस तथ्य को उजागर करता है कि किसी भी शहर का विकास केवल भौतिक संरचनाओं और आर्थिक गतिविधियों से नहीं आँका जा सकता, बल्कि उसकी जैव विविधता, वृक्षों और हरित स्थलों की उपस्थिति भी उतनी ही महत्वपूर्ण होती है। भविष्य की दृष्टि से यह आवश्यक है कि वृक्षारोपण को केवल सरकारी परियोजनाओं का हिस्सा न माना जाए, बल्कि इसे नागरिकों के सामूहिक कर्तव्य के रूप में देखा जाए। विद्यालयों और कॉलेजों में पर्यावरण शिक्षा, सामुदायिक स्तर पर वृक्षारोपण अभियान और तकनीकी उपाय जैसे रूफ गार्डन व वर्टिकल गार्डन इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हो सकते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि कोलकाता की पहचान उसके पौधों और हरित धरोहर से गहराई से जुड़ी हुई है। इतिहास, संस्कृति और औपनिवेशिक प्रभावों से निर्मित यह वनस्पति संसार शहर को विशिष्ट बनाता है। आने वाले वर्षों में यदि शहर योजनाबद्ध वृक्षारोपण, संरक्षण और नागरिक सहभागिता को अपनाता है, तो यह न केवल "सिटी ऑफ जॉय" बल्कि "ग्रीन सिटी ऑफ इंडिया" के रूप में भी जाना जाएगा।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 19-20 (2025)

मेघालय, भारत की तीन अल्प-ज्ञात खाद्य ऑर्किड प्रजातियाँ

यलातूर महेश, रिकेट्री लिटन, हरेकृष्णा स्वैन, रामलिंगम कोट्टईमुथु व एन. ऑडियो

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003, मेघालय

आर्किड सबसे अधिक विकसित और सफल पादप समूहों में से हैं, जिनके पुष्पों में ऐसी सूक्ष्मताएँ और विविधताएँ दिखाई पड़ती हैं जो अन्य किसी भी द्विपार्श्वीय समूह में नहीं मिलतीं। ये अत्यंत उन्नत पुष्पीय पौधे हैं और उनके फूल के आकार, आकृति तथा रंग में अविश्वसनीय विविधता दिखाई देती हैं। अंटार्कटिका को छोड़कर आर्किड पूरी दुनिया में पाए जाते हैं । प्राचीन समय से दूरस्थ क्षेत्रों में उन्हें भोजन के रूप में भी उपयोग किया जाता रहा है और उनके आकर्षक फूलों तथा औषधीय गुणों के कारण वे सदियों से मानव समुदाय के लिए महत्वपूर्ण रहे हैं। आर्किड पारिस्थितिकी संकेतक के रूप में भी कार्य करते हैं तथा इनका लुप्त होना किसी क्षेत्र की मिट्टी और वायु गुणवत्ता में परिवर्तन का संकेत देता है। "आर्किड" नाम ग्रीक शब्द orchis से निकला है, जिसका अर्थ "वृषण" है। आर्किडेसी जूसियो द्विबीजपत्री के सबसे बड़े कुलों में से एक है, जिसमें विश्व स्तर पर 28,000 प्रजातियाँ और 736 वंश शामिल हैं। इनमें से भारत में 155 वंशों के अंतर्गत 1,239 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। केवल मेघालय में ही अब तक 116 वंशों से संबंधित 476 आर्किड प्रजातियों का वर्णन किया गया है।

ऊँचाई, जलवायु और मृदा स्थितियों में व्यापक विविधता के कारण मेघालय में उष्णकटिबंधीय बहुवर्षीय, अर्ध- बहुवर्षीय, आर्द्र पर्णपाती, उपोष्णकटिबंधीय चौड़ी पत्ती वाले वन, चीड़ वन, बाँसवन और घासभूमि जैसी विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों की व्याप्ति है। इंडो-बर्मा जैव-विविधता हॉटस्पॉट का हिस्सा होने के कारण यह राज्य पुष्पीय वैभव से समृद्ध है। भारत की 18,000 उच्च पादप प्रजातियों में से 4,243 प्रजातियाँ इस राज्य से वर्णित हैं। राज्य में वनस्पति अन्वेषण पर्याप्त स्तर तक हुआ है, फिर भी इसके जंगली खाद्यों और उनके उपयोग का प्रलेखन बहुत ही सीमित रूप में हुआ है। सजावटी और औषधीय महत्वों के अतिरिक्त, कुछ आर्किडों के फूल, छद्म-कंद और कंद/गांठें भोजन के रूप में उपयोगी हैं। इस लेख में मेघालय की तीन जंगली खाद्य आर्किड प्रजातियों का वर्णन किया गया है।

हाल ही में जोवाई, पश्चिम जयंतिया हिल्स की फील्ड यात्रा के दौरान, लेखकों ने निम्नलिखित तीन आर्किड प्रजातियों (दो स्थलजीवी और एक उपजीवी) का संग्रह करके पाया कि खासी और जैन्तिया जैसे स्वदेशी जनजातियां इन प्रजातियों के कंद/गांठ, कूटकंद और फूलों का सेवन खाने के लिए करते हैं। अभी तक मेघालय के जंगली खाद्य पौधों से संबंधित साहित्य में इसके बारे में जानकारी उपलब्ध नहीं थी।

- **ऐन्थोगोनियम ग्रेसाइल** वालिच के बाद लिंडले : इसका स्थानीय नाम तियू सोलिखाह और सिंतु-देइन है। इसका पुष्पन एवं फलन जून–अगस्त माह में होता है। यह भारत के अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, सिक्किम, पश्चिम बंगाल में पाया जाता है। कूटकंद का लेप घाव और त्वचा जलन के लिए लगाया जाता है।

- **प्लियोनी प्राइकॉक्स** (स्मिथ) डी. डॉन: इसका स्थानीय नाम सोखाह तिमनेन (खासी; अर्थ: "बुज़ुर्ग महिला का चेहरा") है। इसका पुष्पन एवं फलन सितम्बर–अक्टूबर माह में होता है। यह भारत के अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, सिक्किम, उत्तराखंड, पश्चिम बंगाल में पाया जाता है। इसका कूटकंद खाने योग्य होता है। यह पानीदार सफेद होता है जिसका स्वाद दाँतों से चिपकने वाली गोंद जैसा होता है। कूटकंद के फूल भी खाने योग्य होते हैं, किंतु स्वाद में थोड़ा कड़वे होते हैं।

- **स्पेथोग्लॉटिस प्यूबीसेन्स** लिंडले: इसका स्थानीय नाम तियू सोखाह है। इसका पुष्पन एवं फलन जुलाई–दिसम्बर माह में होता है। यह भारत के अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड में पाया जाता है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 21-23 (2025)

साऐथिया जाइगेन्टिया: एक संकटग्रस्त प्रजाति, संरक्षणात्मक रणनीति एवं पुनर्वास का एक समग्र अध्ययन

एल. आर. मैती, विजय, सौरभ सचान, बी. बी. टी. थाम, एन. ऑडियो व एन. एन. राबा

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003

साऐथिया जाइगेन्टिया (वालिच के बाद हूकर) होल्टम साऐथिया कुल से संबंधित एक विशाल पर्णांग के साथ-साथ सबसे आकर्षक, सुंदर और दुर्लभ एवं लुप्तप्राय: स्थलीय पर्णांगों में से एक है। यह प्रजाति न केवल पारिस्थितिकीय रूप से महत्वपूर्ण है, बल्कि इसके बहुत से आर्थिक, खाद्य और औषधीय उपयोग भी हैं। इसकी व्याप्ति उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय एशिया के वन क्षेत्रों, विशेष रूप से भारत (उत्तर पूर्वी और दक्षिणी भारत), नेपाल, चीन, बर्मा, थाईलैंड, लाओस, वियतनाम, श्रीलंका और बांग्लादेश में है। भारत में यह मुख्यतः पूर्वी हिमालय और प्रायद्वीपीय पहाड़ी क्षेत्रों में पाया जाता है, जहां यह लगभग 1200 मीटर की ऊंचाई तक उगता है। पूर्वी हिमालय अपनी विविध जलवायु परिस्थितियों और ऊंचाई के कारण विभिन्न वनस्पतियों और जीवों के लिए उपयुक्त आवास प्रदान करता है। इसी क्षेत्र में *साऐथिया जाइगेन्टिया* भी विशेष रूप से छायादार और नम जंगलों में पाया जाता है। विशेषकर नदियों के किनारों पर इसकी वृद्धि अच्छी होती है। विश्वभर में साऐथिया वंश की लगभग 200 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से भारत में केवल तीन प्रजातियाँ ही विद्यमान हैं।

साऐथिया जाइगेन्टिया (वालिच के बाद हूकर) होल्टम एक अत्यंत महत्वपूर्ण पर्णांग है, जिसे इसकी विशिष्ट आकृति, व्यापक पारिस्थितिकीय भूमिका, पारंपरिक औषधीय उपयोगों और संभावित औषधीय गुणों के कारण विशेष महत्व प्राप्त है। हाल के वर्षों में इसकी जनसंख्या में आई गिरावट ने वन पारिस्थितिकी तंत्र पर गहरे और दूरगामी प्रभाव डाले हैं। साऐथिया पर्णांग की आबादी में लगातार गिरावट के पीछे प्रत्यक्ष कारणों के साथ साथ कई अप्रत्यक्ष कारक भी उत्तरदायी हैं, जो इसके प्राकृतिक आवास और पुनर्जनन क्षमता को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। बढ़ते वैश्विक तापमान, वर्षा के अनियमित पैटर्न और मौसमी अस्थिरता इस पर्णांग की जलापूर्ति और प्रजनन के लिए ख़तरा तो पैदा करतें ही हैं, इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन पर्णांग के उपयुक्त आवास क्षेत्रों में बदलाव लाकर उनकी आबादी पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। पर्णांग, विशेष रूप से साऐथिया प्रजातियाँ, सामान्यतः नम और छायादार स्थानों में पाई जाती हैं। परंतु अवैध कटाई की गतिविधियाँ अब ऐसे दुर्गम और जलस्रोतों के समीपवर्ती क्षेत्रों तक फैल गई हैं, जिससे इनका आवास धीरे-धीरे नष्ट और खंडित होता जा रहा है। इस विखंडन से न केवल उनकी संख्या में कमी होती है, बल्कि इससे पारिस्थितिकीय संतुलन भी प्रभावित होता है। व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए अत्यधिक दोहन जैसे आर्किड की खेती या हस्तशिल्प के लिए तनों का उपयोग भी अप्रत्यक्ष रूप से उनके गिरावट का कारण बन रहें है।

विशेष रूप से भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र साऐथिया पर्णांग का प्राकृतिक आवास है। यह क्षेत्र अपनी जैव-विविधता के लिए जाना जाता है, लेकिन साऐथिया प्रजातियों के लिए यहाँ की पारंपरिक कृषि प्रथा और झूम खेती गंभीर खतरा बन चुकी हैं। झूमिंग प्रक्रिया का अधिकांश भाग प्रायः सड़कों और गाँवों के समीपवर्ती इलाकों में अपनाई जाती है, क्योंकि ये क्षेत्र सबसे सुलभ होते हैं। कटाई और जलाकर साफ़ करने की प्रक्रिया में फसल के साथ साऐथिया पर्णांग जैसी वनस्पतियाँ भी नष्ट हो जाती हैं। चूँकि यह पर्णांग विशेष रूप से छायादार और नम स्थानों में उगता है, झूम खेती द्वारा आवास के इस स्वरूप का विनाश इसके प्राकृतिक पुनर्जनन चक्र को बाधित करता है। बड़े पैमाने पर वनों की कटाई के कारण, होने वाले जलवायु परिवर्तन से सर्दियों में नालों और छोटी नदियों का सूखना और बरसात के मौसम में बाढ़ आदि घटनाएँ नमीयुक्त साऐथिया प्रजाति के प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं, क्योंकि ये प्रजातियाँ मुख्यतः स्थिर, नम, छायादार और संरक्षित प्राकृतवासों में ही उगने की प्रवृत्ति रखती हैं।

वास्तव में, *साऐथिया जाइगेन्टिया* (वालिच के बाद हूकर) होल्टम की प्राकृतिक पुनरुत्पत्ति मुख्यतः इसके बीजाणुओं के माध्यम से होती है। इसके बीजाणु सामान्यतः फरवरी-माह में उपजाऊ हो जाते हैं। उस समय उत्तर-पूर्व भारत में वर्षा बहुत कम होती है जिससे वन भूमि में ह्यूमस और पर्याप्त नमी नहीं रहती है। ऐसी परिस्थितियों में बीजाणुओं के अंकुरण के लिए अनुकूलता नहीं होता है, जिससे बीजाणुओं के अंकुरण में भारी बाधा उत्पन्न होती है। इनके अलावा, वनों की अंधाधुंध कटाई वाले क्षेत्रों पर कई प्रकार के खरपतवारों जैसे *माइकेनिया*

माइक्रैंथा, यूपेटोरियम ओडोरेटम आदि खरपतवारो से न केवल पुनर्जनन में बाधा उत्पन्न होती है, बल्कि प्रजनन क्षमता भी प्रभावित होती है और ये कभी-कभी वयस्क पौधों को चारों ओर से ढककर और मोड़कर मार भी देते हैं।

वर्तमान में *साऐथिया जाइगेन्टिया* (वालिच के बाद हूकर) होल्टम की प्राकृतिक जनसंख्या में तीव्र गिरावट देखी जा रही है और कुछ पर्णांग प्रजातियाँ तो पहले ही विलुप्ति के कगार पर पहुँच चुकी हैं। इस स्थिति को देखते हुए, *साऐथिया जाइगेन्टिया* का तत्काल और समन्वित संरक्षण आवश्यक है। अत: इसे स्वस्थानिक और बहिर्स्थानिक दोनों स्तरों में संरक्षित किया जाना चाहिए। जिन क्षेत्रों में यह उगता है, उनका संरक्षण किया जाना चाहिए। ऊतक संवर्धन तकनीकों के माध्यम से इसका संरक्षण और प्रसार किया जाना भी अत्यंत आवश्यक हैं। *साऐथिया जाइगेन्टिया* (वालिच के बाद हूकर) होल्टम और अन्य सभी पर्णांगों का हमारे पर्यावरण और मानव जीवन में क्या महत्व है, इसके बारे में जागरूकता फैलाई जानी चाहिए।

लगभग एक दशक पूर्व, जॉयपुर (जिला : शिवसागर, असम) तथा सुमेर (री-भोई जिला, मेघालय) से *साऐथिया जाइगेन्टिया* (वालिच के बाद हूकर) होल्टम के कुल 10 स्वस्थ पौधों का संग्रह किया गया था। इन पौधों को भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग (मेघालय) के प्रायोगिक वानस्पतिक उद्यान, उमियम बरापानी में बहिर्स्थानिक संरक्षण के उद्देश्य से लगाया गया। इन पर्णांगों को उद्यान के जंगल में सावधानीपूर्वक रोपित किया गया, जहाँ उन्हें अनुकूल छाया, नमी और जैविक देखरेख प्रदान की गई। संरक्षण प्रयासों की सफलता इस बात से प्रमाणित होती है कि, ये 10 पौधे स्वस्थ रूप से विकसित हुए हैं और उनके माध्यम से कई अन्य पौधे सफलतापूर्वक प्रवर्धित किए गए हैं। वर्तमान में, उद्यान में *साऐथिया जाइगेन्टिया* के 100 से अधिक पौधे सक्रिय रूप से बढ़ रहे हैं। ये पौधे न केवल उद्यान क्षेत्र तक ही सीमित हैं, बल्कि आस-पास के जंगलों और समीपवर्ती नदी तटों पर भी प्राकृतिक रूप से विकसित हो रहे हैं।

पर्णांग मिट्टी से रासायनिक प्रदूषकों को हटाने में सक्षम हैं और मिट्टी से आर्सेनिक जैसी भारी धातुओं को हटाकर दूषित मिट्टी को भी ठीक कर सकते हैं। इन्हें भोजन या सजावटी पौधे के रूप में भी उगाया जाता है। इनका उपयोग कई प्राकृतिक चिकित्सा प्रयोजनों के लिए भी किया जाता है। *साऐथिया जाइगेन्टिया* (वालिच के बाद हूकर) होल्टम का मुख्य तना आर्किड उगाने के लिए सबसे उपयुक्त आधार माना जाता है। *साऐथिया जाइगेन्टिया* का उपयोग उद्यानों और लैंडस्केप डिज़ाइन में एक आकर्षक सजावटी पौधे के रूप में किया जा सकता है। इसके अलावा पूर्वोत्तर भारत में इसकी तरुण टहनियों और गुदे का उपयोग भोजन के रूप में किया जाता है। इसमें सूजन-रोधी और मधुमेह-रोधी औषधीय गुण होते हैं।

प्रारम्भ में पर्णांग मुख्यतः सजावटी गुणों के लिए जाने जाते थे। किंतु हाल के वर्षों में इनकी औषधीय, पारिस्थितिक और आर्थिक उपयोगिता के प्रति जन-सचेतना में वृद्धि हुई है। एक दुर्लभ, संकटग्रस्त, आर्थिक रूप से लाभदायक और औषधीय पौधा होने के कारण *साऐथिया जाइगेन्टिया* का व्यापक रूप से दोहन आरंभ हो गया है। इसकी घटती आबादी न केवल जैव विविधता को प्रभावित करती है, बल्कि यह जंगलों के जल-संतुलन, मृदा संरक्षण और साथ ही पारंपरिक चिकित्सा ज्ञान को भी खतरे में डालती है। हालाँकि भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पर्णांगों की अंधाधुंध कटाई पर प्रतिबंध लगाने हेतु आदेश और दिशानिर्देश जारी किए गए हैं जिससे इनके प्राकृतिक आवासों की स्थिति में आंशिक सुधार की आशा उत्पन्न हुई थी, परंतु बढ़ती जनसंख्या के दबाव और अन्य विवेकरहित विकासात्मक गतिविधियां, इन सकारात्मक प्रयासों को निरंतर अप्रभावी बना रहे हैं। इसलिए न केवल प्रजातियों के विशिष्ट आवासों को संरक्षित क्षेत्र घोषित करके उचित स्वस्थानिक संरक्षण सुनिश्चित करना आवश्यक है, बल्कि स्थानीय समुदायों की भागीदारी को भी संरक्षण रणनीति में सम्मिलित करना भी नितांत आवश्यक है।

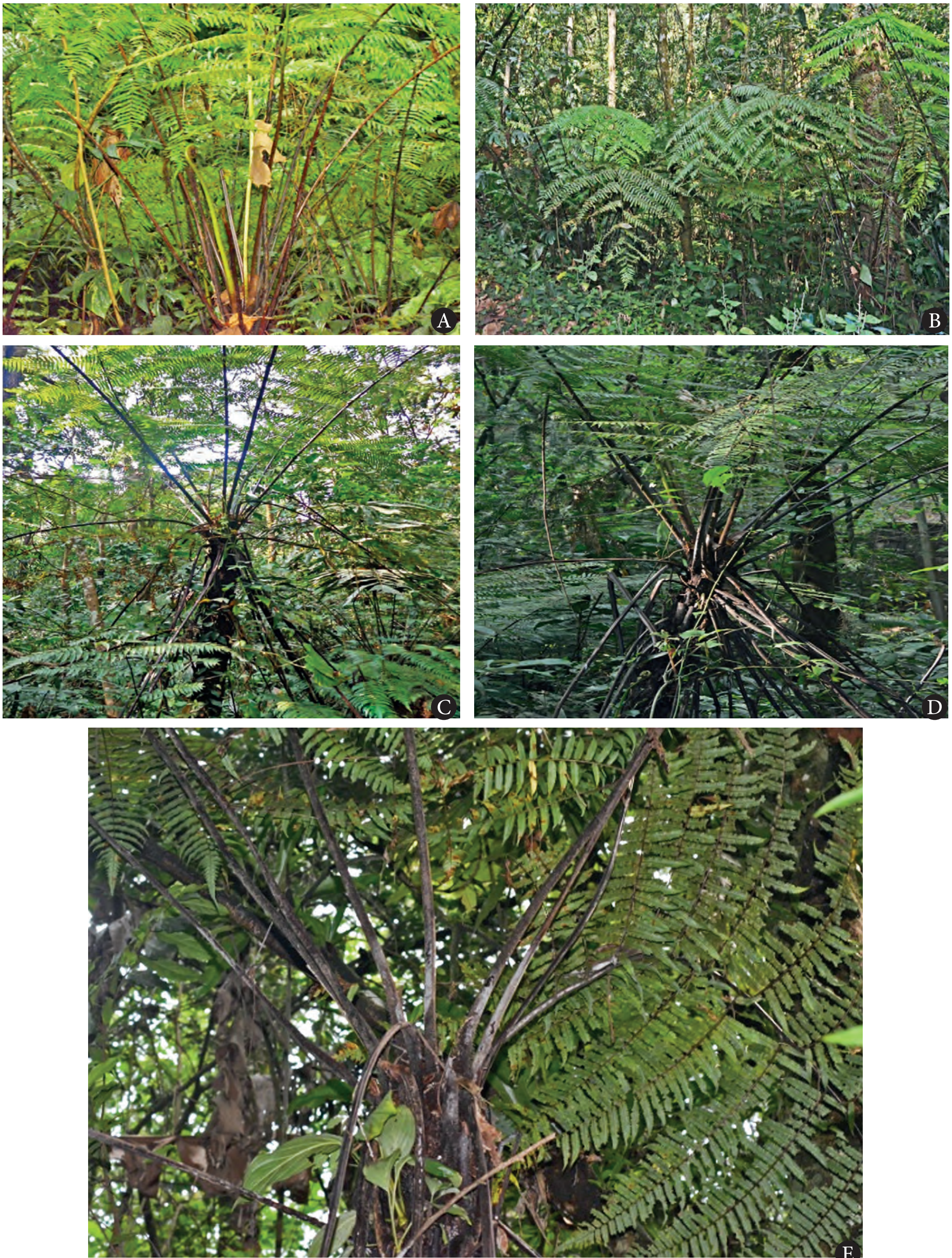

चित्र: *साऐथिया जाइगेन्टिया* (वालिच के बाद हूकर) होल्टम : A-आवास B-पत्ती C एवं D- तना E-पत्ती व तना

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 24-25 (2025)

हिल्डेगार्डिया पोप्यूलिफ़ोलिया: अति संकटापन्न बहुउद्देशीय वृक्ष प्रजाति

गिरिराज सिंह पंवार व संदीप कुमार चौहान

भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा, उत्तर प्रदेश

हिल्डेगार्डिया वंश स्टरक्यूलिएसी कुल (कोको कुल) से संबंधित है। विश्व भर में इस वंश की 12 प्रजातियाँ हैं जो उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती एवं आर्द्र वनों में प्रमुखता से वितरित हैं। हिल्डेगार्डिया वंश दक्षिणी भारत, पश्चिमी अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका, मेडागास्कर, फिलीपींस, इंडोनेशिया, उत्तरी ऑस्ट्रेलिया और क्यूबा के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में वितरित है। इस वंश की पहचान इसके फूलों से होती है जिसमें पंखुड़ियाँ और अभिबाह्यदलपुंज नहीं होते, एंड्रोगाइनोफोर की उपस्थिति होती है और स्टरक्यूलिएसी के अन्य वंशों से अलग, इसके फल पतले कागज़ जैसे हैं। हिल्डेगार्डिया की सभी प्रजातियाँ अपने असतत दोहन, आवास की कमी और छोटी-छोटी आबादियों में विखंडन के कारण अलग-अलग संकटग्रस्त श्रेणियों में शामिल की गई हैं। इनकी संख्या अंतःप्रजनन अवसाद, उच्च मृत्यु दर और पर्यावरणीय अस्थिरता के कारण जोखिम में है और परिणामस्वरूप प्रजातियों के विलुप्त होने की संभावना है। इनकी वर्तमान संख्या गंभीर दोहन के दबाव में है और समय रहते प्रभावी संरक्षण के उपाय तुरंत ना किए गए तो यह विलुप्तता की ओर तेजी से अग्रसर होती चली जाएगी।

भारत में, इस वंश का प्रतिनिधित्व एक ही प्रजाति *हिल्डेगार्डिया पोप्यूलिफ़ोलिया* करती है, जो एक पर्णपाती वृक्ष प्रजाति है और स्टरक्यूलिएसी कुल का सदस्य है। इसे स्थानीय रूप से तमिल में मलाइपुवरसु और तेलुगु में गलीबुडा, डेलिबुडा, पिचिपोलिकी, बुड्डापोलिकी के नाम से जाना जाता है। यह पूर्वी घाट में चट्टानी इलाकों में खासकर आंध्र प्रदेश (अनंतपुर, कडप्पा और चित्तूर जिले), तमिलनाडु (सेलम हिल्स) और कर्नाटक (आंध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले की सीमा से लगे इलाकों) में पाया जाता है । पहले इस प्रजाति को प्रायद्वीपीय भारत की स्थानिक प्रजाति माना जाता था, लेकिन बाद में *स्टरक्यूलिया पोप्यूलिफ़ोलिया* रॉक्सबर्ग के बाद वालिच प्रजाति को अवैध पाए जाने के पश्चात इसे *एच. पोप्यूलिफ़ोलिया* का पर्याय बना दिया गया। परिणामस्वरूप इसकी वितरण सीमा इंडोनेशिया तक फैल गई । *हिल्डेगार्डिया पोप्यूलिफ़ोलिया* एक उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वृक्ष है जो 15-20 मीटर तक बढ़ता है, शाखाएँ कोणीय एवं मस्सेदार; छाल चिकनी और हल्के हरे रंग की होती है जो इसकी विशिष्टता है। इसके आर्थिक और पारम्परिक महत्व हैं। पत्तियों और तने की छाल का उपयोग मलेरिया और कुत्ते के काटने के उपचार के लिए किया जाता है। पत्ती और छाल के अर्क में कैंसररोधी, मधुमेहरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, मलेरियारोधी, सूजनरोधी, रोगाणुरोधी आदि जैसे पुनर्योजी गुण पाए जाते हैं। इसके तने की छाल से प्राप्त फाइबर का उपयोग रस्सी बनाने में, सिंथेटिक फाइबर के विकल्प के रूप में, तथा हरित कंपोजिट को मजबूती प्रदान करने में उपयोग किया जाता है क्योंकि यह पूर्ण रूप से जैव अपघटनीय होता है तथा स्थानीय लोगों द्वारा रस्सी और टोकरियाँ बनाने में इसका उपयोग किया जाता है।

एच. पोप्यूलिफ़ोलिया प्राकृतिक बाधाओं और मानवजनित दबाव के कारण विलुप्त होने के जोखिम का सामना कर रही है। शोध पत्रों से पता चला है कि मुख्य रूप से मानवजनित हस्तक्षेप, आवासक्षरण, आंतरिक और बाहरी कारकों के कारण प्रजातियों का पुनर्जनन और बीजों की जीवितता कम हुई है। मिट्टी में नाइट्रोजन, पोटेशियम और फॉस्फोरस की कमी आदि जैसे बाहरी कारक भी बीज के अंकुरण में देरी करते हैं। बीजपत्र और भ्रूण का कवक द्वारा संक्रमण भी बीज की जीवितता और प्रजाति के प्राकृतिक पुनर्जनन को प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त *एच. पोप्यूलिफ़ोलिया* के बीज प्रकृति में विषमयुग्मी हैं और शुद्ध प्रजनन के लिए उपयोग करना असंभव है। इन सीमाओं के कारण, *एच. पोप्यूलिफ़ोलिया* के इन विट्रो बीज अंकुरण को प्रजातियों के गुणन के लिए एक प्रभावी साधन माना गया, लेकिन इन-विट्रो तकनीकी के तहत बीज अंकुरण दर (0.42%) और अंकुर वृद्धि बहुत कम पाई गई। इस प्रजाति पर ऊतक प्रवर्धन के विभिन्न शोध कार्यों में अलग अलग एक्सप्लांट का उपयोग करके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ऑर्गेनोजेनेसिस के माध्यम से प्रजाति का सफलतापूर्वक प्रसार किया गया है।

प्रकृति में इस प्रजाति की गंभीर रूप से लुप्तप्राय: स्थिति और घटती जनसंख्या के आकार को देखते हुए, भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा, उत्तर प्रदेश ने बहिस्थिनिक संरक्षण के तहत इसे संरक्षित करने का प्रयास किया। वर्ष 2011 में उद्यान के संकटग्रस्त और स्थानिक खंड में प्रजाति के 21 पौधे रोपित किए गए और ये पौधे इस खंड में सफलतापूर्वक उग रहे हैं। भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा में आज तक इस प्रजाति के वृक्षों पर फूल तो खिले हैं, किन्तु फल/ बीजों के साथ नहीं देखा गया है। संरक्षित वृक्षों में फलों/बीजों के ना बनने का कारण प्रजाति के निवास स्थान में बदलाव और वांछित परागणकर्ता की कमी हो सकता है। *हिल्डेगार्डिया पोप्यूलिफ़ोलिया* एक गंभीर

रूप से संकटग्रस्त प्रजाति है और इसके जर्मप्लाज्म के सफल रूप से संरक्षण और परिरक्षण के लिए प्रभावी बहिर्स्थानिक और स्वस्थानिक उपायों को तत्काल प्रभाव से लागू करने की आवश्यकता है। इस प्रजाति को प्रजाति-विशिष्ट पुनर्प्राप्ति कार्यक्रम के तहत बहिर्स्थानिक गुणन करके प्रजाति को प्राकृतिक आवास में रोपित करके इसके स्वस्थानिक संरक्षण पर कार्य करने की आवश्यकता है। भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा में इस प्रजाति का सफल बहिर्स्थानिक संरक्षण एक अग्रणी प्रयास है और देश के अन्य भागों में विशेष रूप से प्रायद्वीपीय भारत में इस तरह के प्रयास शुरू किए जाने की आवश्यकता है।

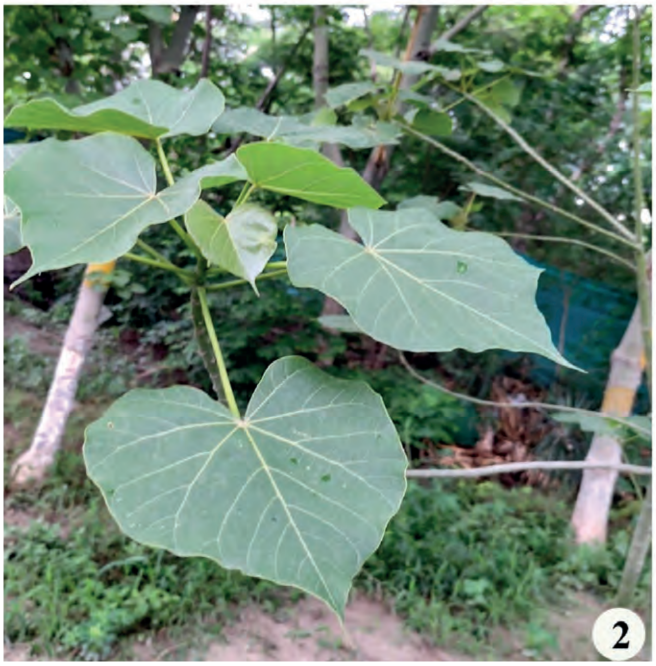

चित्र : *हिल्डेगार्डिया पोप्यूलिफ़ोलिया* : 1. भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान में प्रजाति के संरक्षित वृक्ष, 2. सात तंत्रिका युक्त पत्तियों की संरचना, 3. प्रजाति का पुष्प।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 26-27 (2025)

इलेक्स खासियाना: वितरण, लोक वानस्पतिक महत्व और संरक्षण

विजय, रिकेरत्रे लिटन, डेविड लालसामा बियते, छाया देओरी

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा-711103

इलेक्स खासियाना (ऐक्विफोलिएसी) भारत में मेघालय राज्य की खासी पहाड़ियों और मिजोरम के आइजोल में पाई जाने वाली एक स्थानिक प्रजाति है। यह एक दुर्लभ और अति लुप्तप्राय: प्रजाति है। पूर्ववर्ती क्षेत्रीय सर्वेक्षणों, पादपालयों में उपलब्ध अभिलेखों तथा प्रकाशित साहित्यों से यह स्पष्ट होता है कि यह प्रजाति मिज़ो एवं खासी पहाड़ियों के आस-पास के क्षेत्रों तक ही सीमित है । हाल ही में लुआंगमुअल, आइजोल, मिजोरम में इस प्रजाति का एक पृथक वितरण भी दर्ज किया गया है। इसे राव और हरिदासन (1983) ने एक दुर्लभ प्रजाति के रूप में वर्गीकृत किया गया है। *इलेक्स* वंश में दर्ज 410 स्वीकृत प्रजातियों में से इसे आईयूसीएन मानदंडों के आधार पर अति संकटग्रस्त प्रजातियों में शामिल किया गया है।

इलेक्स खासियाना आमतौर पर समुद्र तल से 1990 मीटर ऊंचाई तक आर्द्र उपोष्णकटिबंधीय वन में पाया जाने वाला लगभग 15-20 मीटर ऊंची, देर से पकने वाली एक बहुवर्षीय वृक्ष है। यह अप्रैल-मई के महीनों के दौरान पुष्पक्रम की शुरुआत करता हैं तथा नवंबर-दिसंबर के दौरान फल देता हैं। समुद्र तल से अधिक ऊँचाई इसके संभावित आवासों के वितरण को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। तेजी से बदलती जलवायु, आवास विखंडन, विदेशी प्रजातियों और रोगजनकों के आक्रमण, प्रदूषण, अति-दोहन और बढ़ती मानव आबादी इस प्रजाति के पतन के सबसे महत्वपूर्ण कारक सिद्ध हुए हैं ।

इसका उपयोग इसके वेदनानाशक, दस्त-नाशक, ज्वरनाशक, संकुचक, रक्तस्राव रोकने वाले और यकृत-संरक्षक गुणों के कारण एक नैदानिक कारक के रूप में किया जाता है। खासी और मिजो जनजाति के लोगों द्वारा, इसकी पत्तियों का उपयोग सभी प्रकार के संक्रमणों को रोकने के लिए रामबाण के रूप में किया जाता है। इस पौधे के अर्क का उपयोग विभिन्न सांद्रता पर फिताकृमि के उपचार के लिए किया जाता था। मेघालय की खासी जनजाति के लोगों में, *इलेक्स* की छाल और जड़ के काढ़े का उपयोग तपेदिक और गंभीर ठंड के उपचार में किया जाता है। इसकी पत्तियों को विभिन्न औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है, जिसमें मिजो पारंपरिक चिकित्सा में परजीवी रोधी गुण भी शामिल हैं। वास्तव में, मिजो पारंपरिक चिकित्सक उन्हें सभी प्रकार की गैर-विशिष्ट बीमारियों में भी रामबाण के रूप में उपयोग करते हैं। चीन में *इलेक्स* वंश की प्रजातियां पारंपरिक चीनी चिकित्सा में परिचित होने के कारण पवित्र मानी जाती है।

गंभीर रूप से संकटग्रस्त *इलेक्स खासियाना* प्रजाति के संरक्षण के लिए एक समग्र और बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें आवास संरक्षण, इनविट्रो प्रवर्धन और आवास वितरण मॉडलिंग जैसे उपाय भी सम्मिलित हैं। ये विधियाँ न केवल इस दुर्लभ प्रजाति के अस्तित्व को सुनिश्चित करने में सहायक हैं, बल्कि इसके विशिष्ट पारिस्थितिकीय और औषधीय गुणों को भी संरक्षित करने के लिए अनिवार्य हैं। संकटग्रस्त प्रजातियों के नष्ट हो चुके आवासों एवं पारिस्थितिकी तंत्रों की बहाली में पारिस्थितिकीय इंजीनियरिंग की तकनीकों ने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। विशेष रूप से स्थलीय पारिस्थितिक तंत्रों में इन प्रजातियों की पुनःस्थापना और पुनर्वास के लिए उनके संभावित आवासों के वितरण की सटीक जानकारी अत्यंत आवश्यक होती है। इस परिप्रेक्ष्य में, *प्रजाति पुनरुत्पादन, आवास वितरण मॉडलिंग* और पारिस्थितिकीय इंजीनियरिंग का सम्मिलित प्रयोग, *इलेक्स खासियाना* के प्रभावी संरक्षण के लिए एक सशक्त और टिकाऊ रणनीति सिद्ध हो सकता है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग के ऊतक संवर्धन तथा प्रायोगिक वनस्पति उद्यान, बरापानी (री-भोई जिला) ने *बहिस्थानिक* संरक्षण के माध्यम से इस प्रजाति की संख्या बढ़ाने और उसकी पुनः प्रस्तुति में अत्याधिक सफलता प्राप्त की है। संकटग्रस्त *इलेक्स खासियाना* की प्रजाति के लिए प्राथमिक खतरों जैसे आवास विनाश, जलवायु परिवर्तन, आक्रामक प्रजातियां और अति-दोहन का विश्लेषण तथा साहित्य समीक्षा अत्यंत आवश्यक है। पौधारोपण करने से इसके संरक्षण और वितरण में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है।

चित्र : *इलेक्स खासियाना* : A: पौधे के आवास के साथ चित्र B: पुष्पक्रम C: फल D: पौधे का सैपलिंग E: पौधे का सीडलिंग

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 28-31 (2025)

लद्दाख के लेह में पाई जाने वाली कुछ महत्वपूर्ण उपयोगी भारतीय औषधीय पौधों की प्रजातियाँ

कुलदीप एस.डोगरा, कुमार अम्बरीश, ब्रजेश मीना, रितेश के. सिंह, युद्धवीर व संजीव कुमार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उच्च पश्चिमी हिमालय क्षेत्रीय केंद्र, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

लद्दाख का शीत मरुस्थल भारत के उत्तरी भाग में तिब्बत की सीमा से सटे हुए हिमालय क्षेत्र में स्थित है। साथ ही यह पारहिमालय जैव क्षेत्र में आता है। लद्दाख अपने अनोखे भूविज्ञान, विशिष्ट जलवायु और विशिष्ट वनस्पतियों के लिए जाना जाता है। ऊँची पर्वत श्रृंखलाएँ, बंजर भूमि का विशाल विस्तार और गहरी नदी घाटियों जैसे सिंधु, नुबरा, सुरु और ज़ांस्कर इसकी विशेषताएं हैं। भारतीय पारहिमालय के अन्य भागों की तुलना में घाटियाँ बहुत अधिक ऊंचाई और स्थलाकृतिक भिन्नता प्रदर्शित करती हैं। लद्दाख की नदी घाटियों में विविध वनस्पतियाँ हैं, जबकि इसके विपरीत, पहाड़ी क्षेत्रों में केवल कुशन पौधें है जो कम उगते हैं। एल्पाइन क्षेत्रों में टर्फ घास और बौनी झाड़ियों जैसी विशिष्ट वनस्पतियाँ हैं। लद्दाख हिमालय दुनिया की सबसे ऊँची पर्वत श्रृंखला है और यह औषधीय पौधों की विभिन्न प्रजातियों के आवास क्षेत्र के रूप में जाना जाता है। ऊंचाई की सीमाओं का विस्तृत क्षेत्र और उष्णकटिबंधीय से लेकर समशीतोष्ण वातावरण तक की विविध जलवायु परिस्थितियाँ वनस्पति विविधता के लिए अनुकुल हैं। यह क्षेत्र ऊंचाई, तापमान, बर्फबारी, वर्षा और मिट्टी में भिन्नता के कारण वनस्पति विविधता की विस्तृत श्रृंखला से समृद्ध है। इस क्षेत्र में वनस्पति अक्सर समशीतोष्ण, एल्पाइन और रेगिस्तानी प्रकार से मिश्रित होती है। यह क्षेत्र अनेक स्थानिक पौधों की प्रजातियों का आवास है जिसमें *रीअम वेबियानम* रॉयल (हिंद रेवंदचीनी, अम्लपर्णि, रेवतचीनी); *डैक्टाइलोराइजा हेटेगीरिया* (डी. डॉन) सू (सलेम पंजा); *इनुला रॉयलियाना* डीसी (पुष्कर, पुष्करमूल); *ऐकोनिटम वायोलेसियम* जैक्वेमोंट के बाद स्टापफ (दूधिया विष, मीठा तेलिया, मधु बिख, बिख); *ऐकोनिटम हेटरोफिलम* वालिच के बाद रॉयल (अतिविष); *एंजेलिका ग्लौका* एजवर्थ (चोरा, चोरु) आदि प्रमुख हैं।

लद्दाख के लेह जिले में विभिन्न बीमारियों के इलाज के लिए औषधीय पौधों का पारंपरिक उपयोग आदि काल से किया जा रहा है। अभी तक इस जिले में औषधीय पौधों के उपयोग का प्रलेखन करने के लिए कई अध्ययन किए गए हैं, लेकिन विशाल सांस्कृतिक, धार्मिक और जनजातीय विविधता के कारण इनके उपयोगों का सही-सही निर्धारण अभी भी बाकी है। इन पौधों के बारे में पता लगाने के लिए सितंबर 2024 में एक सर्वेक्षण किया गया। इस सर्वेक्षण के दौरान नुबरा घाटी, खारदुंगला, नीमा, पांग, त्सोकर और त्सोमिरारी सहित लेह जिले के विभिन्न क्षेत्रों से कुछ दिलचस्प औषधीय पौधों का संग्रह किया गया। लगभग 85 प्रजातियों के कुल संगृहीत 416 पौधों के प्ररूपों में से 14 महत्वपूर्ण औषधीय पौधों की जानकारी यहां दी गई है।

1. ***आर्कटियम लेप्पा*** (खुरया): इसका स्थानीय नाम जीसुंगव बायिबज़्युंग है। इसका उपयोग पेट दर्द, मूत्राशय के सिस्ट, तंत्रिका विकार, गुर्दे के विकार, गुर्दे की पथरी, छाले, अल्सर मूत्रवर्धक, गर्भाशय ट्यूमर, कैंसर के उपचार में किया जाता है।

2. ***बेरबेरिस अलसिना***: इसका स्थानीय नाम खिजर, किरारिंग, दामा है। इसका उपयोग गठिया, खांसी, बुखार, टॉनिक, दस्त, आंतों के अल्सर, दाद, आँखों की समस्या, बवासीर आदि के उपचार में किया जाता है। इसके कच्चे फल का भी सेवन किया जाता है।

3. ***क्लीमैटिस लद्दाखियाना***: इसका स्थानीय नाम एमोंग है। इसका उपयोग बुखार, त्वचा रोग, पेट दर्द, गैस्ट्रिक परेशानी, पेचिश और अपच के उपचार में किया जाता है।

4. ***डेल्फिनियम ब्रूनोनियम***: इसका स्थानीय नाम मुश्क है। इसका उपयोग रक्त को ठंडा करने, बालों के उपचार, यकृत रोग, खुजली, सूजन को कम करने, विषहरण, पेट दर्द, घाव, निमोनिया, सिरदर्द के उपचार में किया जाता है।

5. ***इकाइनॉप्स कॉर्निजेरस*** (कंटेला): इसका स्थानीय नाम अक्जेम व सबंगचर है। यह एक बारहमासी जड़ी बूटी है जिसका उपयोग मूत्र संबंधी समस्याओं, गुर्दे की पथरी, बुखार, खांसी, खाद्य विषाक्तता, शिशुओं में दांतों के निकलने के दौरान उत्पन्न समस्याओं के उपचार व टॉनिक के रूप में किया जाता है।

6. ***ह्यूमुलस लुपुलस***: इसका स्थानीय नाम हॉप है। इसका उपयोग टॉनिक, सूजनरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, रोगाणुरोधी, मूत्रवर्धक, पाचन और शामक के रूप में किया जाता है।

7. ***हिप्पोफी रैम्नाइडीज***: इसका स्थानीय नाम चक-लडम, चेरमा व सस्तालुलू है। इसका उपयोग पेय पदार्थ, लिकर, जैम, मल्टी-विटामिन हर्बल ड्रिंक, सूजनरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, जीवाणुरोधी, फैटी लीवर, हृदय रोग और ट्यूमर रोधी के रूप में किया जाता है। पशुओं के चारे और कृषि क्षेत्रों के घेराव के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है। यह कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, अमीनो एसिड, विटामिन और कई कार्बनिक अम्लों से भरपूर है।

8. ***हाइओसायमस नाइजर*** (खुरासानी अजवाइन): इसका स्थानीय नाम ग्या-लैटैंग है। इसका उपयोग अनिद्रा, पेट दर्द, खांसी, अस्थमा, ब्रोंकाइटिस, मधुमेह, तंत्रिका रोग आदि के उपचार में किया जाता है।

9. ***लाइसियम रूथेनिकम***: इसका स्थानीय नाम उमिला है। इसमें एंटीऑक्सीडेंट, सूजनरोधी, विकिरणरोधी, प्रतिरक्षा बढ़ाने वाले गुण होते हैं। इसका उपयोग हृदय रोग, असामान्य मासिक धर्म, मूत्रमार्ग की पथरी, टिनिया, फुरुनकल, उच्च रक्तचाप और रजोनिवृत्ति के उपचार के लिए किया जाता है।

10. ***पेडिक्यूलेरिस लॉन्गिफ्लोरा***: इसका स्थानीय नाम शाकुचुमा और लुगुरुक्सेर्पो है। इसके पत्तियों और तनों का उपयोग मूत्रवर्धक, चक्कर आना, सूखी जीभ, यकृत, पित्ताशय की समस्याएँ, गुर्दे की बीमारियाँ, अत्यधिक वीर्य स्राव के उपचार में किया जाता है।

11. ***पेगैनम हरमाला***: इसका स्थानीय नाम सेपन है। इसे बुखार, पेट की शिकायतों, मूत्राशय की जलन, दर्दनाक पेशाब, नेत्र विकार, खसरा, अस्थमा और मासिक धर्म संबंधी विकार के उपचार में उपयोग किया जाता है।

12. ***रीअम स्पाइसीफॉर्म***: इसका स्थानीय नाम लच्छू है। इसके तनों और जड़ों का उपयोग सूजन वाले घावों, गठिया, बुखार, आंतरिक क्षति, क्रोनिक ब्रोंकाइटिस और बवासीर के इलाज के लिए किया जाता है। इसके पत्तियों को सब्जी के रूप में पकाया जाता है।

13. ***टैरैक्सेकम ऑफ़िसिनेल*** (टुकी फूल, दुधे झार, कर्णफुलि, फुली झार, टुक्नु): इसका स्थानीय नाम हान है। इसके पौधे का उपयोग गुर्दे की बीमारी, सूजन, त्वचा की समस्याओं, हार्ट बर्न, आंखों की सूजन, हड्डियों के फ्रैक्चर, उच्च रक्तचाप और जठरांत्र संबंधी शिकायतों के इलाज के लिए किया जाता है।

14. ***वर्बेस्कम थेप्सस*** (बन तम्बाकू, गीदड़ तमाकू, ककड़ी तमाखू): इसका स्थानीय नाम नगोसर्जी व दंडशाल है। इसकी पत्तियां, बीज और फल का उपयोग संक्रमण, रक्त विकार, रक्तस्राव, घाव और कट, अस्थमा, सीने में दर्द और ऊपरी श्वसन पथ की परेशानी के इलाज के लिए किए जाते हैं।

टैरैक्सेकम ऑफ़िसिनेल

रीअम स्पाइसीफॉर्म

पेगैनम हरमाला

पेडिक्यूलेरिस लॉन्गिफ्लोरा

लाइसियम रूथेनिकम

हाइओसायमस नाइजर

डेल्फिनियम ब्रूनोनियम

इकाइनॉप्स कॉर्निजेरस

क्लीमैटिस लद्दाखियाना

बेरबेरिस अलसिना

वर्बेस्कम थेप्सस

← *हिप्पोफी रैम्नाइडीज*

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 32-33 (2025)

आओ बनाएं आर्किड कीकी

सौरभ सचान, एल. आर. मैती, विजय, डेविड एल. बियाते व एन. ऑडियो

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग

आर्किड कीकी का अर्थ है "बेबी आर्किड प्लांट" या छोटी नवजात पौध जो कि कुछ आर्किड प्रजातियों जैसे डेंड्रोबियम, फैलेनोप्सिस, इरिया, बल्बोफिलम, क्लिस्टोस्टोमा, आदि के डंठलों से बहुत ही आसानी से तैयार किए जा सकते हैं। ऐसे ही एक मौलिक अनूठे प्रयास में, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, वनस्पति उद्यान, बड़ापानी, उमियम द्वारा सक्रिय भूमिका निभाई जा रही है। यहां की सक्रिय टीम एवं वरिष्ठ वैज्ञानिकों के उचित कीकी बनाने की प्रक्रिया के मुख्य चरण इस प्रकार है:

1. स्वस्थ पौधे का चयन : आप सर्वप्रथम स्वस्थ आर्किड के पौधे का चुनाव करें जिसमें कम से कम 10-15 छोटे पत्ते, 3-4 बड़े पत्ते, एक मजबूत तना व जड़ें अवश्य ही होता है।

2. पुष्पन के बाद इंतजार करें : जब आर्किड के फूल झड़ जाएं तो स्पाइक (मुख्य तने) को तुरंत काटे क्योंकि यहीं से नई (कीकी) को विकसित किया जाता है। फूल झड़ जाने के बाद स्पाइक को भली प्रकार से रुई में नीम का तेल लेकर साफ कर लें, नीम के तेल के प्रयोग से स्पाइक पर फफूंदी, छोटे कीड़े-मकोड़ों का संक्रमण समाप्त हो जाता है और एक स्वस्थ कीकी विकसित होती है।

3. हार्मोंस का प्रयोग : बाज़ार में उपलब्ध कीकी हार्मोन (आई. बी. ए.) को लेकर उसे 1 लीटर पानी में 5 ग्राम घोल बनाकर स्पाइक पर एक हफ्ते में दो बार छिडकाव करें अथवा स्पाइक की गांठों में नारियल पानी का हफ्ते में दो बार छिडकाव करें। इससे स्पाइक में शीघ्र ही प्रसुप्त कलिकाएं जागृत होकर नई जड़ें विकसित होने लगती है।

4. उचित नमी व तापमान बनाएं रखें : आर्किड कीकी विकसित करने के लिए 60-70% वातावरणीय आद्रता (नमी) और 22°–28° सेल्सियस तापमान सर्वोतम माना जाता है।

5. उचित व नियमित देखभाल : 3-8 हफ़्तों की समयावधि के पश्चात मुख्य तना से अनेकों कीकी का अंकुरण स्पष्ट दिखाई देने लगता है। धीरे-धीरे इनमे पत्तियां और जड़ें विकसित होने लगती हैं।

6. कीकी वृद्धि एवं विकास : लगभग तीन से आठ हफ़्तों के भीतर ही मुख्य तनें से नवीन पत्तियां और जड़ें विकसित होने लगती है परन्तु लाल चीटियों, शलभ, घोंघों, कवकों आदि बाह्य खतरों से कीकी को बचाने के लिए उस पर समय-समय पर 10 मिलीग्राम नीम के तेल को एक लीटर पानी में घोल कर उसका छिडकाव करते रहते हैं।

7. विकसित कीकी अलग करें और नया पौधा लगाएँ : जब कीकी में 3-4 पत्तियां और 2-3 इंच लम्बी जड़ें दिखाई देने लगें तो उसे काटकर अलग करके नए गमले में पोटिंग मिश्रण डालकर बड़े वृक्षों के तनों या दीवारों की दराजों में स्थापित कर दें। दराजों में स्थापित करते समय कीकी की जड़ों में मास युक्त नम मिट्टी बांध कर ही उसे स्थापित करें। कुछ समय पश्चात यह कीकी मनमोहक़ रूप से विकसित पौधे में रूपान्तरित होकर पुष्पित होने लगेगी।

चित्र: ई.बी.जी. बारापानी में कीकी का निर्माण एवं स्थापन।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 34-38 (2025)

भारत की कुछ सुगंधित जड़ीबूटियां

स्नेहा गांधी

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, दक्कन क्षेत्रीय केंद्र, हैदराबाद

आइए एक सुगंधित यात्रा पर निकलते हैं, जो भारत के कुछ बहुमूल्य सुगंधित जड़ी बूटियों के अन्वेषण से शुरू होगी और इन जड़ी-बूटियों को आपके बगीचे में उगाने के सुझावों के साथ समाप्त होगी। ताजगी भरी लेमनग्रास से लेकर, पाइन जैसी वुडी सुगंध वाली रोज़मेरी तक, ये जड़ी-बूटियाँ आपकी सूंघने और स्वाद की इंद्रियों को जगाने के लिए तैयार हैं। इस लेख में हम इन जड़ी-बूटियों के वितरण, पारंपरिक उपयोग, सक्रिय सुगंधित यौगिकों, उनके संभावित स्वास्थ्य लाभ, घर के बगीचे में इन्हें उगाने के सुझावों और इन्हें व्यंजनों में उपयोग करने के तरीकों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

1. **थाइमस:** प्राचीन ग्रीक इसे अपने मंदिरों में धूप के रूप में जलाते थे, क्योंकि इसे साहस प्रदान करने वाला माना जाता था। थाइम को पश्चिमी शीतोष्ण हिमालय और नीलगिरि में उगाया जाता है, और यह इन क्षेत्रों में अच्छी तरह से अनुकूलित हो जाता है। थाइम की पत्तियों में थाइमोल नामक वाष्पशील यौगिक प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। थाइम अच्छी जल निकासी वाली रेतीली मिट्टी में उत्तम उगता है और इसे पूर्ण सूर्य या आंशिक छाया पसंद है। यह पौधा एक बार स्थापित हो जाने के बाद मध्यम रूप से सुखा सहिष्णु होता है। इसका उपयोग पारंपरिक रूप से खांसी और गले की खराश को शांत करने के लिए किया जाता है।

2. पुदीना (मेंथा): ताजे पुदीना के पत्ते करी में ताजगी और ठंडक का तत्व प्रदान करते हैं, विशेष रूप से उन करी में जो क्रीम या नारियल दूध से भरपूर होती हैं। पुदीना में मेंथोल होता है, जो इसके विशिष्ट सुगंध और संभावित पाचन लाभों के लिए जिम्मेदार सक्रिय घटक है। स्पीयरमिंट (*मेंथा स्पाइकेटा*), जो चटनी में मिठास का हल्का संकेत लाता है, से लेकर व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले पुदीना (*मेन्था आर्वेन्सिस*) तक, पुदीना की किस्में ताजगी से भरे स्वाद का विविध स्पेक्ट्रम पेश करती हैं। पुदीना मध्यम जलवायु में अच्छा उगता है। भारत के पंजाब, उत्तर प्रदेश और बिहार में व्यापक रूप से इसे उगाया जाता है। मेंथा नम, अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी और आंशिक से लेकर पूर्ण सूर्यप्रकाश को पसंद करता है। इसकी आक्रामक प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, यह सलाह दी जाती है कि इसे कंटेनर में उगाया जाए ताकि यह आपके बगीचे में फैल न सके। इसे जल निकासी छेद वाले बड़े गमले में लगाने की सलाह दी जाती है। नियमित कटाई से पुदीने की नई वृद्धि को बढ़ावा मिलता है। मेंथा पाचन तंत्र को शांत करने, सिरदर्द से राहत दिलाने और इसके एंटी इंफ्लामेटरी गुणों के कारण इंफ्लामेशन को कम करने के लिए एक सामान्य उपचार है।

3. धनिया (*कोरिएन्ड्रम सैटाइवम*): ताजे धनिया के पत्ते चटनी और रायते में एक चमकदार, सिट्रसी एहसास जोड़ते हैं। धनिया में सिलांट्रो आवश्यक तेल प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जिसमें लिनालूल और अल्फा-पिनीन जैसे सक्रिय यौगिक होते हैं, जो एंटी इंफ्लेमेटरी और एंटीऑक्सीडेंट गुणों की क्षमता रखते हैं। सूखे बीज (साबुत धनिया) करी और मसाले के मिश्रणों में एक गर्म मिट्टी जैसी सुगंध देते हैं। भारतीय व्यंजनों में यह एक मुख्य सामग्री है, और इसे पूरे देश में उगाया जाता है, जिसमें राजस्थान, गुजरात और मध्य प्रदेश प्रमुख उत्पादक हैं। धनिया को ठंडा मौसम और अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी पसंद है। इसे मध्यम सिंचाई की आवश्यकता होती है और यह पूर्ण सूर्यप्रकाश से लेकर आंशिक छाया में पनपता है। धनिया गमलों या बगीचे की क्यारियों के लिए उपयुक्त होता है जिसका निरंतर फसल सुनिश्चित करने के लिए लगातार क्रमिक रूप से रोपण करते है और हर कुछ हफ्तों में नए बीज बोएं जाते हैं। गर्म मौसम में इसमें जल्दी फूल (बोल्ट) खिल जाते है। फूल की कलियों को चुटकी से तोड़ने से इसकी फसल अवधि को बढ़ाया जा सकता है। सिलांट्रो एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है और पारंपरिक रूप से विभिन्न बीमारियों के इलाज में उपयोग किया जाता रहा है। ऐसा माना जाता है कि यह पाचन में सहायता करता है, चिंता को कम करता है, और यहाँ तक कि रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में भी मदद करता है।

4. रोज़मेरी (*रोजमेरिनस ऑफिसिनैलिस*): रोज़मेरी एक सुगंधित पौधा है जो लैमिएसी परिवार का सदस्य है। इसके ताजे और सूखे पत्तों का उपयोग पारंपरिक भूमध्यसागरीय व्यंजनों और लोक चिकित्सा में किया जाता है। यह भुने हुए मांस, स्ट्यू और ब्रेड में एक विशिष्ट

लकड़ी जैसा स्वाद और सुगंध जोड़ता है। इसकी लकड़ी और पाइन जैसी सुगंध सिनेओल और कपूर जैसे वाष्पशील यौगिकों के कारण होती है। यह गर्म, शुष्क जलवायु और अच्छी जल निकासी वाली रेतीली मिट्टी में पनपता है। इसे पूर्ण सूर्य और मध्यम सिंचाई पसंद है। एक बार स्थापित हो जाने के बाद, इसकी सूखा-रोधी प्रकृति के कारण इसे बहुत कम पानी की आवश्यकता होती है। भूमध्यसागरीय क्षेत्र का मूल निवासी होते हुए भी, रोज़मेरी ने भारत के विविध जलवायुओं, विशेष रूप से हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के समशीतोष्ण क्षेत्रों में भी खुद को सफलतापूर्वक ढाल लिया है। रोज़मेरी कंटेनर बागवानी के लिए आदर्श है और इसे खिड़की की दहलीज या बगीचे के किसी धूप वाले स्थान पर रखा जा सकता है। नियमित छंटाई इसके आकार को बनाए रखती है और नए विकास को प्रोत्साहित करती है। इसे स्मृति और एकाग्रता बढ़ाने के लिए जाना जाता है। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि इसके प्राकृतिक अर्क में एंटीफंगल, एंटीबैक्टीरियल, एंटीऑक्सीडेंट,और एंटी-इंफ्लेमेटरी जैसे बायोएक्टिव गुण होते हैं और इनका उपयोग खाद्य पदार्थों में परिरक्षक के रूप में किया जा सकता है। वर्तमान में खाद्य उद्योग में सिंथेटिक योजकों के उपयोग को कम करने या समाप्त करने की मांग है और इस मांग को पूरा करने में रोज़मेरी का तेल और अर्क मदद कर सकते हैं।

5. तुलसी (*ओसिमम बेसिलिकम, ओसिमम सेंक्टम, ओसिमम टेनुइफ्लोरम*): बेसिल भारत में सुगंधित जड़ी-बूटियों की निर्विवाद रानी है; विशेष रूप से पवित्र तुलसी (*ओसिमम सेंक्टम*), जो भारतीय उपमहाद्वीप की गर्म जलवायु में खूब पनपती है। लगभग हर घर के आंगन में एक हरी-भरी तुलसी का पौधा होता है, जिसकी सुगंधित पत्तियों का उपयोग दैनिक प्रार्थनाओं में किया जाता है। इसके आध्यात्मिक महत्व से परे, बेसिल का उपयोग विभिन्न व्यंजनों में भी किया जाता है। स्वीट बेसिल (*ओसिमम बेसिलिकम*) अपनी विशेष सुगंध से पेस्टो और जेनोवेस बेसिल सॉस को स्वादिष्ट बनाती है, जबकि कृष्णा तुलसी (*ओसिमम टेनुइफ्लोरम*) की मसालेदार सुगंध करी और दाल में स्वाद बढ़ाती है। लिनालूल और मिथाइल चैविकोल जैसे यौगिक के कारण कृष्णा तुलसी की मीठी और तीखी सुगंध वाली होती है। बेसिल अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी में पनपती है, जिसमें पीएच स्तर 6 से 7 के बीच होता है। इसे पूरी धूप पसंद है और नियमित रूप से पानी की आवश्यकता होती है। यह बहुमुखी जड़ी-बूटी गमलों में अच्छे से पनपती है। नियमित रूप से पत्तियों की चुटकी लेने से यह झाड़ीदार रूप में बढ़ती है और फूल आने से रोकती है, जिससे लगातार सुगंधित पत्तियाँ मिलती रहती हैं। अपने एडाप्टोजेनिक गुणों के लिए पूजनीय तुलसी को तनाव से लड़ने, प्रतिरक्षा बढ़ाने और श्वसन तंत्र में सुधार करने वाला माना जाता है।

6. लेमनग्रास (*सिम्बोपोगान सिट्रेटस*): यह सुगंधित जड़ी-बूटी सिट्रल के कारण ताजगी भरी सिट्रस जैसी सुगंध देती है। यह भारतीय करी, सूप और चाय में नींबू जैसी सुगंध और अदरक का हल्का संकेत जोड़ती है। यह केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु की उष्णकटिबंधीय/उपोष्णकटिबंधीय गर्म और आर्द्र जलवायु में व्यापक रूप से उगाई जाती है। लेमनग्रास अच्छी जल निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी और पूर्ण सूर्य में पनपती है। यह अनुकूलनीय जड़ी-बूटी गमलों या बगीचे के बिस्तरों में उगाई जाती है, जिससे यह घरेलू बागवानों के लिए सुलभ होती है। पहले से स्थापित पौधों के गुच्छों को विभाजित करके आसानी से नई पौध तैयार की जा सकती है। इसके पाक उपयोगों से परे, लेमनग्रास में रोगाणुरोधी, एंटिफंगल और कीट प्रतिरोधक गुण होते हैं। पारंपरिक रूप से इसका उपयोग पाचन समस्याओं के उपचार और सूजन को कम करने के लिए किया जाता है।

7. लेमन बाम (*मेलिसा ऑफ़िसिनैलिस*): लेमन बाम एक बारहमासी शाकीय पौधा है, जो पुदीना परिवार का सदस्य है और इसकी पत्तियों से नींबू जैसी खुशबू आती है। लेमन बाम की ताज़ी पत्तियों का उपयोग सलाद, सूप, सॉस, चाय, मैरिनेड और मिठाइयों में नींबू जैसा स्वाद जोड़ने के लिए किया जाता है। इसे सजावटी पौधे के रूप में उगाया जाता है और मधुमक्खियों को आकर्षित करने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। इसका आवश्यक तेल इत्र और टूथपेस्ट में सामग्री के रूप में इस्तेमाल होता है। लेमन बाम की ताज़ी पत्तियों का उपयोग आइसक्रीम और हर्बल चाय में स्वाद बढ़ाने के लिए किया जाता है। अक्सर इसे स्पीयरमिंट और पिपरमिंट जैसे अन्य जड़ी-बूटियों के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है। भारत में, इसे समशीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। इसे पूर्ण सूर्य से आंशिक छाया पसंद है। यह जैविक पदार्थों से समृद्ध अच्छी जल निकासी वाली दोमट मिट्टी में सबसे अच्छी तरह बढ़ती है। मिट्टी को लगातार नम रखा जाना चाहिए, लेकिन पानी जमा नहीं होना चाहिए। वसंत या गर्मियों में ली गई तना कटिंग नम मिट्टी में आसानी से जड़ पकड़ लेती हैं। परिपक्व पौधों को वसंत या शरद ऋतु में विभाजित किया जा सकता है। भारत में लेमन बाम की बुवाई का आदर्श समय देर वसंत से

शुरुआती गर्मियों के बीच है। नियमित छंटाई से पौधे को झाड़ीदार रूप में बढ़ने और बेडौल होने से बचाया जा सकता है। पौधे के आधार के चारों ओर मल्चिंग करने से मिट्टी की नमी बनी रहती है और खरपतवार दबे रहते हैं। जैविक उर्वरक से संतुलित उर्वरक डालने से विकास में वृद्धि हो सकती है, लेकिन अत्यधिक उर्वरक डालने से बचना चाहिए। फसल काटने का सबसे अच्छा समय पौधा फूलने से ठीक पहले होता है क्योंकि उस समय आवश्यक तेल की मात्रा सबसे अधिक होती है। डंठल को सुबह ओस सूखने के बाद लेकिन दिन की गर्मी से पहले काटें। लेमन बाम का पारंपरिक रूप से उपयोग इसके शांति देने वाले प्रभावों, जैसे तनाव, चिंता को कम करने और नींद बढ़ाने के लिए किया जाता रहा है। इस जड़ी-बूटी का उपयोग पाचन को ठीक करने में भी किया जाता है।

8. इलायची (*एलेटेरिया इलायची*): मसालों की रानी, इलायची अपने गर्म, हल्के कपूर जैसी सुगंध के लिए प्रसिद्ध है जो 1,8-सिनेओल के कारण होती है। इसका आवश्यक तेल मिठाइयों और करी का स्वाद बढ़ाता है। शोध से पता चलता है कि इसका पाचन पर सकारात्मक प्रभाव हो सकता है। इलायची गर्म और आर्द्र जलवायु में पनपती है जिसमें अच्छी जल निकासी वाली दोमट मिट्टी हो। इसे आंशिक छाया पसंद है और इसे लगातार नमी की आवश्यकता होती है।

8. जीरा (*क्यूमिनम साइमिनम*): यह सर्वव्यापी मसाला केवल अपने स्वाद के लिए ही नहीं बल्कि अपनी संभावित पाचन संबंधी गुणों के लिए भी करी और चटनी में डाला जाता है। जीरे का तेल, जो क्यूमिन एल्डिहाइड से समृद्ध होता है, इसके विशेष गर्म, मसालेदार सुगंध में योगदान देता है। जीरा गर्म जलवायु में पूर्ण सूर्य के प्रकाश से पनपता है। इसे अच्छी जल निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी पसंद है और मध्यम सिंचाई की आवश्यकता होती है।

9. लौंग (*सिज़ीजियम एरोमैटिकम*): लौंग की तीव्र सुगंध इसके आवश्यक तेल के मुख्य घटक यूजेनॉल से आती है। हालांकि लौंग को बड़ी मात्रा में सीधे तौर पर नहीं खाया जाता, लेकिन इसके अद्वितीय स्वाद और संभावित रोगाणुरोधी गुणों के लिए भारतीय करी और बिरयानी में इसका और इसके तेल का उपयोग किया जाता है।

10. काली मिर्च (*पाइपर नाइग्रम*): काली मिर्च की तीखी तीव्रता इसके आवश्यक तेल में प्रमुख यौगिक पिपेरिन के कारण होती है जबकि पारंपरिक भारतीय व्यंजनों में काली मिर्च के तेल का व्यापक उपयोग नहीं होता। यह तेल पोषक तत्वों के अवशोषण में सुधार जैसी संभावित स्वास्थ्य लाभ प्रदान कर सकता है। काली मिर्च गर्म, आर्द्र जलवायु में अच्छी जल-निकासी वाली समृद्ध मिट्टी में पनपती है। इसका सर्वोत्तम विकास आंशिक छाया और उच्च आर्द्रता के स्तर में होता है।

11. जायफल (*मिरिस्टिका फ्रैग्रेंस*): जायफल के तेल में मिरिस्टिसिन के कारण गर्म, मीठी और हल्की मसालेदार सुगंध होती है। जायफल के अन्य यौगिक जैसे सफ़ोल, एलिमिसिन और यूजेनॉल भी इसके गुणों में योगदान करते हैं। यह भारतीय मिठाइयों, करी और बिरयानी में एक विशेष स्वाद जोड़ता है और इसमें जीवाणुरोधी गुण हो सकते हैं। काली चाय, हॉट चॉकलेट और कुछ गर्म पेय पदार्थों में जायफल का पाउडर मिलाकर उसे खास स्वाद दिया जाता है।

12. दालचीनी (*सिनैमोमम जेलैनिकम*): दालचीनी का तेल, जिसकी गर्म, मीठी और मसालेदार सुगंध सिनामाल्डेहाइड के कारण होती है, का उपयोग चावल के व्यंजनों, खीर और स्ट्यू में किया जाता है। शोध से पता चलता है कि यह रक्त शर्करा को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है। दालचीनी गर्म, आर्द्र जलवायु में अच्छी जल-निकासी वाली दोमट मिट्टी में अच्छी तरह बढ़ती है। इसे आंशिक छाया और लगातार नमी के स्तर की आवश्यकता होती है।

13. वेटीवर (*वेटीवेरिया ज़िज़ानियोइड्स*): यह पोएसी परिवार की बारहमासी घास है। इसकी सुगंधित जड़ें भारत में कुछ ठंडे पेय पदार्थों में उपयोग की जाती हैं। इसकी जड़ें वेटीवेरोल के कारण आवश्यक तेल उत्पन्न करती हैं जिसमें लकड़ी की और मिट्टी की सुगंध होती है। वेटीवर का तेल अरोमाथेरेपी में संभावित उपयोग के लिए जाना जाता है और यह पारंपरिक भारतीय चिकित्सा में भी उपयोग होता है। यह शांति देने वाले और तनाव कम करने वाले प्रभाव प्रदान कर सकता है। वेटीवर गर्म जलवायु में अच्छी जल-निकासी वाली मिट्टी में अच्छी तरह बढ़ता है। यह विभिन्न प्रकार की मिट्टी को सहन करता है, और इसे मध्यम सिंचाई पसंद है।

14. केसर (*क्रोकस सैटाइवस*): दुनिया का सबसे महंगा मसाला केसर है, जिसमें क्रोसिन नामक यौगिक होता है, जो इसे विशेष फूलों की सुगंध और स्वाद प्रदान करता है। केसर का आवश्यक तेल उच्च गुणवत्ता वाली भारतीय मिठाइयों में सीमित रूप से उपयोग किया जाता है। केसर ठंडी, सूखी जलवायु में अच्छी जल-निकासी वाली हल्की क्षारीय मिट्टी में सबसे अच्छा बढ़ता है। इसे पूर्ण धूप की आवश्यकता होती है और यह अत्यधिक नमी सहन नहीं कर सकता।

15. गुलाब (*रोज़ा डैमेसेना*): गुलाब जल, एक आवश्यक तेल का उप-उत्पाद, भारतीय मिठाइयों जैसे गुलाब जामुन और फिरनी की नींव है। इसकी कोमल फूलों की सुगंध विभिन्न यौगिकों जैसे जेरानियोल और गुलाब ऑक्साइड के कारण होती है। गुलाब मध्यम जलवायु में अच्छी जल-निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी में अच्छी तरह बढ़ता हैं। इसे पूर्ण धूप और नियमित सिंचाई पसंद है।

16. चमेली (*जैस्मिनम ऑफिसिनेल*): इस सुगंधित फूल का आवश्यक तेल, जिसमें लीनालूल के कारण मीठी, फूलों की सुगंध होती है, भारतीय मिठाइयों और पेय पदार्थों में एक लोकप्रिय फ्लेवरिंग एजेंट है। चमेली गर्म, आर्द्र जलवायु में अच्छी जल-निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी में अच्छी तरह बढ़ता है। इसे पूर्ण धूप से आंशिक छाया और नियमित सिंचाई पसंद है।

17. केवड़ा (*पैंडेनस ओडोरैटिसिमस*): केवड़ा के सुगंधित सफेद फूलों से एक आवश्यक तेल प्राप्त होता है, जिसमें 2-एसेटाइल और 1-पाइरोलिन के कारण एक अनोखी, मीठी सुगंध होती है। इसका उपयोग भारतीय मिठाइयों जैसे श्रीखंड और बसुंदी में किया जाता है। यह पूर्ण सूर्य से आंशिक छाया तक की स्थिति में और निरंतर नमी वाली मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है।

18. मोगरा (*जैसमिनम सैम्बेक*): जैस्मिन के समान, मोगरा के फूलों में लिनालूल के कारण एक मीठी, पुष्प-सुगंध होती है। इनका आवश्यक तेल भारतीय मिठाइयों और पेय पदार्थों में उपयोग किया जाता है। मोगरा गर्म, आर्द्र जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे पूर्ण सूर्य से आंशिक छाया और नियमित सिंचाई पसंद है।

19. जटामांसी (*नारडोस्टैकिस जटामांसी*): इस हिमालयी पौधे की जड़ों से एक आवश्यक तेल प्राप्त होता है, जिसमें वलेरिक एसिड के कारण एक मस्की, लकड़ी जैसी सुगंध होती है। इसका सीधे तौर पर सेवन नहीं किया जाता, लेकिन इसकी सुगंध के लिए इसका कुछ भारतीय मिठाइयों में उपयोग किया जाता है। जटामांसी ठंडी, एल्पाइन जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली पत्थरीली मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे आंशिक छाया और मध्यम नमी पसंद है।

20. कैमोमाइल (*मैट्रिकारिया कैमोमिला*): आम धारणा के विपरीत, कैमोमाइल भारत का मूल पौधा नहीं है, लेकिन इसे हिमालय के कुछ ठंडे क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। इसके आवश्यक तेल में विभिन्न एस्टर के कारण एक मीठी, सेब जैसी सुगंध होती है। यह संभावित रूप से आराम देने और नींद को बढ़ाने के प्रभाव दे सकता है जबकि इसका भारतीय व्यंजनों में व्यापक रूप से उपयोग नहीं किया जाता, इससे चाय बनाने में उपयोग किया जाता है और कैमोमाइल चाय एक लोकप्रिय पेय है। कैमोमाइल ठंडी, समशीतोष्ण जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे पूर्ण सूर्य से आंशिक छाया और मध्यम सिंचाई पसंद है।

21. आकर्करा (*हेमीडेस्मस इंडिकस*): यह लता एक आवश्यक तेल प्रदान करती है, जिसमें अल्फा-फेलैंड्रीन के कारण एक लकड़ी और मिट्टी जैसी सुगंध होती है। इसका उपयोग पारंपरिक भारतीय चिकित्सा में किया जाता है और इसके संभावित यौन उत्तेजक गुण हो सकते हैं। आकर्करा गर्म, आर्द्र जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे पूर्ण सूर्य से आंशिक छाया और नियमित सिंचाई पसंद है।

22. गंधराज (*गॉल्थेरिया फ्रैग्रैंटिसिमा*): यह छोटा झाड़ी अपने आवश्यक तेल में मिथाइल सैलिसिलेट के कारण एक मीठी, शीतलनुमा सुगंध प्रदान करता है। इसका उपयोग कुछ भारतीय मिठाइयों में किया जाता है और इसमें संभावित दर्द-निवारक गुण हो सकते हैं। गंधराज ठंडी, समशीतोष्ण जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली अम्लीय मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे आंशिक छाया और मध्यम नमी पसंद है।

23. भारतीय जटामांसी (*हेडीकियम स्पाइकेटम*): यह सुंदर फूल वाला पौधा एक तीव्र सुगंधित आवश्यक तेल प्रदान करता है, जिसमें विभिन्न एस्टर के कारण जैस्मिन जैसी सुगंध होती है। इसका उपयोग कुछ भारतीय मिठाइयों में किया जाता है और इसमें कीट-

निवारक गुण हो सकते हैं। भारतीय जटामांसी गर्म, आर्द्र जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली समृद्ध मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे आंशिक छाया और निरंतर नमी स्तर पसंद है।

24. बाला (*एलेटेरिया कार्डामोमम* प्रभेद *मेटुला*): कार्डामम का एक कम जाना जाने वाला रिश्तेदार, बाला 1,8-सिनिओल और मिथाइल सिन्नामेट के कारण धुएं जैसी, औषधीय सुगंध प्रदान करता है। इसका उपयोग कुछ क्षेत्रीय भारतीय मिठाइयों में किया जाता है और इसमें कार्डामम के समान पाचन संबंधी लाभ हो सकते हैं। बाला उन्हीं परिस्थितियों में अच्छी तरह पनपता है जो कार्डामम के लिए उपयुक्त होती हैं, जैसे गर्म, आर्द्र जलवायु, अच्छी जल-निकासी वाली दोमट मिट्टी, आंशिक छाया, और निरंतर नमी।

25. काला जीरा (*नाइजेला सैटाइवा*): भारत में इसे अक्सर "कलौंजी" कहा जाता है। काले जीरे के बीज एक आवश्यक तेल प्रदान करते हैं जिसमें मिर्ची और ऑरिगेनो जैसी सुगंध होती है। हालांकि इसे पारंपरिक रूप से भोजन में बड़े पैमाने पर उपयोग नहीं किया जाता, काले जीरे के तेल में संभावित सूजन-रोधी गुण होते हैं। काला जीरा ठंडी से समशीतोष्ण जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे पूर्ण सूर्य और मध्यम सिंचाई पसंद है।

26. दवाना (*आर्टिमिज़िया पैलेन्स*): यह फूलदार झाड़ी अपने आवश्यक तेल में विभिन्न एस्टर के कारण एक अनोखी, फलों जैसी और हल्की करी जैसी सुगंध प्रदान करती है। इसका उपयोग कुछ क्षेत्रीय भारतीय मिठाइयों और पेयों में इसकी रोचक सुगंध के लिए किया जाता है। दवाना गर्म, शुष्क जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। इसे पूर्ण सूर्य और मध्यम सिंचाई पसंद है।

27. गन्धबेल, गन्धभेज घास, मकोरा, मिर्चगन्ध, मोतिया (*सिम्बोपोगोन मार्टिनियाइ* प्रभेद *मोतिया*): यह सुगंधित घास अपने आवश्यक तेल में जिरेनियोल के कारण एक मजबूत गुलाब जैसी सुगंध प्रदान करती है। हालांकि इसे बड़े पैमाने पर सीधे तौर पर नहीं खाया जाता, इसके तेल का उपयोग भारतीय इत्रों में किया जाता है और इसमें संभावित कीट-निवारक गुण हो सकते हैं। यह गर्म, आर्द्र जलवायु और अच्छी जल-निकासी वाली मिट्टी में अच्छी तरह पनपती है। इसे पूर्ण सूर्य और मध्यम सिंचाई पसंद है।

ISSN: 0975-4342

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 39-39 (2025)

मेलिन्जो-बेलिन्जो: एक बहुपयोगी प्राचीनतम पौधा

सौरभ सचान, एल. आर. मैती, विजय, एन. ऑडियो व डेविड एल. बियाते

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग

मेलिन्जो-बेलिन्जो मिजोरम, असम एवं दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों तथा मलाया प्रायद्वीप, फिलीपीन्स आदि क्षेत्रों में पाया जाने वाला एक अल्प ज्ञात नग्न बीजी पौधा नीटम निमोन है जो नीटेसी कुल का सदस्य है एवं इसे संयुक्तफर, बोगो, युग्मपर्णक इत्यादि नामों से भी जाना जाता है। यह एक मध्यम (15 से 30 सेमी) ऊंचाई युक्त, 8 से 10 सेमी लम्बे एवं 3 से 9 सेमी चौडे व चमकदार पत्तों वाला बहुवर्षीय पौधा है। अनावृत्तबीजीय होने के कारण इसमें फूल कभी भी नहीं आते हैं। परन्तु इसके लाल रंग के नट प्रकार के अण्डाकार भ्रूण पोष युक्त सुन्दर फल आते हैं जो भिन्न-भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में अलग-अलग मौसम में आते है जैसे इंडोनेशिया में फलन मार्च से अक्टूबर तक रहती है जिसे यहां के लोग मेलिन्जो-बेलिन्जो पर्व के रूप में मनाते हैं। इसी प्रकार फिलीपीन्स में यह जून से सितम्बर के मध्य फल देता है। आवृत्तबीजिय पौधों के पूर्ण समान होने के कारण इसे आवृत्तबीजिय एवं अनावृत्तबीजिय पौधों के बीच की कड़ी भी समझा जाता है। बगैर फूल के फलन होना एवं इसकी काष्ठ में विकसित संवहनी तन्त्र होना आम लोगों के लिए यह एक दिलचस्प बात होती है। नीटम निमोन के शंकु में रिजवरेटाल व अन्य बायो एक्टिव यौगिक पाए जाते हैं जिन्हे संयुक्त रूप से डाईमर कहते हैं, जिसमें एंटी बैक्टीरियल व एंटी ऑक्सीडेटिव प्रापर्टी होती है। इसके अतिरिक्त इसकी जड़ में पांच स्टिल बैनाइड यौगिक जैसे एम्पिलाप्सिन-ई एवं सिश जेन्टिन सी, डी एवं ई इत्यादि भी मिलते हैं। अनेकानेक स्वास्थ्यवर्धक यौगिकों के पाए जाने के कारण ही दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों में इससे निर्मित उत्पादों को शाही घरानों की पसन्द के रूप में जाना जाता है। भारत में नीटम निमोन एक अल्प संज्ञानित पौधा है जिसके संरक्षण, संवर्धन एवं पुर्नरोपण से भविष्य में भारत में भी इससे अनेकानेक प्रकार से लाभ अर्जित किए जा सकते हैं। प्रयोगिक वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण बड़ापानी में इसके पौधों का भली प्रकार से संरक्षण एवं पुर्नरोपण किया जा रहा है।

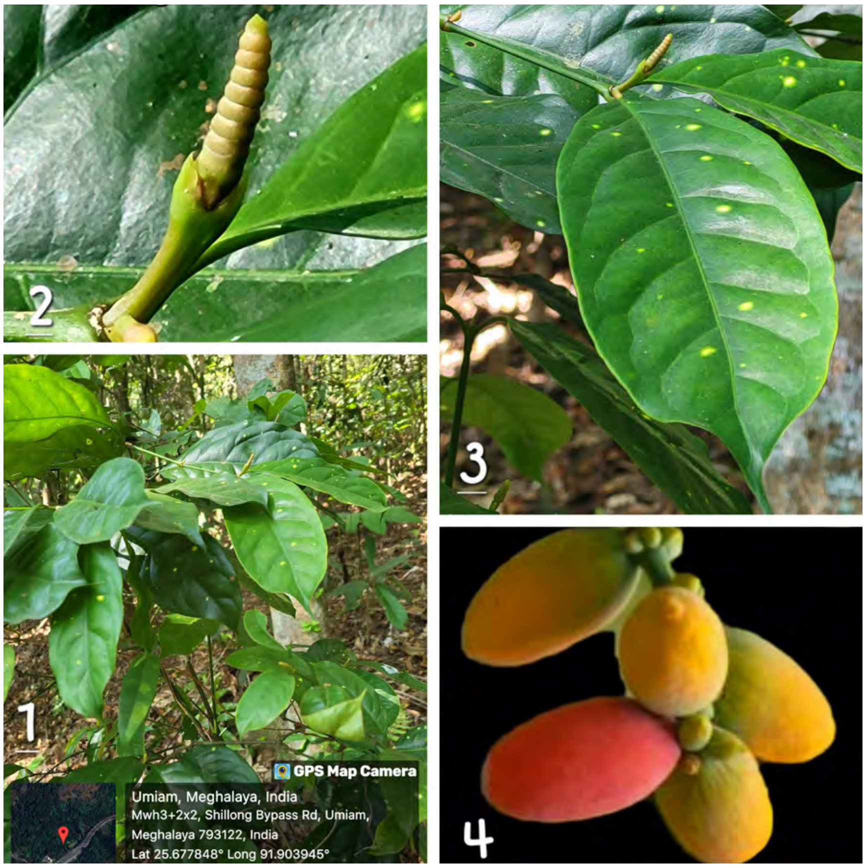

चित्र-1: प्रयोगिक वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण बड़ापानी में नीटम निमोन का भौगोलिक आवास, 2: नीटम निमोन का नर शंकु, 3: नीटम निमोन का पर्ण फलक, 4: नीटम निमोन के फल

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 40-42 (2025)

समस्तीपुर (बिहार), भारत के पारंपरिक रूप से उपयोगी प्रमुख खाद्य फूल

तनय शील, छाया देओरी व विजय

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा-711103
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003

खाद्य फूल सदियों से पारंपरिक व्यंजनों और हर्बल दवाओं के निर्माण का अभिन्न अंग रहे हैं। खाद्य फूलों और उनके जैविक रूप से सक्रिय यौगिकों का उपयोग उनके स्वास्थ्य लाभों की विस्तृत श्रृंखला के कारण तेजी से बढ़ा है। ये फूल पोषक तत्वों और जैव सक्रिय यौगिकों दोनों के समृद्ध स्रोतों के रूप में काम करते हैं, जिससे वे खाद्य और औषधीय उपयोग में मूल्यवान हो जाते हैं। खाद्य फूल रंग, आकार, रासायनिक संरचना, सुगंध और स्वाद में बहुत विविधता प्रदर्शित करते हैं। उनका सेवन विभिन्न रूपों में किया जा सकता है और अक्सर मानव स्वास्थ्य पर उनके सकारात्मक प्रभावों के कारण संतुलित आहार में शामिल किया जाता है। उनके औषधीय गुण का उपयोग हर्बल चिकित्सा में व्यापक रूप से किया जाता है। उनके खाद्य उपयोग से अलग, खाद्य फूल गैर- खाद्य अनुप्रयोगों में तेजी से वृद्धि हुई हैं। इनमें कैलोरी की मात्रा कम और कोलेस्ट्रॉल मुक्त होते है, साथ ही मैग्नीशियम, पोटेशियम, फॉस्फोरस, कैल्शियम और आहार फाइबर जैसे आवश्यक मैक्रो-तत्वों से समृद्ध होते हैं। इनमें बहुअसंतृप्त वसा फाइटोस्टेरॉल, फिनोलिक एसिड, फ्लेवोनॉइड, एंथोसायनिन, कैटेचिन, कैरोटेनॉइड्स और विटामिन सी और ई जैसे लाभकारी यौगिक भी पाए जाते हैं। अपने पोषण संबंधी लाभों के अलावा, खाद्य फूलों में प्रतिउपचायक, सूजनरोधी या शोथरोधी, रोगाणुरोधक, कोशिका वृद्धि-रोधी, वाहिका-सुरक्षात्मक और हृदय और रक्तवाहिका संबंधी लाभ सहित अलग-अलग चिकित्सीय प्रभाव शामिल होते हैं। हालांकि मानव आहार में फूलों को शामिल करना पर्याप्त ज्ञान पर निर्भर होना चाहिए क्योंकि कुछ फूलों में ऐसे घटक भी हो सकते हैं जो मानव शरीर के लिए हानिकारक हो सकते हैं, जिनमें साइनोजेनिक ग्लाइकोसाइड्स, इरुसिक एसिड, कूमरिन, थुजोन, ट्रिप्सिन ब्लॉकर, हेमाग्लुटिनिन या क्षार जैसे तत्व शामिल होते हैं। हाल के वर्षों में खाद्य फूलों की लोकप्रियता काफी बढ़ी है, जो उनके समृद्ध स्वाद, पोषण मूल्य और स्वास्थ्य बढ़ाने वाले गुणों से प्रेरित है। इस अध्ययन का उद्देश्य समस्तीपुर (बिहार), भारत में पारंपरिक रूप से उपयोग की जाने वाली खाद्य फूल प्रजातियों का प्रलेखन करना है।

ऐलियम सीपा लिनिअस (ऐमेरिलिडेसी): इसका सामान्य नाम प्याज़ (ओनियन) है। यह जनवरी-मार्च माह में उपलब्ध होता है। इसके स्केप्स को आलू के साथ तला जाता है या मछली के साथ तैयार किया जाता है। इसके फूलों को आलू के साथ तला जाता है या चटनी बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

एजाडिरैक्टा इंडिका ए. जूसियो (मीलिएसी): इसका सामान्य नाम नीम है। यह मार्च-मई माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को आलू या बैंगन का उपयोग करके तला जाता है।

बैसेला ऐल्बा लिनिअस (बैसेलेसी): इसका सामान्य नाम पोई, मालाबार स्पिनेच है। इसके फूलों का उपयोग आलू, बैंगन, कद्दू या अन्य सब्जियों या छोटी मछलियों के साथ करी बनाने के लिए किया जाता है।

बौहिनिया परप्यूरिया लिनिअस (फैबेसी): इसका सामान्य नाम कैनेर और पर्पल बौहिनिया है। यह सितम्बर-जनवरी माह में उपलब्ध होता है। इसके कलियों और फूलों को सब्जी के रूप में तैयार किया जाता है और करी और अचार में शामिल करके खाया जाता है।

बाम्बैक्स सीबा लिनिअस (मालवेसी): इसका सामान्य नाम शलमाली और सिल्क कॉटन फ्लावर है। यह फरवरी- मई माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को उबालकर *निगेला सैटाइवा* लिनिअस के बीज और नमक के साथ मसलकर चावल के डंठलों के साथ खाया जाता है। फूलों का उपयोग अचार बनाने के लिए भी किया जाता है। फूलों को सुखाकर रोटी के लिए आटा गूंथ लिया जाता है। फूलों की कलियाँ करी सब्ज़ी के रूप में बहुत मूल्यवान होती हैं।

ब्यूटिया मोनोस्पर्मा कुंत्से (फैबेसी): इसका सामान्य नाम पलाश और "फ्लेम ऑफ द फॉरेस्ट" है। यह फरवरी-अप्रैल माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को करी के रूप में पकाया जाता है।

कोलोकेसिया इसक्यूलैन्टा (लिनिअस) स्कोट (ऐरेसी): इसका सामान्य नाम तारो है। यह ग्रीष्म और पतझड़ ऋतु में उपलब्ध होता है। इसके कटे हुए पुष्पगुच्छों को करी के रूप में पकाया जाता है या चना के आटे के बीज, नमक, हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है।

कुकरबिटा मैक्सिमा डचेस (कुकुरबिटेसी): इसका सामान्य नाम कद्दू और जायंट पम्पकिन है। यह मार्च-सितम्बर माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को चने के आटे, निगेला सटाइवा एल के बीज, नमक, हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है।

डेलोनिक्स रिजिआ (बोजर) रैफिनेस्क (फैबेसी): इसका सामान्य नाम गुलमोहर और फ्लेम ट्री है। यह अप्रैल-मई माह में उपलब्ध होता है। इसके पंखुड़ियों को खाया जाता है और एक अद्वितीय पाक सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है।

जस्टीसिया एढ़ैटोडा लिनिअस (ऐकेंथेसी): इसका सामान्य नाम अडुलसा और मालाबार नट है। यह जनवरी-अप्रैल माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को सरसों के तेल में तला जाता है तथा अन्य व्यंजनों एवं चावल के साथ खाया जाता है।

लैजीनेरिया साइसरेरिया (मोलिना) स्टैंडले (कुकुरबिटेसी): इसका सामान्य नाम लौकी (बॉटल गार्ड) है। यह अगस्त-सितम्बर माह में उपलब्ध होता है। फूलों को काला जीरा के बीज, नमक, सरसों के तेल, तली हुई लाल मिर्च के साथ मसला जाता है और उबले हुए चावल के साथ खाया जाता है।

मधुका लौंगिफोलिया (लिनिअस) जे. एफ. मैक्ब्राइड (सैपोटेसी): इसका सामान्य नाम महुआ और इंडियन बटर ट्री है। यह फरवरी-अप्रैल माह में उपलब्ध होता है। यह फूल आदिवासी समुदायों में आम है। इसके फूलों का उपयोग तेल बनाने के लिए किया जाता है। महुआ की मिठास स्वाभाविक रूप से लड्डू, जैम आदि बनाने में भी इस्तेमाल होती है।

मोरिंगा ओलीफेरा लैमार्क (मोरिंगेसी): इसका सामान्य नाम सहजन (ड्रमस्टिक) है। यह जनवरी-मार्च माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों का उपयोग अत्यधिक पौष्टिक सब्जी के रूप में किया जाता है। फूलों को आलू बैंगन या अन्य सब्जियों के साथ करी के रूप में पकाया जाता है। फूलों को चने के आटे, काला जीरा, नमक और हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला भी जाता है।

म्युजा × ***पैराडिजिएका*** लिनिअस (म्यूजेसी): इसका सामान्य नाम केला (बनाना) है। यह सम्पूर्ण वर्ष उपलब्ध होता है। कटे हुए फूलों को चने के आटे, नमक और हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है। कटे हुए फूलों का इस्तेमाल आलू या अन्य सब्ज़ियों के साथ करी बनाने में भी किया जाता है।

निलम्बो न्यूसीफेरा गार्टनर (निलंबोनेसी): इसका सामान्य नाम कमल है। यह अप्रैल-अक्टूबर माह में उपलब्ध होता है। पंखुड़ियों और फुलों का उपयोग करी बनाने में किया जाता है। पंखुड़ियों को सूप में डाला जाता है या सजावट के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। फूलों को चाय में मिलाकर स्वाद बढ़ाया जा सकता है।

नियोलैमार्किया कैडम्बा (रॉक्सबर्ग) बोशर (रुबिएसी): इसका सामान्य नाम कदम्ब और बरफ्लावर-ट्री है। यह अप्रैल-जुलाई माह में उपलब्ध होता है। फूलों को उपयोग फलों के साथ करी बनाने में किया जाता है।

निकटेन्थीज आर्बर-ट्रिसटिस (लिनिअस) ओलिएसी: इसका सामान्य नाम हरश्रृंगार और कोरल जैसमिन है। यह सितम्बर-नवम्बर माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को धूप में सूखाया जाता है और फिर खाद्य तेल के साथ पकाया जाता है।

निम्फिया नौचाली निकोलस लॉरेंस बर्मन (निम्फिएसी): इसका सामान्य नाम नीलकमल और ब्लू वाटर लिली है। यह अगस्त-जनवरी माह में उपलब्ध होता है। इसके पुष्पवृंत को झींगे या छोटी मछलियों के साथ अन्य कई सामग्रियों के साथ करी की तरह पकाया जाता है। कटी हुई पंखुड़ियों को चने के आटे, काले जीरे, नमक और हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है।

निम्फिया प्यूबीसेंस विल्डेनोव (निम्फिएसी): इसका सामान्य नाम वैट और वाइट वाटर लिली है। यह अगस्त-जनवरी माह में उपलब्ध होता है। इसके पुष्पवृंत को झींगे या छोटी मछलियों के साथ कई अन्य सामग्रियों के साथ करी की तरह पकाया जाता है। पंखुड़ियों को चने के आटे, काला जीरा, नमक और हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है।

निम्फिया रूब्रा रॉक्सबर्ग के बाद सेलिसबेरी (निम्फिएसी): इसका सामान्य नाम लाल कमल और रेड इंडियन वाटर लिली है। यह अगस्त-जनवरी माह में उपलब्ध होता है। इसके पुष्पवृंत को झींगे या छोटी मछलियों के साथ कई अन्य सामग्रियों के साथ करी की तरह पकाया जाता है। पंखुड़ियोंको चने के आटे, काला जीराके बीजों, नमक और हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है।

सेस्बेनिया ग्रैन्डीफ्लोरा (लिनिअस) पोइरेट (फैबेसी): इसका सामान्य नाम अगस्ति और वेजिटेबल हमिंगबर्ड है। यह नवम्बर-मार्च माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों को चने के आटे, काला जीरा, नमक, हल्दी पाउडर से बने घोल में डुबोकर तला जाता है।

टैगेटीज इरेक्टा लिनिअस (ऐस्टेरेसी): इसका सामान्य नाम गेंदा फूल और मैरीगोल्ड है। यह जनवरी-मई माह में उपलब्ध होता है। पंखुड़ियों का उपयोग सलाद, सूप और चावल के व्यंजनों का रंग निखारने के लिए किया जाता है। फूलों का उपयोग भोजन में स्वाद बढ़ाने के लिए भी किया जाता है।

टैमैरिन्डस इंडिका लिनिअस (फैबेसी): इसका सामान्य नाम इमली है। यह जून-अक्टूबर माह में उपलब्ध होता है। इसके फूलों का प्रयोग करी बनाने में किया जाता है।

चित्र: 1. *ऐलियम सीपा* लिनिअस; 2. एजाडिरैक्टा इंडिका ए. जूसियो; 3. *बाम्बैक्स सीबा* लिनिअस; 4. *कोलोकेसिया इसक्यूलैन्टा* (लिनिअस) स्कोट; 5. *कुकरबिटा मैक्सिमा* डचेस; 6. *जस्टीसिया एढ़ैटोडा* लिनिअस; 7. *लैजीनेरिया साइसरेरिया* (मोलिना) स्टैंडले; 8. *मोरिंगा ओलीफेरा* लैमार्क; 9. *म्युजा × पैराडिजिएका* लिनिअस; 10. *निलम्बो न्यूसीफेरा* गार्टनर; 11. *निम्फिया रूब्रा* रॉक्सबर्ग के बाद सेलिसबेरी; 12. *सेस्बेनिया ग्रैन्डीफ्लोरा* (लिनिअस) पोइरेट

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 43-44 (2025)

नागालैंड की आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण वनस्पतियां: पारंपरिक ज्ञान और जैव विविधता की धरोहर

आर. मणिकन्दन, प्रमोद मीणा व नंदिता शर्मा

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003

नागालैंड भारत का एक अत्यंत जैव विविधतापूर्ण राज्य है, जहाँ की आदिवासी जनजातियाँ वनस्पतियों से जुड़ी पारंपरिक जानकारियों से संपन्न हैं। इस क्षेत्र में पाई जाने वाली अनेक पौधे न केवल खानपान और औषधियों के लिए उपयोगी हैं, बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन पौधों का उपयोग खाद्य, औषधि, निर्माण, सौंदर्य प्रसाधन और अन्य घरेलू उपयोगों में किया जाता है। नीचे दी गई तालिका में नागालैंड की आर्थिक दृष्टि से 50 महत्वपूर्ण वनस्पतियों की जानकारी उनके वानस्पतिक नाम, सामान्य नाम, स्थानीय नाम, कुल, प्ररूप तथा प्रमुख उपयोग के साथ दी गई है।

क्र.	वानस्पतिक नाम	कुल	सामान्य नाम	स्थानीय नाम	उपयोग
1	*ऐलियम चाइनेन्से* जी. डॉन	ऐमेरिलिडेसी	चीनी प्याज	नागा लहसुन	भोजन व औषधीय उपयोग
2	*पाइनस रॉक्सबर्गियाइ* सर्जेंट	पाइनेसी	चीड़	पाइन	लकड़ी, कागज, तेल
3	*हाउट्टूइनिया कॉर्डेटा* थनबर्ग	सौरियेसी	हार्टलीफ	गुंदापत्ता	औषधीय
4	*सेंटेला ऐशिएटिका* (लिनिअस) अर्बन	एपिएसी	मंडूकपर्णी	कोला पत्ता	त्वचा, घाव
5	*ऐकोनिटम पामेटम* डी. डॉन	रैननकुलैसी	ब्लरॉकेट	ब्लूरॉकेट	बुखार, सूजन
6	*टैमैरिंडस इंडिका*(लिनिअस)	फैबेसी	टैमैरिंड	इमली	फल, पेय
7	*फीनीकुलम वल्गैरी* मिलर	एपीऐसी	फेनल	फेनल	हृदय रोग
8	*नेपेन्थीज नागा* अखरियादी, हेरनावती, प्रिमालधी व एम.हांबाली	नेपेंथेसी	पिचर प्लांट	पिचर प्लांट	श्वसन संबंधी रोगों मे
9.	*कोकोस न्यूसीफेरा* (लिनिअस)	ऐरिकेसी	नारियल	नारकोल	साबुन, औषधि
10	*ऐरेका कैटेचू* (लिनिअस)	ऐरिकेसी	बीटेल नट	तमूल	पाचन एवं आत्र रोगों में
11	*बेकौरिया रैमीफलोरा* लॉरेइरो	फाइलेन्थेसी	बर्मी अंगूर	ऑटुमैथी (लोथा) लटकु, लटकन, लटका, लेटेकु, बूगी	फल व पाचन
12	*मोरस ऐल्बा* (लिनिअस)	मोरेसी	शहतूत	मलबेरी	त्वचा लाभ
13	*फैसिओलस वल्गेरिस* (लिनिअस)	फैबेसी	फलियाँ	मुर्बला	प्रोटीन स्रोत
14	*एहरीशिआ ऐक्यूमिनेटा* रॉबर्ट ब्राउन	बोरेजिनेसी	कोडा ट्री	कोडा ट्री	गोंद बनाने में
15	डोनेला लेन्सिओलेटा (ब्लूम) ऑब्रेविल	सैपोटेसी	पुलीचक्का	पुलीचक्का	सजावटी तौर पर
16	*फिलोस्टैकिस एडुलिस* (कैरियर) जे.हौज.	पोएसी	बाँस	बस्टिंगा	विटामिन स्रोत
17	*पार्किया स्पेशियोसा* (हास्कर्ल)	फैबेसी	स्टिंक बीन	योंगचाक	बाल झड़ना
18	*कोलोकेसिया एस्कुलेंटा* (लिनिअस) स्कॉट	ऐरेसी	अरबी	कोचू	पोषण व औषधि
19	*डिलीनिआ इंडिका* (लिनिअस)	डिलीनिएसी	हाथी सेब/ ऐलिफैंट ऐपल	हाथी सेब/ ऐलिफैंट ऐपल	दस्त और बालों के रोगों मे
20	*जेन्थोजाइलम रीट्सा* (रॉक्सबर्ग) डी कैंडोले	रूटेसी	काँटेदार ऐश	मिचिंगा	दाँत, मूत्ररोग
21	*ओसिमम टेनुइफ्लोरम* (लिनिअस)	लैमिएसी	तुलसी	तुलसी	सर्दी, ज्वर
22	*मेंटा स्पाइकेटा* (लिनिअस)	लैमिएसी	पुदीना	पुदीना	अपच

क्र.	वानस्पतिक नाम	कुल	सामान्य नाम	स्थानीय नाम	उपयोग
23	*क्लाइटोरिया टर्नेशिया* (लिनिअस)	फैबेसी	अपराजिता	बटरफ्लाई पी	चाय, सौंदर्य
24	*पैसीफ्लोरा एडुलिस* जॉन सिम्स	पैसिफ्लोरैसी	पैशन फ्रूट	भेल	मधुमेह
25	*एजाडिरैक्टा इंडिका* ए.जूशियू	मैलिएसी	नीम	निंबा	त्वचा, संक्रमण
26	*सैल्विया रोजमेरिनस* स्पेनर	लैमिएसी	रोज़मैरी	रुसमारी	बाल विकास
27	*कैनेबिस सैटाइवा* (लिनिअस)	कैनाबेसी	गांजा	गांजा	त्वचा, अस्थमा
28	*मिमोसा प्यूडिका* (लिनिअस)	फैबेसी	लाजवंती	टच-मी-नॉट	घाव, बवासीर
29	*बाइडेन्स पाइलोसा* (लिनिअस)	ऐस्टेरेसी	बेगर टिक	कुमरा, कुमुर, तनेंगन्यु	बुखार, पेटदर्द
30	*कैजेनस कर्स्टिंगियाइ* हार्म्स	फैबेसी	अरहर	मुक्रि	पारंपरिक औषधि
31	*कैप्सिकम चाइनेन्से* जैक्विन	सोलैनेसी	राजा मिर्चा	राजा मिर्चा	अचार, मसाले
32	*साइकैस सर्सिनैलिस* (लिनिअस)	साइकैडेसी	साइकस	तुंगू	चटाई, औषधि
33	*ऐरेका केटेचू* (लिनिअस)	ऐरेकेसी	सुपारी	पाम बंग	तेल, पत्ते
34	*नीटम नेमोन* (लिनिअस)	नीटेसी	नेमोन	बेलिंजो	मलेरिया, विषनाशक
35	*क्रिप्टोमेरिआ जैपोनिका* (कार्ल लिनिअस) डी.डॉन	क्यूप्रेसेसी	जापानी देवदार	सागी	लकड़ी
36	*जेन्थोजाइलम बीचेयानम* के.कोच	रूटेसी	पेपर झाड़ी	हेजिंगा	हृदय, कोलेस्ट्रॉल
37	*प्लैन्टगो मेजर* (लिनिअस)	प्लैन्टैजिनेसी	फ्लेववर्ट्स	टैपिंग	घाव, कट
38	*रोडोडेंड्रॉन आर्बोरिअम* स्मिथ	ऐरिकेसी	रोडोडेंड्रॉन	रोडोडेंड्रॉन	दस्त, ज्वर
39	*आइपोमिया बाटाटास* (लिनिअस) लैमार्क	कान्वाल्वुलेसी	शकरकंद	मीठा आलू	कार्बोहाइड्रेट
40	*मोमोर्डिका चरंशिया* (लिनिअस)	कुकुरबिटेसी	करेला	तीता करेला	मधुमेह
41	*विग्ना रेडिएटा* आर. विल्जेक	फैबेसी	मूंग बीन	नागा दाल	मैग्नेशियम जैसे पोषक तत्वों से भरपूर
42	*सोलेनम स्ट्रेमोनीफोलियम* जैक्विन	सोलैनेसी	जंगली बैंगन	चामौखासी	हृदय स्वास्थ्य
43	*मुटार्डा निग्रा* (लिनिअस) बर्नहार्डी	ब्रैसिकेसी	सरसों	लाई पत्ता	तेल
44	*सैकैरम ऑफीसिनेरम* (लिनिअस)	पोएसी	गन्ना	जेलियांग	लिवर विकार और पेय पदार्थ
45	*मैलस इंडिका* (वालिच) बी.बी.लिउ	रोज़ेसी	जंगली सेब	फक्सी	एंटीऑक्सिडेंट
46	*मैनिहट एस्कुलेंटा* क्रांतज़	यूफॉर्बिएसी	कसावा	आलू घास	उच्च रक्तचाप एवं सिरदर्द में
47	*साइक्योस ऐडुलिस* जैक्विन	कुकुरबिटेसी	चायोट	स्क्वाश	सौन्दर्य-प्रसाधन में
48	*हिबिस्कस सुराटेन्सिस* (लिनिअस)	मालवेसी	जंगली गुड़हल	टेंगर	आंत्र रोग
49	*जिजिफस जुजुबा* मिलर	रैम्नेसी	चाईनीज खजूर	बुगारी	त्वचा के घाव में उपयोगी
50	*पेरिला फ्रुटसेंस* (लिनिअस) ब्रिटन	लैमिएसी	चीनी तुलसी	अकीनी (सुमी)	औषधीय उपयोग

नागालैंड की जैव विविधता केवल प्राकृतिक संपदा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और आर्थिक रूप से भी अमूल्य है। इन पौधों में छिपा पारंपरिक ज्ञान हमें न केवल आय का साधन देता है, बल्कि स्वास्थ्य व पर्यावरण संतुलन में भी सहायक है। अतः इनका संरक्षण, अनुसंधान एवं सतत उपयोग अत्यंत आवश्यक है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 45-46 (2025)

ब्यूटिया पेलिटा (पटवा): कुमाऊं क्षेत्र की एक स्थानिक और अत्यधिक संकटापन्न प्रजाति का ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा गुणन

गिरिराज सिंह पँवार व भावना जोशी

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केंद्र, देहरादून

ब्यूटिया पेलिटा जे.डी. हूकर के बाद प्रैन, जिसे पहले *मीज़ोट्रोपिस पेलिटा* (जे.डी. हूकर के बाद प्रैन) संजप्पा के नाम से जाना जाता था, फैबेसी कुल की एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थानिक और अत्यधिक संकटापन्न प्रजाति है। यह प्रजाति कुमाऊं मंडल के पटवा डांगर क्षेत्र में पाए जाने के कारण इसे स्थानिक भाषा में 'पटवा' के नाम से जाना जाता है और यह इस क्षेत्र की एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रजाति है। बढ़ती जनसंख्या के दबाव और आवास क्षरण के कारण वर्तमान में यह प्रजाति प्रकृति में विलुप्त होने की कगार पर है। एक शोध के अनुसार इस प्रजाति के मात्र 150-300 पौधे ही शेष रह गए हैं। यह प्रजाति पूरे भारत में एक जगह से ही वर्णित है, इसलिए यह कुमाऊं मंडल की एक स्थानिक प्रजाति के रूप में शामिल है।

जलवायु एवं प्राकृतिकवास: *बी. पेलिटा* मूल रूप से नैनीताल जिले के पटवा डांगर गाँव में पाया जाता है, इसलिए इसे स्थानीय बोलचाल की भाषा में पटवा के नाम से भी जाना जाता है। यह समतल पहाड़ी चोटियों और ढलान वाले क्षेत्रों के पास घाटियों में उगता है। *बी. पेलिटा* की आबादी पटवा डांगर नामक एक ही स्थान से रिपोर्ट की गई है, इसलिए इसे कुमाऊँ क्षेत्र की स्थानिक प्रजाति माना जाता है। इस प्रजाति की सीमित आबादी और स्थानिक प्रकृति विभिन्न कारकों जैसे जंगल की आग, जलवायु परिवर्तन और आवास विनाश आदि के कारण है, जिससे यह प्रजाति विलुप्त होने के कगार पर है।

रासायनिक गुण: इस पौधे में प्राकृतिक रूप से कई सक्रिय रासायनिक तत्त्व और यौगिक जैसे फिनोल, फ्लेवोनोइड, सैपोनिन, एल्कलॉइड, टैनिन कौमारिन, क्विनोन, फ्लेवोनोड्स, अल्कोहल, एल्डिहाइड, कार्बोक्सिलिक एसिड, एल्कलॉइड, सुगंधित और हैलोजन यौगिकों की उपस्थिति है जो कई प्रकार के रोगों के उपचार में अत्यंत ही कारगर हैं।

औषधीय गुण: सक्रिय रासायनिक तत्त्व एवं यौगिकों की उपस्थिति के कारण *बी. पेलिटा* का उपयोग हर्बल औषधि के रूप में किया जाता है। इसके पत्तों के अर्क में विभिन्न रोगाणुरोधी, एंटिफंगल, एंटीऑक्सीडेंट गुण होते हैं। पटवा की स्थानिक स्थिति के कारण इस पर अध्ययन कम हुए हैं। लेकिन इसमें पाए जाने वाले सक्रिय तत्वों से इस बात का पता चलता है कि इसका उपयोग कई रोगों के उपचार और अन्य आर्थिक मूल्यों के लिए एक पारंपरिक दवा के रूप में भी किया जा सकता है।

प्रवर्धन : प्राकृतिक आवास में *बी. पेलिटा* जड़ से उगता है लेकिन सर्दियों में यह सुप्त अवस्था में चला जाता है और अप्रैल-मई के महीने में नए अंकुर फिर से उग आते हैं। लेकिन इसके बीजों की प्रकृति के कारण, जंगलों में इसकी जनसंख्या में गिरावट आ रही है। इसके अलावा, *बी. पेलिटा* एक प्रमुख प्रजाति भी है और यह संवेदनशील आवासों में ही उगती है इसलिए आगे कोई भी परिवर्तन और पारिस्थितिक गड़बड़ी होने पर इस क्षेत्र से इनके पूर्ण विलुप्त होने का कारण बन सकती है। प्राकृतिक आबादी के संरक्षण हेतु इन-विट्रो बीज अंकुरण लुप्तप्राय प्रजातियों के गुणन, संरक्षण और प्रसार विधियों पर कार्य करना अत्यंत ही आवश्यक है। ऊतक संवर्धन तकनीक से भी *बी. पेलिटा* के विशिष्ट जीनोटाइप के क्लोनल प्रसार में सहायक है।

बहिस्थानिक संरक्षण: प्रकृति में इस प्रजाति के पौधे सीमित संख्या में बचे होने और प्रजाति के स्थानिक होने के कारण इस क्षेत्र में कोई भी प्राकृतिक और मानव जनित आपदा इस प्रजाति पर भारी संकट गहरा सकती है। प्रकृति में संभावित खतरों को ध्यान में रखते हुए इन प्रजातियों को संरक्षित करने के लिए आवश्यक कदम उठाने की अत्यंत आवश्यकता है। विभिन्न संस्थानों द्वारा इस प्रजाति के संरक्षण के लिए नर्सरी तकनीक और ऊतक संवर्धन माध्यम से सार्थक कदम उठाये गए हैं। इस दिशा में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी केंद्र देहरादून में भी बहिर्स्थानिक विधि के माध्यम से प्रजाति के संरक्षण का प्रयास किया गया है। इस प्रजाति के बीज एकत्र करके नर्सरी तकनीक के माध्यम से अंकुरित किए गए। पटवा के सफल संरक्षण के लिए इन विट्रो प्रयास भी किए गए और पौधों को सफलता पूर्वक उगाया गया।

***बी. पेलिटा* का पादप ऊतक संवर्धन विधि द्वारा संरक्षण:** *बी. पेलिटा* के पौधे पर मंडराते हुए खतरों को ध्यान में रखते हुए इस प्रजाति को पादप ऊतक संवर्धन विधि द्वारा संरक्षित करके प्रकृति में इसके अस्तित्व को बचाए रखने का प्रयास किया गया है।

निष्कर्ष और भावी संभावनाएं : *ब्यूटिया पेलिटा* कुमाऊँ क्षेत्र की एक स्थानिक और अति संकटापन्न प्रजाति है। इसके सीमित वितरण और घटती जनसंख्या के कारण इस प्रजाति के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए तत्काल प्रभावी संरक्षण उपायों की आवश्यकता है। इस प्रजाति के सफल संरक्षण के लिए स्वस्थानिक संरक्षण उपायों के अलावा, बहिस्र्थानिक प्रयास भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। राज्य वन विभाग, अनुसंधान संस्थानों, गैर-सरकारी संगठनों और स्थानीय समुदाय द्वारा विशेष प्रजाति पुनर्प्राप्ति कार्यक्रम शुरू किए जाने की आवश्यकता है। साथ ही प्रजातियों के आवास के विस्तार और सफल संरक्षण के लिए ऐसे उपयुक्त आवासों का सर्वेक्षण किया जाना चाहिए जहाँ यह प्रजाति सफलतापूर्वक विकसित हो सकें।

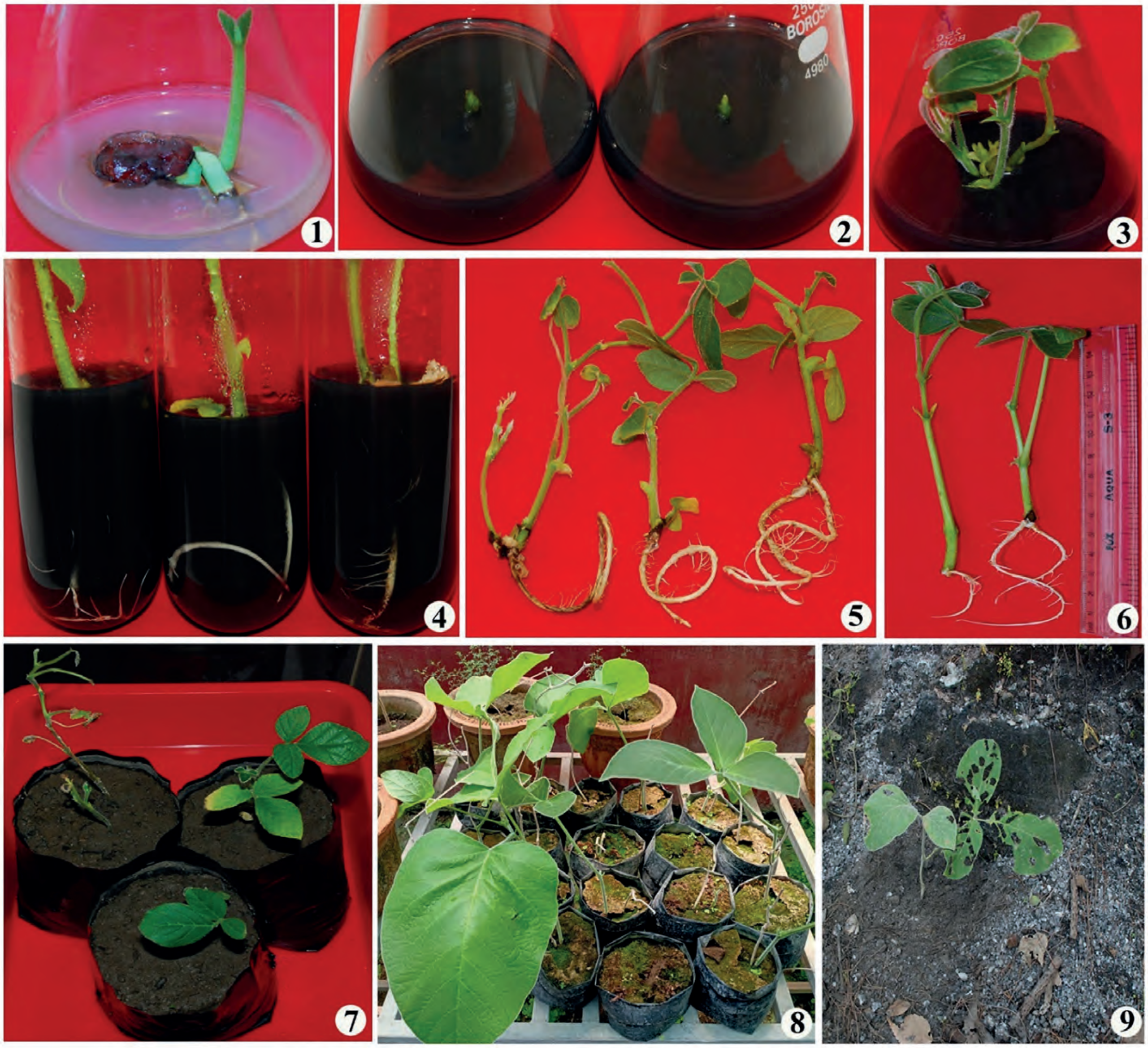

चित्र: *ब्यूटिया पेलिटा* एक स्थानिक और अत्यधिक संकटापन्न प्रजाति का ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा गुणन

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 47-50 (2025)

दो रोडोडेंड्रॉन की कहानी: उत्तराखंड और सिक्किम के राजकीय वृक्षों के बीच अंतर

[1]सत्तम दासगुप्ता, [1]कंकना चक्रवर्ती व [2]सेंउति चौधुरी

[1]ए.जे.सी. बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा, पश्चिम बंगाल
[2]केंद्रीय वनस्पति प्रयोगशाला,भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा, पश्चिम बंगाल

रोडोडेंड्रॉन वंश ऐरिकेसी कुल से संबंधित है और इसका वर्णन पहली बार कार्ल लिनिअस ने 1737 में जेनेरा प्लांटेरम में किया था। 'रोडोडेंड्रॉन' शब्द ग्रीक मूल का है, जिसमें 'रोडो' का अर्थ गुलाब और 'डेंड्रोन' का अर्थ वृक्ष है। रोडोडेंड्रॉन प्रजाति की दुनिया भर में लगभग 1000 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जो मुख्यतः उत्तराखंड, सिक्किम हिमालय और नेपाल, भारत, चीन (यूनान और सिचुआन के पूर्व में) और मलेशिया के उच्चभूमि क्षेत्रों में फैली हुई हैं। हिमालय की ढलानों के बीच, अपने जीवंत रंग के कारण, भारत में रोडोडेंड्रॉन की लगभग 80 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से 39 प्रजातियाँ सिक्किम के छोटे से राज्य में पाई जाती हैं, जिससे यह क्षेत्र रोडोडेंड्रॉन प्रजातियों का एक महत्वपूर्ण भंडार माना जाता है। हिमालयी क्षेत्र में इस हिमालयी समशीतोष्ण पुष्पीय पौधे की प्रचुर उपलब्धता इसे नेपाल का राष्ट्रीय पुष्प बनाती है। वहीं भारतीय राज्यों में से कुछ ने लाल रोडोडेंड्रॉन (*रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम*) को नागालैंड का राजकीय पुष्प और उत्तराखंड का राजकीय वृक्ष और *रोडोडेंड्रॉन निविअम* को सिक्किम का राजकीय वृक्ष घोषित किया है। हिमालय की विशालता में, जहाँ प्रकृति जीवन को अद्भुत रूपों में ढालती है, रोडोडेंड्रॉन का खिलना वसंत के आगमन की घोषणा करता है। रोडोडेंड्रॉन के जंगल कई वन्यजीव प्रजातियों के लिए आवास प्रदान करते हैं, जिनमें केवल इसी क्षेत्र में पाई जाने वाली स्थानीय पक्षियों की आबादी भी शामिल है, जिससे जैव विविधता और पारिस्थितिकीय समृद्धि को बनाए रखने में मदद मिलती है। सुंदर फूलों और सजावटी गुणों के अलावा, यह पौधा अपने औषधीय, सुगंधित और स्वादिष्ट गुणों के लिए भी जाना जाता है। अपने विविध उपयोगों के कारण, इसका एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक मूल्य है।

ये दो प्रतीकात्मक रोडोडेंड्रॉन प्रजातियाँ - *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम* और *रोडोडेंड्रॉन निविअम*, अपने-अपने राज्यों के गौरवशाली पुष्प प्रहरी हैं और सांस्कृतिक श्रद्धा का भी प्रतिनिधित्व करती हैं। हालाँकि ये दोनों प्रजातियाँ एक ही वंश से आती हैं, फिर भी ये दोनों प्रजातियाँ अलग-अलग आकारिकी विशेषताएँ प्रदर्शित करती हैं, जो उनके अलग-अलग ऊंचाई वाले आवासों और जलवायु परिस्थितियों के कारण आकार लेती हैं।

रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम: यह सबसे भव्य और प्रभावशाली रोडोडेंड्रॉन प्रजातियों में से एक है। इसके आकार, कठोरता, फूलों के रंग और पत्तियों की विशेषताएँ अलग-अलग होती हैं। इसकी प्रजाति का नाम 'आर्बोरियम' है जिसका अर्थ है पेड़ जैसा। *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम*, जिसे नेपाली में 'लाली गुराँस', गढ़वाली में 'बुरांस', कुमाऊँनी में 'एरस', पंजाबी में 'अद्रवाल', तमिल में 'बिल्ली', कन्नड़ में 'पु' और मलयालम में 'कट्टुपूवरसु' के नाम से भी जाना जाता है। यह एक बहुवर्षीय, अधिक शाखाओं वाला वृक्ष है जिस पर मार्च-अप्रैल के दौरान गहरे लाल या किरमिजी से लेकर हल्के गुलाबी रंग के फूल लगते हैं। यह पौधा हल्की (रेतीली) से मध्यम (दोमट) मिट्टी में उगना पसंद करता है और इसे काफी नम और अम्लीय मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके सौंदर्यपरक रूप से मनमोहक फूल इसके धार्मिक महत्व का कारण हैं; इसे पवित्र माना जाता है और मंदिरों में सजावट के लिए चढ़ाया जाता है। इस पौधे का नाम विश्व के सबसे बड़े खिताब गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में दर्ज है और यह अपने औषधीय लाभों और आर्थिक मूल्य के लिए व्यापक रूप से लोकप्रिय है। इस फूल के महत्त्व के कारण भारतीय डाक विभाग द्वारा एक डाक टिकट जारी किया गया था।

जंगली प्रजाति *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम*

जंगली प्रजाति *रोडोडेंड्रॉन निविअम*

रोडोडेंड्रॉन निविअम: इस प्रजाति का नाम निविअम लैटिन शब्द 'निवैलिस' से लिया गया है, जिसका अर्थ बर्फीला होता है, जो इस पौधे की विशेषता वाले सफेद घनरोमिल युवा अंकुर और शाखाओं को संदर्भित करता है, इसलिए इसे 'स्नो बेल रोडोडेंड्रॉन' भी कहा जाता है। सिक्किम में इसे 'ह्यून-पेटे गुरन्स' या 'स्नो लीफ' के नाम से भी जाना जाता है। यह सुंदर बैंगनी रंग का फूल वाला एक पेड़ है जो 6 मीटर तक ऊँचा और बहुत शाखाओं वाला हो सकता है, यह हिमालय का मूल निवासी है, विशेष रूप से भारत के सिक्किम क्षेत्र में पाया जाता है। सिक्किम के राज्य वृक्ष के रूप में, इस प्रजाति का सांस्कृतिक और पारिस्थितिक महत्व बहुत अधिक है। इसके शानदार फूल और अनूठी विशेषताएं इसे हिमालयी वनस्पतियों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनाती हैं। दुर्भाग्यवश, यह प्रजाति अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है, जिनमें आवास का नुकसान और जनसंख्या में गिरावट शामिल है, जिसके कारण इसे संरक्षण के लिए प्राथमिकता दी गई है।

रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम आमतौर पर एक सदाबहार, अधिक शाखाओं वाला पेड़ होता है, जो आदर्श परिस्थितियों में 14 मीटर तक की ऊंचाई और 2.4 मीटर की परिधि तक पहुँच सकता है। दूसरी ओर, *रोडोडेंड्रॉन निविअम* अधिक सघन होता है, जो आमतौर पर एक छोटी सदाबहार झाड़ी या छोटे पेड़ के रूप में उगता है, जिसकी ऊंचाई शायद ही कभी 5-6 मीटर से अधिक होती है। *आर. आर्बोरियम* की पत्तियाँ आयताकार या अण्डाकार-भालाकार, आमतौर पर 10-20 सेमी लंबी और 3.6 सेमी चौड़ी, चमड़े जैसी बनावट वाली होती हैं। ऊपरी सतह गहरे हरे रंग की और चमकदार होती है जिसमें गहरी उभरी हुई शिराएँ होती हैं, जबकि निचला भाग विशिष्ट रूप से चांदी जैसा, हलके पीले रंग का, दालचीनी या जंग लगे भूरे रंग का होता है, जो अक्सर घने शल्कों या इन्ड्यूमेंटम से ढका होता है जो इसे हल्की धात्विक चमक प्रदान करता है। *आर. निविअम* की पत्तियाँ आयताकार-भालाकार से लेकर संकीर्ण अण्डाकार-तिरछी होती हैं, जिनकी लंबाई 8-20 सेमी और चौड़ाई 2.8-6.0 सेमी होती है। पत्तियों की ऊपरी सतह गहरे हरे रंग की और चिकनी होती है, जबकि निचली सतह दोहरी परत वाली चांदी या भूरे रंग की परत से ढकी होती है, जिसके ऊपर और नीचे तंत्रिकाएँ उभरी हुई होती हैं। *आर. आर्बोरियम* की तुलना में ऊपरी सतह फीकी और कम चमकदार होती है।

जंगली प्रजाति *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम*

शायद सबसे आकर्षक अंतर उनके फूलों में निहित है—प्रत्येक प्रजाति एक अनूठी रंग-रूप और संरचना प्रदान करती है। *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम* के फूल चटक लाल से गहरे लाल रंग के होते हैं जिन पर सफेद निशान होते हैं, कभी-कभी ऊंचाई पर गुलाबी या सफेद भी। ऐसा बताया गया है कि इस रोडोडेंड्रॉन के चमकीले लाल रूप आमतौर पर निचली ऊंचाई पर पाए जाते हैं। फूल आकर्षक, लाल रंग के, घने गोलाकार समूहों में होते हैं। बाह्यदलपुंज-बारीक दरार वाला, दलपुंज-धब्बेदार कीप के आकार का, पुंकेसर-अधोमुख अवरोही, तंतु रेशेदार, परागकोष-अंडाकार, वर्तिका-सिर के आकार का होता है। *रोडोडेंड्रॉन निविअम* बकाइन से गहरे बैंगनी रंग के फूल देता है, जो रोडोडेंड्रॉन में एक दुर्लभ रंग है। फूल बड़े होते हैं, लगभग 5-6 सेमी व्यास के और 15-25 फूलों के घने, गोलाकार गुच्छों में लगते हैं। इनकी पंखुड़ियाँ मखमली होती

हैं और भीतरी भाग अक्सर धब्बेदार या धारीदार होता है, जो इनके सजावटी आकर्षण को बढ़ाता है। रेकिस भूरे रंग के टोमेंटोज़ रोमों से घनी होती है। सहपत्र मोटे तौर पर अंडाकार से गोलाकार या आयताकार होते हैं, जिनकी लंबाई 1.5-2.0 सेमी और चौड़ाई 1.0-1.5 सेमी होती है, और बाहरी सतह सुनहरे रोएँदार होती है।

रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम और *रोडोडेंड्रॉन निविअम* विशिष्ट पारिस्थितिक क्षेत्रों में पनपते हैं। *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम* आमतौर पर पश्चिमी हिमालय के मध्य-ऊंचाई वाले जंगलों में, विशेष रूप से उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और नेपाल में, समुद्र तल से 1,500-3,000 मीटर की ऊंचाई पर पाया जाता है। *रोडोडेंड्रॉन निविअम* पूर्वी हिमालय क्षेत्र, विशेष रूप से सिक्किम, भूटान और तिब्बत के कुछ हिस्सों में, आमतौर पर 2500-4,000 मीटर की ऊंचाई पर, उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों का मूल निवासी है। दोनों प्रजातियाँ स्थानीय परंपरा और जैव विविधता में विशेष स्थान रखती हैं। हालाँकि *आर. आर्बोरियम* अपने औषधीय और पाककला संबंधी उपयोगों के लिए प्रसिद्ध है, लेकिन यह वृक्ष लोकगीतों और अनुष्ठानों में भी दिखाई देता है, जो शक्ति और सौंदर्य का प्रतीक है। *आर. निविअम*, अपने सीमित आवास के कारण दैनिक जीवन में कम प्रचलित होने के बावजूद, सिक्किमी संस्कृति में पवित्रता और लचीलेपन के प्रतीक के रूप में मनाया जाता है। यह अपनी सौंदर्यात्मक अपील के लिए बहुमूल्य है और अक्सर वनस्पति उद्यानों और संरक्षण क्षेत्रों में प्रदर्शित किया जाता है।

रोडोडेंड्रॉन निविअम का प्राकृतिक आवास

आर. आर्बोरियम सबसे व्यापक रूप से फैली रोडोडेंड्रॉन प्रजातियों में से एक है और इसका पारिस्थितिक, नृवंश-वानस्पतिक और सांस्कृतिक महत्व बहुत अधिक है। परंपरागत रूप से, इस पौधे के विभिन्न भागों का उपयोग अमीबी पेचिश, नाक से खून आना, बुखार, घाव भरने और गठिया जैसी कई बीमारियों के इलाज के लिए किया जाता है। इस पौधे की प्रजाति के फूलों, पत्तियों और छाल की जाँच के दौरान विभिन्न फाइटोकेमिकल्स को पृथक किया गया है और पहचाना गया है। यद्यपि आर. *निविअम* को मुख्यतः इसके समृद्ध सांस्कृतिक और सौंदर्यपरक महत्व के लिए जाना जाता है, लेकिन इसका उपयोग भोजन और पारंपरिक औषधि के रूप में भी किया जाता है। *आर. आर्बोरियम* के फूल खाने योग्य होते हैं और इनका उपयोग ताज़ा पेय बनाने में किया जाता है। इनका उपयोग पारंपरिक रूप से जैम, जेली और स्थानीय पेय (शरबत) बनाने में किया जाता रहा है। पहाड़ी क्षेत्रों में ऊंचाई से होने वाली बीमारियों की रोकथाम के लिए स्थानीय शरबत को बहुत प्रभावी माना जाता था। ताज़े फूलों का उपयोग दस्त, पेट दर्द और अपच के इलाज के लिए किया जाता है। फूलों का रस या स्क्वैश मधुमेह और मासिक धर्म संबंधी विकारों के उपचार में अत्यधिक प्रभावकारी होता है। पारंपरिक रूप से, फूलों के रस और स्क्वैश का उपयोग हृदय टॉनिक के रूप में और कुछ हृदय रोगों के उपचार के लिए भी किया जाता है। इसकी पत्तियों को पारंपरिक रूप से सिरदर्द से राहत पाने के लिए माथे पर लगाया जाता है। होम्योपैथी में गठिया और गठिया के इलाज में सूखी पत्तियों के टिंचर का उपयोग किया जाता है। नागालैंड में, इस पौधे की

रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम का प्राकृतिक आवास

जड़ों के काढ़े का उपयोग कैंसर के शुरुआती चरणों के इलाज के लिए किया जाता है। *आर. निविअम* के फूलों का उपयोग जूस, जैम, अचार, सिरप और स्क्वैश बनाने के लिए भी किया जाता है, जिन्हें स्थानीय व्यंजन माना जाता है। यह पौधा विभिन्न फाइटोकेमिकल यौगिकों से समृद्ध है और पारंपरिक रूप से दस्त, सिरदर्द, सूजन और जीवाणु एवं फंगल संक्रमण जैसी कई बीमारियों के इलाज के लिए उपयोग किया जाता है।

आर. आर्बोरियम हिमालय के कई पारिस्थितिक तंत्रों में एक महत्वपूर्ण कीस्टोन प्रजाति है। शुरुआती वसंत से शुरुआती गर्मियों तक प्रचुर मात्रा में पुष्पन और अच्छी परागकण सामग्री के कारण, ये पौधे कीटों और पक्षियों की परागणकारी आबादी की एक विस्तृत श्रृंखला को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके घने पत्ते छोटे स्तनधारियों और पक्षियों को आश्रय भी प्रदान करते हैं। *रोडोडेंड्रॉन निविअम* कुछ अन्य प्रजातियों के साथ सिक्किम, विशेष रूप से उत्तरी सिक्किम में, मार्च से मई तक अपने पुष्पन के समय, इको-टूरिज्म को बढ़ावा देने में भी प्रमुख भूमिका निभाता है और इस प्रकार स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने में मदद करता है। यह पौधा हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र का भी एक हिस्सा है। आश्रय प्रदान करने के अलावा, पुष्पन के समय ये परागण के लिए पक्षियों और कीटों को आकर्षित करते हैं और उन्हें परागकण प्रदान करते हैं। लेकिन हाल के वर्षों में, आवास के नुकसान और जलवायु परिवर्तन के कारण *आर. निविअम* की घटती आबादी ने इसे संरक्षण के लिए प्राथमिकता बना दिया है। वनस्पति जगत में संबंधी होने के बावजूद, *रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम* और *रोडोडेंड्रॉन निविअम* अपने भूदृश्यों द्वारा विशिष्ट, सुंदर अकारिकीय भिन्नताएँ दर्शाते हैं। पहला उत्तराखंड की समशीतोष्ण पहाड़ियों में एक ज्वलंत मशाल की तरह पनपता है, जबकि दूसरा सिक्किम की धुंध भरी ऊँचाइयों में एक शाही रत्न की तरह चमकता है। उनके रूपात्मक अंतर—चाहे आकार, रंग, पत्ती की संरचना, या पुष्प विशेषताओं में—न केवल हिमालयी वनस्पतियों की आकर्षक सुग्रहिता को दर्शाते हैं, बल्कि भारत के पर्वतीय पारिस्थितिक तंत्रों की पारिस्थितिक विविधता को भी रेखांकित करते हैं। ऐसे समय में जैव विविधता पर खतरा बढ़ता जा रहा है, इन राज्य वृक्षों का उत्सव मनाना एक प्रतीकात्मक संकेत से कहीं अधिक है जो हमारी जीवित प्राकृतिक विरासत की रक्षा करने के हमारे कर्तव्य की याद दिलाता है।

रोडोडेंड्रॉन आर्बोरियम का प्राकृतिक आवास

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 51-53 (2025)

नेपेन्थीज खासियाना जे.डी. हूकर की पारिस्थितिकी एवं रूपात्मक अनुकूलन : वितरण, पोषण, रणनीतियां, उपयोग तथा संरक्षण दृष्टिकोण

विजय[1], एल. आर. मैती[2], डेविड एल. बियते[1], छाया देओरी[1] व एन.ऑडियो[1]

[1]भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग, मेघालय
[2]भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय राष्ट्रीय पाद्पालय, हावड़ा

कीटभक्षी पौधों की लगभग 700 प्रजातियों का प्रलेखन कर लिया गया है जो द्विबीजपत्री पौधों के 9 कुलों के अंतर्गत 15 वंशों से संबंधित हैं। दिलचस्प बात यह है कि पूर्वोत्तर भारत में इनकी 21 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इस क्षेत्र में छद्म मांसाहारी पौधों का पूर्वज *प्लम्बैगो जेलेनिका* भी पाया जाता है, जिसे अक्सर जानलेवा पौधा कहा जाता है। नेपेन्थीज वंश, जिसे उष्णकटिबंधीय पिचर प्लांट्स के नाम से जाना जाता है, मोनोटाइपिक नेपेन्थेसी कुल का एकमात्र वंश है और यह कीटभक्षी पौधों के सबसे बड़े वंशों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस वंश में लगभग 134 प्रजातियाँ शामिल हैं, जिनमें कई प्राकृतिक और कई संवर्धित संकर प्रजातियाँ शामिल हैं। यह वंश मुख्यतः मलय द्वीपसमूह में वितरित है, जिसमें बोर्नियो, सुमात्रा, मेडागास्कर, श्रीलंका, मलेशिया, न्यू गिनी, थाईलैंड, वियतनाम, ऑस्ट्रेलिया, फिलीपींस और भारत जैसे क्षेत्रों में इसकी सबसे अधिक विविधता पाई जाती है। इनमें से कई क्षेत्रों में स्थानिक (स्थानीय) प्रजातियाँ भी पाई जाती हैं।

नेपेन्थीज खासियाना जे.डी. हूकर : उष्णकटिबंधीय पिचर प्लांट या मंकी कप के रूप में लोकप्रिय, एकलप्ररूपी कुल नेपेंथेसी से संबंधित है, जिसकी दुनिया भर में 127 प्राकृतिक और संकर प्रजातियां उपलब्ध हैं। इंडो-मलेशिया को नेपेन्थीज वंश के विकास का केंद्र माना जाता है। 'नेपेन्थीज' का शाब्दिक अर्थ है 'बिना शोक के' और ग्रीक पौराणिक कथाओं में, यह एक ऐसी औषधि है जो सभी दुखों को भुलाकर उन्हें दूर कर देती है। इस प्रजाति का लोकप्रिय नाम 'मंकी कप्स' इस तथ्य के कारण है कि बंदरों को इन पौधों से वर्षा जल पीते देखा गया है। यह कीटभक्षी पौधे की एकमात्र देशी भारतीय प्रजाति है जो मेघालय के गारो, खासी और जयंतिया पहाड़ियों में स्थानिक है। यह पौधा सामान्यतः समुंद्र तल से 565–1400 मीटर की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से उगता है। इसकी उपस्थिति मेघालय के कई विशिष्ट क्षेत्रों जैसे जयंतिया पहाड़ियाँ: जोवाई, जराईन, उमरादक्षिण; गारो पहाड़ियाँ: बाघमारा, बलपक्रम, महेशकोलापूर्वी; खासी पहाड़ियाँ: लवाबा, मावलिनोंग में दर्ज की गई है। मेघालय के स्थानीय समुदायों का इस पौधे से गहरा पारंपरिक संबंध है। खासी जनजाति के लोग इसे " तियू-राकोट" कहते है, जिसका अर्थ है — "भक्षण करने वाला पौधा"। जयंतिया जनजाति के लोग इसे "केसट-फारे" के नाम से जानती है, जिसका अर्थ है — "ढक्कन वाला मक्खी का जाल" तथा गारो जनजाति में इसका नाम है "मे मांग कोकसी", जिसका अर्थ है — "भूत की टोकरी"।

नेपेन्थीज प्रजातियाँ ज़्यादातर बहुत आर्द्र जलवायु की प्राकृतिक वनस्पति से जुड़े होते हैं। सामान्यतः अम्लीय, नम और पोषक तत्वों से विपन्न मिट्टी में उगती हैं। यह मिट्टी प्रायः पीट, सफेद रेत, बलुआ पत्थर या ज्वालामुखीय राख/मिट्टी से बनी होती है और ऐसे स्थलों पर वातावरण सामान्यतः हल्का, आर्द्र और हवादार होता है। इस पौधे की जड़ प्रणाली सतही (उथली) होती है, जो मिट्टी में केवल कुछ सेंटीमीटर तक ही पहुँच पाती है। यह एक चढ़ाई करने वाली या रेंगने वाली बेल के रूप में बढ़ता है, जिसकी लंबाई कुछ सेंटीमीटर से लेकर कई मीटर तक हो सकती है।

शिकार आकर्षण और पकड़ने की रणनीति: इस पौधे की सबसे विशिष्ट विशेषता इनकी कीड़े और अन्य छोटे जीवों को पकड़ने व पचाने की असाधारण क्षमता होती है। ये पौधें अपनी इन क्षमताओं का उपयोग आकर्षक रंग, शर्करा-युक्त रसमीठी सुगंध, विशिष्ट जाल-जैसी संरचना, चिपचिपे बाल, संवेदनशील स्पर्श तंत्र आदि के रूप में करतें है। इन विशेषताओं की मदद से ये पौधे शिकार को आकर्षित कर पिचर में गिरा लेते हैं, जहाँ वे फिसलकर पाचन द्रव में गिरते हैं और वहीं पच जाते हैं। नेपेन्थीज पौधे ऐसे पोषक तत्वों की कमी वाली मृदा में उगते हैं, जिनमें विशेषतः नाइट्रोजन और फास्फोरस की कमी होती है। इसलिए ये पौधे अपने शिकार (विशेषतः कीड़े और आर्थ्रोपोड्स) से इन पोषक तत्वों को प्राप्त करते हैं, जिससे उनका विकास और अस्तित्व संभव हो पाता है। इनके प्रमुख शिकार चींटियाँ, मक्खियाँ, अन्य कीट तथा

आर्थ्रोपोड्स का एक प्रचुर और विविध समूह होतें है। कीड़ों को पकड़ने के लिए, उन्होंने जाल को बंद करने, आकर्षक घड़े बनाने, संवेदनशील चिपचिपे बालों का उपयोग करने या स्पर्शकों से पकड़ने जैसी अजीबोगरीब प्रणालियां विकसित की हैं।

औषधीय महत्व एवं पारंपरिक उपयोग: इस प्रजाति का पारंपरिक, सजावटी और सौंदर्यपरक मूल्य के अलावा नृजातीय औषधीय महत्व भी है। इस पौधे की एक विशेषता यह भी है कि इसमें नैफ्थोक्विनोन नामक जैवसक्रिय यौगिक का संश्लेषण होता है, जो एक शक्तिशाली कवकरोधी कारक है। मेघालय के स्थानीय लोग कई बीमारियों के इलाज में इसका उपयोग करते हैं। खासी और गारो जनजातियाँ बंद घड़े के रस का उपयोग मोतियाबिंद और रतौंधी के इलाज के लिए आँखों की बूंदों के रूप में, साथ ही पेट की समस्याओं, मधुमेह, कान और स्त्री रोग संबंधी समस्याओं के इलाज में करती थीं। इसके जड़ों और घड़े के चूर्ण का उपयोग विभिन्न त्वचा रोगों के इलाज में किया जाता है। घड़े का रस, कुचले हुए कीड़ों के साथ मिलाकर हैजा के रोगियों को दिया जाता है। घड़े और उसकी सामग्री का लेप विशेष रूप से कुष्ठ रोग के उपचार में सहायक माना गया है। इसकी पत्तियों का मेथनॉल अर्क शक्तिशाली यकृत-सुरक्षात्मक गुणों से युक्त है, जिससे यह यकृत की क्षति से बचाव में कारगर हो सकता है। यह अर्क मधुमेह के उपचार में भी उपयोगी पाया गया है। हालाँकि, अब तक इनका उपयोग केवल सौंदर्य प्रयोजनों तक ही सीमित रहा है क्योंकि इनका सजावटी मूल्य अधिक है।

वर्तमान स्थिति एवं संरक्षण: पिछले कुछ दशकों में मानवीय गतिविधियों विशेषतः व्यापक खनन, झूम खेती तथा अत्यधिक संग्रहण के कारण नेपेन्थीज की जंगली आबादी में चिंताजनक गिरावट देखी गई है। आवास विनाश इस प्रजाति के समक्ष सबसे बड़े खतरों में से एक है, विशेषकर जैंतिया और गारो पहाड़ियों में, जहाँ कोयला खनन इसके प्राकृतिक आवास को नष्ट कर रहा है और आबादी में भारी कमी का कारण बन रहा है। इसके अतिरिक्त, अत्यधिक संग्रहण, विकासात्मक गतिविधियाँ, वनों की अंधाधुंध कटाई, आवास विखंडन, अपशिष्ट व प्रदूषकों का बढ़ता स्तर, जंगल की आग तथा झूम खेती भी इसके प्राकृतिक आवासों को प्रभावित कर रहे हैं। इसके अलावा, बीजों की कमजोर अंकुरण क्षमता भी इसके पुनरुत्पादन को बाधित करती है, जिससे जनसंख्या पुनर्स्थापन की दर धीमी हो जाती है। इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप, नेपेन्थीज प्रजाति पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हो गई है और इसमें उच्च अल्पायु मृत्यु दर देखी जा रही है, जिससे इसकी विलुप्ति की संभावना भी बढ़ गई है। इसे 'लुप्तप्राय' श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है। यह प्रजाति केवल मेघालय के कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है। हालाँकि इस पौधे के संरक्षण के लिए विभिन्न पहल की गई हैं, लेकिन सफलता स्थानीय समुदायों के प्रयासों पर निर्भर करती है।

नेपेन्थीज (पिचर प्लांट) मेघालय का एक दुर्लभ एवं प्रतीकात्मक पौधा है, जिसे राज्य की जैव विविधता की धरोहर माना जाता है। इसके महत्व को देखते हुए, राज्य सरकार तथा संबंधित संस्थान न केवल इसके संरक्षण हेतु प्रयासरत हैं, बल्कि इसके दीर्घकालिक रखरखाव एवं पुनरुत्पादन को भी सुनिश्चित कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग, द्वारा इस प्रजाति को पिछले 37 वर्षों से राष्ट्रीय ऑर्किडेरियम और बारापानी के प्रायोगिक उद्यान में उगाया, संरक्षित और पोषित किया जा रहा है। यह प्रजाति प्राकृतिक परिस्थितियों में प्रजनन में अत्यधिक कठिनाई का सामना करती है। नेपेन्थीज (पिचर प्लांट) के बीजों को अंकुरित होने में लगभग 223 दिन लगते हैं और अंकुरण दर भी अत्यंत न्यून होती है। इस कारण, इसकी प्राकृतिक पुनरुत्पादन क्षमता बहुत सीमित है। इन्हीं चुनौतियों के समाधान स्वरूप, इन विट्रो प्रवर्धन तकनीक एक प्रभावशाली जैव प्रौद्योगिकीय उपकरण के रूप में उभरा है। यह तकनीक इस लुप्तप्राय कीटभक्षी पौधे के जर्मप्लाज्म के संरक्षण एवं बड़े पैमाने पर गुणन हेतु उपयोग की जा रही है, जिससे इसकी दीर्घकालिक जैविक उपस्थिति सुनिश्चित की जा सके। व्यापक खनन, झूम खेती, आवास विनाश के कारण *नेपेन्थीज खासियाना* सबसे लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियों में से एक है और वर्तमान में इस पौधे की केवल कुछ आबादी ही जंगल में जीवित बची है। *नेपेन्थीज खासियाना* अपनी मूल भूमि में तेजी से कमजोर हो रहा है। हालांकि, इसके अस्तित्व के लिए मुख्य खतरा मानव संग्राहकों द्वारा उत्पन्न किया जाता है, जो पूरे पौधे को घरेलू स्तर पर बेचने के लिए उखाड़ देते हैं और चोरी-छिपे बाहर निर्यात कर देते हैं। विलुप्त होने के चरम बिंदु पर पहुंचने से पहले ही केंद्र और राज्य सरकारों ने व्यावसायिक लाभ के लिए इन पौधों के निर्यात पर प्रतिबंध लगा दिया है। व्यापार विनियमन और टिकाऊ संग्रह जैसे प्रभावी संरक्षण प्रयासों की आवश्यकता है। वर्तमान में, विभिन्न सरकारी संगठनों और संस्थानों द्वारा समय-समय पर विभिन्न इन स्वस्थानिक और बहिर्स्थानिक संरक्षण उपायों को लागू किया गया है।

चित्र: *नेपेन्थीज खासियाना* जे.डी. हूकर से सम्बंधित चित्र: A: पुष्पक्रम; B:आवास; C: पुष्पक्रम घड़ा (पिचर) व पत्ती के साथ; D: घड़ा (पिचर); E: पुष्प; F:पत्ती

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 54-59 (2025)

कोरापुट की वानस्पतिक यात्रा

जीवन सिंह जलाल और यशस्विनी राउत

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

कुछ यात्राएँ योजनाबद्ध होती हैं और कुछ अचानक शुरू हो जाती हैं। हमारी यह यात्रा भी ऐसी ही एक सहज शुरुआत थी। कोलकाता की एक उमस भरी शाम थी। कार्यों की नियमितता से मन बोझिल था और हमने सोचा कि क्यों न एक छोटे से वानस्पतिक यात्रा पर चले। कुछ सोच-विचार और चर्चाओं के बाद हमने यह तय किया कि क्यों न ओडिशा के कोरापुट की यात्रा की जाए, जहाँ की घाटियाँ और वन आज भी कई दुर्लभ वनस्पतियों को अपने भीतर समेटे हुए हैं। हम जानते थे कि यह एक छोटी यात्रा होगी, परंतु हमारे लिए इसका महत्व शोध से कहीं अधिक था क्योंकि यहाँ प्रकृति के उस छिपे सौंदर्य से साक्षात्कार होना था, जो केवल वहां जाकर ही अनुभव किया जा सकता है। चूँकि सह-लेखिका ओडिशा से हैं और वह इस क्षेत्र से अच्छी तरह से वाकिफ हैं और उनके पुराने मित्र जो विभिन्न संस्थानों में काम कर रहे हैं, वे भी हमारे साथ जुड़ गए। लेकिन मेरे लिए यह पूर्वी घाट की पहली यात्रा थी।

कोरापुट, ओडिशा राज्य का एक अनमोल भूभाग है, जिसे प्रायः राज्य की जनजातीय आत्मा कहा जाता है। यह ज़िला ओडिशा के दक्षिणी भाग में, पूर्वी घाट की पर्वतमालाओं के साथ फैला हुआ है। यहाँ घाटियों की हरियाली और सांस्कृतिक विविधता एक अद्भुत समरसता में दिखाई देती है। भौगोलिक दृष्टि से, कोरापुट की सीमाएँ कई महत्वपूर्ण जिलों से जुड़ी हुई हैं, पूर्वोत्तर में यह ओडिशा के रायगढ़ा और आंध्र प्रदेश के पर्वतिपुरम-मन्यम से घिरा है; उत्तर-पश्चिम में यह ओडिशा के नबरंगपुर और छत्तीसगढ़ के बस्तर ज़िले की सीमा को छूता है; वहीं दक्षिण में इसकी सीमाएँ ओडिशा के मलकानगिरी तथा आंध्र प्रदेश के अल्लूरी सीतारामाराजु ज़िले से मिलती हैं। यह सीमावर्ती विस्तार न केवल इस क्षेत्र को भौगोलिक विविधता प्रदान करता है, बल्कि यहाँ जनजातीय सांस्कृतिक परंपराओं, भाषाओं, वेशभूषा और लोकज्ञान का एक अद्वितीय संगम भी रचता है। यह नाम अपने आप में एक आमंत्रण है, एक वादा करता है प्रकृति और संस्कृति के उस गहन संगम से मिलने का, जिसे अभी तक हमने केवल किताबों में पढ़ा था। कोरापुट में परजा, गोंड, कंध, भूमिया, गदबा और डोंब जैसी कई प्रमुख जनजातियाँ निवास करती हैं। इन समुदायों का प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व, पारंपरिक ज्ञान और वनस्पतियों के उपयोग को लेकर उनकी गहरी समझ, हमें शोध से कहीं अधिक जीवन की एक अलग दृष्टि सिखाती है। ये केवल जंगल में रहने वाले लोग नहीं हैं, बल्कि वे वन के गुप्त संरक्षक हैं, पौधों की पहचान, औषधीय गुणों, ऋतुचक्र और टिकाऊ जीवनशैली का वह मौखिक ज्ञान जिनकी कोई लिखित पुस्तक नहीं, परंपरा है। कोरापुट की घाटियाँ, झरने और वन्य क्षेत्र आज भी कई स्थानिक पौधों और औषधीय वनस्पतियों का सुरक्षित आश्रय स्थल हैं।

रात भर की लंबी यात्रा के बाद, रेलगाड़ी की लयबद्ध आवाज़ ने मुझे धीरे-धीरे नींद से जगा दिया। सुबह की हल्की रोशनी खिड़की से छनकर अंदर आने लगी, रेलगाड़ी रायगढ़ा स्टेशन की ओर बढ़ रही थी। हवा में एक नई ताजगी थी और परिदृश्य में भी बदलाव साफ़ महसूस हो रहा था। समतल मैदान अब धीरे-धीरे हरियाली से ढकी पहाड़ियों में बदलने लगे थे। जैसे ही हमने रायगढ़ा को पार किया, ऐसा लगा मानो हम किसी दूसरी दुनिया में प्रवेश कर रहे हों। रेलगाड़ी ने अपनी रफ्तार धीमी कर ली और पूर्वी घाट की पहाड़ियों की ओर चढ़ाई शुरू कर दी। अब पटरियाँ जंगलों, ऊँचे-नीचे ढलानों और घाटियों के बीच से होकर गुजर रही थीं। रायगढ़ा से कोरापुट तक लगभग 170 किलोमीटर की यह घाटी यात्रा, प्राकृतिक सुंदरता और इंजीनियरिंग का अद्भुत संगम है। हर कुछ किलोमीटर पर रेलगाड़ी एक छोटे अंधेरे सुरंग में प्रवेश करती और फिर एक नए और भी सुंदर दृश्य के साथ बाहर निकलती। इन सुरंगों से गुजरते समय ऐसा अनुभव होता है मानो रेलगाड़ी किसी और ही संसार में प्रवेश कर रही हो। हर सुरंग के भीतर अंधकार और बाहर निकलते ही खुली घाटियाँ, झरने और हरियाली से लदी पर्वतमालाएँ प्रतीक्षा करती थीं। कुछ सुरंगें कुछ ही सेकंड की होती थीं और कुछ थोड़ी लंबी, लेकिन प्रत्येक का अपना एक अलग अनुभव था। हरी-भरी पहाड़ियाँ, सीढ़ीनुमा खेत और कोहरे से ढके जंगल एक चलती-फिरती पेंटिंग की तरह सामने आ रहे थे। मैं उस सुंदरता को देखकर खुद को रोक नहीं पाया और कोच के दरवाज़े पर खड़ा हो गया। ठंडी हवा मेरे चेहरे से टकरा रही थी और लहराती पहाड़ियों का दृश्य आँखों को सुकून दे रहा था। घाटियों में नीचे की ओर आदिवासी गाँव बिखरे हुए दिखाई दे रहे थे, मिट्टी के घर, घास की छतें और आसपास हरियाली से ढकी ज़मीन। कहीं-कहीं चट्टानों से झरने गिरते हुए दिखते थे। यह इलाका शहरी हलचल से कोसों दूर था और पूरी तरह से प्राकृतिक जीवन से भरपूर। ऐसा लग रहा था जैसे प्रकृति अपने सबसे गुप्त रहस्य हमें दिखा रही हो, जो इन पहाड़ियों में छिपे थे। रायगढ़ा से कोरापुट की इस मंत्रमुग्ध कर देने वाली चार घंटे की यात्रा में समय जैसे थम गया था। मैं लगातार तस्वीरें ले रहा था और हर दृश्य को अपने मन में बसा लेना चाहता था। यह सिर्फ़ एक यात्रा नहीं थी, बल्कि प्रकृति की गोद में एक आध्यात्मिक अनुभव जैसा था। जब ट्रेन कोरापुट पहुँचने वाली थी, आसमान गोधूली की सुनहरी आभा में रंग चुका था। मुझे एहसास ही नहीं हुआ कि समय कब बीत गया। रात के ठीक 8 बजे ट्रेन कोरापुट स्टेशन पर पहुँची। मैं जैसे ही प्लेटफॉर्म

पर उतरा, मेरा दिल अभी भी उन्हीं पहाड़ियों में कहीं खोया हुआ था। हमने अपना सामान समेटा और जैसे ही प्लेटफॉर्म से बाहर निकले, वहाँ की शीतल और शुद्ध वायु ने जैसे आत्मीयता से हमारा स्वागत किया। यह स्पष्ट अनुभव हो रहा था कि हम किसी साधारण जगह पर नहीं आए बल्कि यह वह भूमि है जहाँ प्रकृति अब भी अपनी मौलिकता में जीवित है और जहाँ हर पौधा, हर वृक्ष, हर चट्टान एक कहानी कहता है।

यात्रा के पहले दिन की सुबह भगवान जगन्नाथ के मंत्रों और भक्ति गीतों की गूंज के साथ शुरू हुई। पहाड़ी क्षेत्र की ठंडी और धुंधभरी हवा में मंदिर परिसर के समीप रहने के कारण शंख, घंटियों और मृदंग की मधुर ध्वनि हमारे मन को आध्यात्मिक ऊर्जा से भर रही थी। यह दिन विशेष रूप से पावन भगवान जगन्नाथ की रथयात्रा का दिन था। यहाँ का सबरा श्री क्षेत्र नामक प्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर अपनी विशिष्ट पहचान और सांस्कृतिक महत्ता के लिए जाना जाता है। यह केवल एक धार्मिक स्थल नहीं, बल्कि जनजातीय समुदायों को मुख्यधारा की श्रद्धा से जोड़ने वाला एक जीवंत प्रतीक है। आज हमने कोरापुट से लगभग 60 किलोमीटर दूर स्थित बाड़ी जलप्रपात की यात्रा करने का निर्णय लिया। यह क्षेत्र पूर्वी घाट की सुरम्य पर्वत श्रृंखलाओं में बसा है और प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। हमारी यात्रा एक बेहद शांत और ठंडी सुबह से शुरू हुई, जब आसमान में बादल छाए हुए थे और वातावरण में मानसून की ताजगी घुली हुई थी। रास्ता हल्के ढलानों और हरियाली से आच्छादित घाटियों से होकर गुजर रहा था। मानसून पूरे यौवन पर था, जिसके कारण जगह-जगह छोटी-छोटी नदियाँ अपने पूरे वेग से बहती हुई दिखाई दे रही थीं। कई बार हमें ऐसे पुल पार करने पड़े जिनके नीचे झरनों जैसे स्वर में पानी बह रहा था, मानो पूरी धरती संगीत गा रही हो। सड़क के दोनों ओर छोटे-छोटे जनजातीय गाँव और सीढ़ीनुमा खेत नजर आ रहे थे। जब हम एक छोटी नदी पार कर रहे थे, तभी हमारी नजर एक चट्टान पर उग रही *पेलैटेन्थीरिया इंसेक्टिफेरा* पर पड़ी, यह एक सुंदर और दुर्लभ अधिपादपीय ऑर्किड है, जो प्रायः नमी और छायादार वातावरण में चट्टानों या वृक्षों पर उगते है।

कुछ दूरी तय करने के बाद हमने अपना वाहन रोक दिया क्योंकि सड़क के किनारे एक सुंदर और भव्य ट्री फर्न खड़ा था, मानो वह हमें देखकर मुस्कुरा रहा हो या हमारे स्वागत की प्रतीक्षा कर रहा हो। उसकी फैली हुई हरी पत्तियाँ हवा में लहराते हुए एक शांत और आकर्षक दृश्य प्रस्तुत कर रही थीं। यह दृश्य एक पल के लिए समय को थमा देने जैसा था। दुर्भाग्यवश, उस क्षेत्र का प्राकृतिक आवास काफी क्षतिग्रस्त नजर आ रहा था। आसपास के जंगलों को जलाकर और काटकर साफ किया गया था क्योंकि स्थानीय जनजातियाँ पारंपरिक कृषि पद्धति अपनाती हैं। पूर्वोत्तर भारत की तरह यहाँ भी 'झूम खेती' प्रचलित है। यह विधि जंगलों की जैव विविधता के लिए गंभीर खतरा बनती जा रही है। मैंने उस ट्री फर्न की कुछ तस्वीरें लीं और उस क्षण ऐसा लगा जैसे वह वृक्ष मौन होकर हमसे कुछ कह रहा हो — 'कृपया हमें बचाओ, हम संकट में हैं।' यह अनुभव बेहद भावुक और सोचने पर मजबूर कर देने वाला था। उसी ट्री फर्न के पास एक चट्टान का छोटा टुकड़ा जो छोटे फर्न, काई और अन्य पौधों से ढका हुआ था। उस चट्टान के नीचे जैविक मलबा जमा था, जो एक नम और आर्द्र सूक्ष्मावास का निर्माण कर रहा था। जब हमने उस स्थान का ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया, तो हमें एक दुर्लभ ज़मीनी ऑर्किड प्रजाति *काइरोस्टाइलिस पार्वीफ्लोरा* देखने को मिली। यह पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट और श्रीलंका में स्थानिक है। इसका तना बिना शाखा वाला, कमज़ोर बैंगनी रंग का, मांसल, बेलनाकार होता है। इसके पत्ते गहरे बैंगनी रंग के, हृदयाकार, मांसल होते हैं। जब इसमें फूल आते हैं तो सभी पत्ते सूख जाते हैं।

आगे बढ़ने पर हमने *लिपेरिस ओडोरेटा*, *नर्विलिया सिम्प्लेक्स* जैसे अन्य स्थलीय ऑर्किड देखे। नदी के किनारे दलदली क्षेत्र में हमने कई सामान्य पौधे देखे जैसे *बर्मनिया* प्रजाति, इम्पेशिएन्स प्रजाति और इरियोकॉलन प्रजाति। जब हम झरने की ओर पहाड़ों की खड़ी ढलानों से नीचे उतर रहे थे, तो हमें *हेमियोनिटिस ऐरीफोलिया*, *एस्पलेनियम* प्रजाति और *पिटिरोग्रैमा* जैसे कुछ खूबसूरत फर्न दिखाई दिए। नम चट्टानों में विभिन्न प्रकार के ब्रायोफाइट्स और शैवाल देखे गए जो बहुतायत से बढ़ रहे थे। यदि कोई निचले समूहों के लिए अध्ययन करना चाहता है तो इस क्षेत्र में अच्छी संभावनाएं हैं। झरने के पास हमने एक *होया* प्रजाति को *पोथॉस* प्रजाति के साथ उलझा हुआ देखा। दरअसल, *होया* इस क्षेत्र में एक बहुत ही दुर्लभ प्रजाति है। यह प्रजाति पहाड़ी क्षेत्रों में उगती है। यह वानस्पतिक अवस्था में थी, इसलिए प्रजाति की पहचान की पुष्टि नहीं हो सकी, लेकिन हो सकता है कि यह इस क्षेत्र में पाई जाने वाली प्रजाति *होया एलेक्सिकेका* हो सकती है। हमने इस प्रजाति की एक छोटी सी इकाई के टुकड़े का संग्रह बॉटेनिकल गार्डन में उगाने के लिए किया ताकि जब इसमें फूल आएं तो हम इस प्रजाति की पहचान कर सकें।

कुछ किलोमीटर पैदल चलने के बाद हम ओडिशा की सीमा पार कर आंध्र प्रदेश में प्रवेश कर गए। थोड़ी ही देर में हम एक मनमोहक स्थल, लोधा जलप्रपात के निकट पहुँच गए। यह जलप्रपात लगभग 100 मीटर की ऊँचाई से गिरता है और इसकी गर्जना दूर से ही सुनाई देती है। चारों ओर घना हरियाली से आच्छादित वातावरण और जल के गिरने की गूंज मिलकर एक अद्भुत दृश्य प्रस्तुत करते हैं। यहाँ का शांत वातावरण और गिरते जल की ताकत ने हमें प्रकृति से जुड़ने का एक अनोखा अनुभव दिया। जंगलों से होकर पहुँचना और रास्ते की रोमांचक यात्रा इस जलप्रपात को देखने के सुखद अनुभव को और भी विशेष बना देती है। शाम धीरे-धीरे अपने कदम बढ़ा रही थी और जंगल में हल्का अंधेरा छाने लगा था। चारों ओर एक शांत माहौल पसर गया था। लगभग 3 किलोमीटर की कठिन पहाड़ी चढ़ाई के बाद हम आखिरकार

सड़क के किनारे तक पहुँच सके। दिन की थकान के साथ-साथ ठंडी हवा ने हमारे शरीर को थोड़ी राहत दी। किसी तरह थके हुए कदमों और संतुष्ट दिलों के साथ हमने इस दिन की यात्रा को समाप्त किया और अपने गेस्ट हाउस लौट आए। यह दिन लंबा और थकाऊ तो था, लेकिन जो अनुभव और दृश्य हमने देखे, वे हमेशा के लिए हमारे यात्रा संस्मरणों में बस गए।

दूसरे दिन गुप्तेश्वर जाने की योजना थी। गुप्तेश्वर जैव विविधता विरासत स्थल में हमारे द्वितीय दिन का वनस्पति भ्रमण बेहद रोचक और ज्ञानवर्धक रहा। सुबह जल्दी हम कोरापुट वन प्रभाग के अंतर्गत जयपुर रेंज के घने जंगलों की ओर निकल पड़े। यह क्षेत्र पूर्वी घाट की पर्वतमालाओं का हिस्सा है और पारावड़ी तथा स्वर्गद्वार जैसी पवित्र चूना-पत्थर की गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है, जहाँ भूगर्भीय दृष्टि से महत्वपूर्ण स्टैलेक्टाइट (छत से लटकती संरचनाएँ) और स्टैलेग्माइट (जमीन से ऊपर उठती संरचनाएँ) देखी जाती हैं। जैसे-जैसे हम कठिन और पथरीले रास्तों से जंगल की गहराइयों में प्रवेश करते गए, वहाँ की जैव विविधता धीरे-धीरे हमारे सामने प्रकट होती गई। इस क्षेत्र में पाए जाने वाले वृक्षों में *माइकेलिया चंपका, टर्मिनेलिया ऐलेटा, टेरोकार्पस मार्सूपियम, ऐनोगाइसस लैटीफोलिआ* और *सिज़ीजियम क्यूमिनाइ* प्रमुख थे। ये न केवल पारिस्थितिकी की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं, बल्कि आदिवासी जीवनशैली में भी इनका विशेष स्थान है। इन पेड़ों के बीच लताओं की भी भरमार थी। हमने *नीटम उला*, *बौहिनिया वाह्लियाइ, ऐन्टेडा पुरसीथा*, *डेरिस स्कैंडेंस* और *पोथॉस स्कैंडेंस* जैसी लताओं को बड़े पैमाने पर देखा, जो पेड़ों के तनों से लिपटी हुई थीं और वन की बहुस्तरीय संरचना को दर्शा रही थीं। बांस की प्रजातियों में *डेंड्रोकैलेमस स्ट्रिक्टस* और *बैम्बूसा एरन्डिनेशिया* प्रमुख रूप से उपस्थित थीं। इनका उपयोग स्थानीय समुदाय द्वारा निर्माण, हस्तशिल्प और ईंधन के रूप में किया जाता है। जमीन पर पाए गए कुछ प्रमुख औषधीय पौधों में *ऐस्पैरागस रेसीमोसस*, *हेमीडेस्मस इंडिकस*, *एकाइरेन्थीज ऐस्पेरा*, *सोलनम वाइएरम*, *टिनोस्पोरा कॉर्डीफोलिया*, *ज़िज़िफस ओइनोप्लिया* और *मीजोस्फिरम स्वावियोलेन्स* सम्मिलित थे। नम और छायादार स्थानों में शैवाल, लिवरवॉर्ट्स और विभिन्न फर्न प्रजातियाँ जैसे *नेफ्रोलेपिस कॉर्डीफोलिया*, *ऐडिएंटम लुनुलेटम*, *ऐस्पलेनियम निडस*, *टेरिस विटेटा*, *क्रिस्टेला पैरासिटिका* और *टेक्टेरिया कोएडुनेटा* प्रचुर मात्रा में देखी गई। अदरक कुल की कई पुष्पित प्रजातियाँ भी पाई गईं जैसे *कुरकुमा ऐरोमैटिका*, *कुरकुमा कौलिना*, *जिंजिबर ज़ेरम्बेट*, *जिंजिबर नीशानम*, *ग्लोबा ओफिओग्लोसम* और *अमोमम विलोसम* ऑर्किड कुल की प्रजातियाँ जैसे *रिन्कोस्टाइलिस रेटूसा*, *ऐरीडीज मल्टीफ्लोरा*, *ऐरीडीज ओडोरेटा*, *कॉटनिया पेडन्कुलैरिस*, *लुइसिया जिलैनिका*, *स्मिटिनैंडिया माइक्रैन्था*, *सिम्बिडियम ऐलोइफोलियम*, *डेंड्रोबियम हर्बेशियम*, *डेंड्रोबियम मैक्रोस्टैकियम*, *डेंड्रोबियम ट्रांसपरेन्स*, *डेंड्रोबियम मॉस्कैटम*, *डेंड्रोबियम क्रेपिडेटम* तथा जमीन पर उगने वाली प्रजातियाँ जैसे *लिपेरिस ओडोराटा*, *नर्विलिया प्लिकेटा*, *नर्विलिया सिम्प्लेक्स*, *यूलोफिया ड्युफोसी* आदि।

दोपहर के समय हम साबरी नदी के किनारे पहुँचे, जहाँ शांत जलधारा, मृदु धूप और आसपास की हरियाली ने पूरे दिन की थकान को दूर कर दिया। यह नदी ओडिशा और छत्तीसगढ़ की सीमा बनाती है और स्थानीय कथाओं में इसका धार्मिक महत्व भी बताया गया है। यह नदी दोनों राज्यों की सीमाओं को स्पर्श करती है, एक ओर छत्तीसगढ़ का कांगेर घाटी राष्ट्रीय उद्यान और दूसरी ओर ओडिशा का गुप्तेश्वर जैव विविधता विरासत स्थल, जो पवित्र गुफाओं, घने वनों और आदिवासी संस्कृति से समृद्ध है।

गुप्तेश्वर क्षेत्र में पूरे दिन की खोजपूर्ण यात्रा के बाद, हमारी डायरी भर चुकी थी और मन रोमांच से परिपूर्ण था। ऊँचे-ऊँचे पेड़, जिनकी शाखाएँ मंद हवा में सरसराती थीं, जैसे हमें जाने नहीं देना चाहते थे, मानो उन्हें पता हो कि हमने अभी उनके रहस्यों की केवल एक झलक ही पाई है। वातावरण में अब भी गीली पत्तियों और ऑर्किड की भीनी-भीनी सुगंध बसी हुई थी। अब लौटने का समय था। हम अपनी गाड़ी में सवार हुए और कोरापुट की ओर लौटने लगे। सड़क घाटियों के किनारे से गुजर रही थी। गुप्तेश्वर का वन धीरे-धीरे अंधेरे में विलीन हो रहा था। झाड़ियों के बीच जुगनुओं की चमक अब रात के आगमन का संकेत दे रही थी। वापसी की यात्रा में अधिक शब्द नहीं थे, लेकिन हम सभी के भीतर एक गहरी श्रद्धा बस गई थी। हमने केवल वनस्पतियाँ ही नहीं, बल्कि संस्कृति, आस्था और रहस्य का जीवंत रूप देखा हो। गुप्तेश्वर ने हम पर अपनी छाप छोड़ दी थी।

जैसे ही हमारे इस छोटे लेकिन आत्मा को छू जाने वाले फील्ड ट्रिप का अंतिम दिन शुरू हुआ, हमारे कदमों में एक अजीब सी तात्कालिकता थी और दिल में एक गहरा सम्मान। कोरापुट के इन धुंध से घिरे वनों ने हमारे भीतर एक स्थायी छाप छोड़ दी थी और हम जानते थे कि आज की यात्रा केवल एक विदाई नहीं, बल्कि प्रकृति के उस अनकहे बंधन को छोड़ने जैसा था जिसे हमने इन कुछ दिनों में महसूस किया था। हमारा गंतव्य था पवित्र नागेश्वरी पहाड़ी और रहस्यमयी बालदा गुफा, जो अपनी जैव विविधता और पौराणिकता के लिए जानी जाती है। इस पहाड़ी की चोटी पर फैला विशाल लेटराइट पठार, जिसे स्थानीय लोग स्नेहपूर्वक "इंडिया मैप हिल" कहते हैं, कई दुर्लभ और अनोखे वनस्पति प्रजातियों का आश्रय स्थल है। इसके शीर्ष पर स्थित बालदा गुफा, स्थानीय आदिवासियों के लिए एक पवित्र तीर्थस्थल है, जहाँ हर वर्ष चैत्र महोत्सव के दौरान वे "डोंगर देई" देवी की पूजा करते हैं। यह परंपरा प्रकृति और आस्था के बीच एक गहरा और संतुलित संबंध दर्शाती है। चट्टानी पहाड़ियों और घासदार समतलों से होते हुए जैसे-जैसे हम आगे बढ़े, इस पठारी क्षेत्र ने अपनी जैविक संपदा हमारे सामने

खोल दी। यहां की मौसमी धाराएं और अस्थायी तालाब कई प्रकार की वनस्पतियों को आश्रय देते हैं। पठार पर वार्षिक एवं बहुवर्षीय पौधों की भरमार थी जैसे *ऐक्मेला*, *साऐनोटिस*, *एक्लिप्टा*, *एमिलिया*, *मर्डैनिया*, *लिम्नोफिला*, *फिम्ब्रीस्टाइलिस*, *ओल्डेनलैंडिया*, *स्मिथिया*, *सेंटेला एशिऐटिका (बोनाया ऑपोसिटिफोलिया)*, *होपिआ डाइकोटोमा*, *पाइलिया माइक्रोफिला*, *अमैनिया* और *रोटेला* प्रजातियाँ। झील के चारों ओर लगाया गया *ब्रगमेन्सिया स्वावियोलेंस* अपने फूलों से इस स्थान की सुंदरता को और बढ़ा देता है। यहां की समतल भूमि में *क्राइसोपोगोन ऐसिकुलेटस*, *इस्कीमम रुगोसम* और *पोगोस्टेमन* जैसी घासें मुख्य रूप से देखे गये। पठारी भूमि की परिधि में कई महत्वपूर्ण औषधीय प्रजातियाँ जैसे *सिलास्ट्रस पैनिकुलेटस*, *क्लीस्टेन्थस पैटुलस*, *डिलिनिआ पैन्टागाइना*, *लिटसिया ग्लूटिनोसा*, *मैकेरंगा पेल्टाटा*, *मैपिया निमोनियाना* और *नियोसिनैमोमम कॉडेटम* प्रचुर मात्रा में पाए गए। परंतु इस जैवविविधता पर धीरे-धीरे विदेशी आक्रामक प्रजातियों जैसे *ऐजिरेटम कोनिज़ोइडीज*, *अगेव अमेरिकाना*, *क्रोमोलिना ओडोरेटा* और *लैंटाना कैमरा* का विपरीत प्रभाव बढ़ता जा रहा है, जो पारिस्थितिकीय संतुलन को खतरे में डाल रहे हैं। सर्वेक्षण के दौरान एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थानिक और संकटग्रस्त पौधा *हाइपेरीकम गैती* देखा गया। इससे पहले यह प्रजाति केवल सिमिलिपाल (जेनबिला) और देओमाली से ही खोजी गई थी। यह अच्छी खबर है कि यह प्रजाति अब नागेश्वरी की चट्टानी ढलानों पर प्राकृतिक रूप से फलती-फूलती मिली। इसके अलावा, कीटभक्षी पौधे जैसे *ड्रोसेरा बर्मनियाइ* और *यूट्रीक्यूलेरिया बाइफिडा* नमी से भरे छोटे जलाशयों और चट्टानों की दरारों में जीवन के लिए संघर्ष करते हुए पाए गए। मानसून के आगमन के साथ यह पठार एक जीवंत रंगमंच बन जाता है, जहां चट्टानों के बीच भरे पानी के छोटे गड्ढे और धाराएँ जीवन से भर जाते हैं। यहां *हेमियोनाइटिस*, *एस्पलेनियम* और *पिटिरोग्राम्मा* जैसी फर्न प्रजातियाँ उगती हैं। शुरुआती मानसून के मौसम के दौरान इस पठार पर स्थानिक स्थलीय ऑर्किड है*बीनेरिया ग्रैंडिफ्लोरिफॉर्मिस* भी अच्छे से उगती है, जो पहले देओमाली, पंचपटमाली, और सिरीमंडा-टूरिया पर्वत क्षेत्र से ही ज्ञात थी। हाल ही में इस प्रजाति को आईसीयूएन द्वारा निकट संकटग्रस्त माना गया है। हमारे सर्वेक्षण के दौरान हमने इन प्रजातियों की आबादी का आकलन करने की कोशिश की और हमें लगभग 1000 पौधे पुष्पित-पल्लवित होते पाए गए।

परंतु यह नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र अब संकट के द्वार पर खड़ा है। खतरा वास्तविक है और बहुत निकट है। बॉक्साइट खनन, जिसने पहले ही कोरापुट की कई जैवविविधता युक्त पहाड़ियों जैसे पंचपटमाली को नष्ट कर दिया है, अब नागेश्वरी की ओर बढ़ रहा है। इसके साथ-साथ अनियंत्रित पर्यटन, पशुओं की चराई, पत्थर खनन, *यूकेलिप्टस* जैसे बाहरी पौधों का रोपण, और कृषि भूमि का विस्तार इस पारिस्थितिक संतुलन को गंभीर रूप से बिगाड़ रहे हैं। नागेश्वरी पहाड़ी केवल एक भौगोलिक संरचना नहीं, बल्कि एक जीवित जैवविविधता संग्रहालय, एक सांस्कृतिक आस्था का केंद्र और एक पारंपरिक पारिस्थितिकीय ज्ञान की निधि है। इसका संरक्षण केवल वैज्ञानिक दायित्व नहीं, बल्कि एक नैतिक जिम्मेदारी है। पर्यावरणविदों, वनस्पति विशेषज्ञों और स्थानीय समुदायों ने इस संभावित विनाश पर गहरी चिंता व्यक्त की है।

यहाँ लगभग तीन घंटे बिताने के बाद हम ओडिशा की सबसे ऊंचा पर्वत देओमाली (1762 मीटर) की ओर बढ़े, जो चंद्रगिरि-पोट्टांगी श्रेणी का हिस्सा है और कोरापुट से लगभग 70 किमी दूर है। यह पहाड़ी अपनी बॉक्साइट, चूना पत्थर और रत्नों की समृद्ध खनिज संपदा के कारण भूगर्भीय दृष्टि से जितनी महत्वपूर्ण है, उतनी ही वानस्पतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इसकी ढलानों और आसपास के क्षेत्रों में दुर्लभ, अद्वितीय और स्थानिक पौधों की कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जो यहाँ के शांत, उच्च-ऊँचाई वाले पारिस्थितिक तंत्र में फल-फूल रही हैं। यहाँ की भौगोलिक विविधता और जलवायु स्थितियाँ अनेक सूक्ष्म आवासों (माइक्रोहैबिटैट्स) का निर्माण करती हैं, जिससे यह क्षेत्र पूर्वी घाट के विशिष्ट पौधों का एक महत्वपूर्ण आश्रय स्थल बन गया है। यहाँ हमने घने जंगलों के नीचे पहाड़ी ढलानों में कुछ वृक्ष फर्न भी देखे। हमने यहाँ कुछ समय अन्य पौधों की खोज में भी बिताया और हमें *ओबेरोनिया* और कुछ स्थलीय ऑर्किड भी मिले। हमने *क्रेपिडियम वर्सिकलर* की एक अच्छी आबादी देखी। घने जंगल के अंदर सूरज की रोशनी से परे एक जगह पर हमें *एपिपोजिअम रोजिअम* नामक एक दिलचस्प सैप्रोफाइटिक ऑर्किड भी दिखाई दिया।

देओमाली में अचानक तेज बारिश शुरू हो गई और देखते ही देखते पूरी पहाड़ी घने कोहरे से ढक गई। एक समय ऐसा आया जब हम पूरी तरह से कोहरे में गुम हो गए, जैसे प्रकृति ने हमें अपनी गोद में छुपा लिया हो। इस रहस्यमय वातावरण में समय का एहसास ही नहीं हुआ और जब ध्यान गया तो लगभग तीन बज चुके थे, अब हमें कोरापुट के लिए वापस लौटना था क्योंकि हमें कोलकाता के लिए ट्रेन पकड़नी थी। लौटते समय वातावरण शांत और भावुक था। जैसे-जैसे सूर्य अस्त हो रहा था, हम कोरापुट पहुँचे, अपने सामान समेटे और रेलवे स्टेशन की ओर रवाना हुए। हमारे दो स्थानीय मित्र, जो केवल मार्गदर्शक नहीं बल्कि पूरे सफर में हमारे साथी और सहयोगी थे। यह एक अद्भुत यात्रा थी, जिसमें वनस्पति ज्ञान के साथ-साथ सांस्कृतिक अनुभवों की भी भरपूर प्राप्ति हुई। जैसे ही हम पिछले तीन दिनों की स्मृतियों को मन ही मन दोहरा रहे थे, स्टेशन पर उद्घोषणा हुई— "गाड़ी कुछ ही देर में प्लेटफॉर्म संख्या तीन पर पहुँचने वाली है।" हमारे मित्रों ने हमें ट्रेन में चढ़ने में सहायता की और हमने उन्हें हृदय से धन्यवाद देते हुए विदाई दी। यह हमारी एक छोटी-सी लेकिन सार्थक वानस्पतिक यात्रा थी। हमें आशा है कि पाठक इस लेख का आनंद लेंगे और इस सुंदर क्षेत्र की प्राकृतिक विरासत को जानने, समझने और संरक्षित करने की प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

प्लेट-1: 1. पूर्वी घाट के पर्वतों का मनोरम दृश्य; 2. फर्न वृक्ष; 3. पूर्वी घाट का एक छोटा जलप्रपात; 4. लोढ़ा जलप्रपात; 5. सीढ़ीदार खेत

प्लेट-2: 1. *एराइड्स ओडोरेटा*; 2. *क्रेपिडियम वर्सिकलर*; 3. *चेरोस्टाइलिस पार्विफ्लोरा*; 4. *डेंड्रोबियम हर्बेशियम*; 5. *डेंड्रोबियम ट्रांसपेरन्स*; 6. *एपिपोगियम रोज़म*; 7. *सिम्बिडियम एलोफोलियम*; 8. *नर्विलिया सिम्प्लेक्स*; 9. *हैबेनेरिया ग्रैंडिफ्लोरिफॉर्मिस*; 10. *पेलाटेन्थेरिया इंसेक्टिफेरा*; 11. *राइन्कोस्टाइलिस रेटुसा*

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 60-62 (2025)

आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा में पादप वर्गीकरण अनुभाग : एक परिचय

देवेन्द्र सिंह, विजय कुमार मासतकर, जे. स्वामी, कैलाश मेघवाल, बिष्णु चरण दे, राहुल देब बर्मन, दिनेश्वर कुमार साह, ज़ीशान मज़हर, रोहन मैइती, सत्तम दास गुप्ता

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा

आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा स्थित पादप वर्गिकी खंड भारत में अपनी तरह का एक अनोखा प्रयास है। इस खंड में 2 एकड़ क्षेत्र में फैले जॉर्ज बेन्थम और जोसेफ डॉल्टन हूकर की पादप वर्गिकी प्रणाली के अनुसार व्यवस्थित पौधों की प्रजातियों का अद्वितीय संग्रह है। इस खंड में भारतवर्ष में पाए जाने वाले कुल 175 कुलों से संबंधित प्रजातियों को संगृहीत एवं संरक्षित किया गया है । इस खंड में 175 कुलों (172 आवृतबीजीय, कुल- 143 द्विबीजपत्रीय और 29 एकबीजपत्रीय) और अनावृतबीजीय 3 कुलों को सम्मिलित किया गया है । इस खंड में इन कुलों से संबंधित 500 से अधिक पौधों को प्रदर्शित किया गया है । इसके

अतिरिक्त निम्न समूह के 5 विशेष खंडो (शैवाल, कवक, शैवाक, हरित्तोद्भिद और पर्णांग) से संबंधित पौधों को जिन्हें अपनी वृद्धि और विकास के लिए नम वातावरण की आवश्यकता होती है, इनके निर्दिष्ट खंड क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके एक कृत्रिम वातावरण बनाया गया है, जो कि उनकी वृद्धि एवं विकास हेतु विशेष नियंत्रित परिस्थितियां प्रदान करता हैं । प्रवेश द्वार पर जॉर्ज बेन्थम और जोसेफ डॉल्टन हूकर के पादप वर्गिकी प्रणाली की विस्तृत जानकारी को सचित्र वर्णन के साथ प्रदर्शित किया गया है। साथ ही खंड में प्रवेश करते ही बाईं ओर पौधों की वर्गिकी और उनके अभिनिर्धारण के लिए कुलों के प्राकृतिक अंगों जैसे- फूलों के विभन्न प्रकार और बनावट के साथ विषेशावली को सचित्र प्रदर्शित कर सुसज्जित किया है, जो विभिन्न विद्यालयों/ महाविद्यालयों/ संस्थानों से उद्यान में भ्रमण हेतु आने वाले विद्यार्थियों को इन पौधों की वर्गिकी को समझने के साथ ही प्रकृति में पौधों के संरक्षण की महत्ता को समझने और सीखने में विशेष रुचि उत्पन्न करता है ।

आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान में नव-विकसित पादप वर्गिकी खंड का शुभारम्भ श्री कीर्ति वर्धन सिंह, माननीय केन्द्रीय राज्य मंत्री, भारत सरकार, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के द्वारा किया गया और इसी के साथ यह जनसाधारण, शैलानियों, विद्यार्थियों और प्रकृति प्रेमियों के लिए खोल दिया गया । यह खंड भारत की वनस्पति विविधता के जीवंत विश्वकोष के रूप में कार्य करता है।

माननीय राज्य मंत्री श्री कीर्तवर्धन सिंह का भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा का दौरा

यह पादप वर्गिकी की प्राकृतिक प्रणाली पर आधारित है, जो दुनियाभर के छात्रों, शोधकर्ताओं और शिक्षाविदों सहित आगंतुकों को लाभान्वित करने के लिए एक सक्रिय एवं शैक्षणिक स्थल के रूप में विकसित किया गया है, इस खंड में प्रत्येक पौधों के कुल के साथ क्यूआरकोड भी लगाए गए हैं, जो उनकी वैज्ञानिक जानकारी, वितरण एवं पारिस्थितिकीय महत्व एवं कुलों के जीवित प्रजातियों के बारे में स्पष्ट एवं त्वरित जानकारी प्रदान करता हैं, जो डिजिटल इंडिया की परिकल्पना को भी साकार करने का समर्थन करता है। इस खंड में विभिन्न वर्गिकी कुल से संबंधित कई दुर्लभ, स्थानिक और संकटग्रस्त पौधों के संरक्षण को बढ़ावा मिलेगा और छात्रों सहित आगंतुकों को पादप वर्गीकरण का सटीक ज्ञान भी प्राप्त होगा।

आज के आधुनिक विज्ञान के युग में जहां छात्र एवं वैज्ञानिकगण दूसरे विषयों पर ज्यादा ध्यान देते है और पादप वर्गिकी विषय अथवा पेशे को करियर के रूप में नहीं देखते है, वहीं यह विषय आज भी दुनियाभर के सारे अनुसंधानों की नींव रखता है। यह विषय बहुत ही प्राचीन काल से चला आ रहा है, जिसे हमारे पूर्वजों ने सहेज के आज भी जिंदा रखा है, जिसकी बदौलत आज भी हम कोई प्रयोग प्रारंभ करने से पहले उसके सही नाम और वर्गीकरण के लिए सैकड़ों साल पहले प्रकाशित पुराने साहित्य की मदद लेते है। इसलिए यह खंड पादपों में रुचि रखने वाले सभी शोधकर्ताओं और विद्यार्थियों को इस विषय को चुनने के लिए प्रेरित करेगा और यह खंड बहुत सारी महत्वपूर्ण जंगली पादप प्रजातियों के जीन का संरक्षण करेगा और आने वाले समय में हमारे देश के लिए एक बहुत बड़ा योगदान साबित हो सकता है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 63-71 (2025)

पादपालय : पादप प्रतिरुपों का एक व्यवस्थित भंडार

बी. लक्ष्मणाडु, संजय मिश्र, ओंकार नाथ मौर्य, नीलिमा ए.एम, अर्चना राय व विनय रंजन

मध्य क्षेत्रीय केंद्र, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, प्रयागराज (इलाहाबाद)-211002

पादपालय वर्गीकरण पर आधारित सूखे पादप प्रतिरुपों का सुव्यवस्थित संग्रह है। पादपालय में दूरस्थ स्थान से प्राप्त पादप संग्रह को कीड़ों तथा नमी से बचाने के लिए स्टील तथा लकड़ी की आलमारी में संरक्षित रखा जाता है जिससे पादप वर्गिकी, वनस्पति विविधता और पादप संबंधित अध्ययन और शिक्षण में सहायता मिलती है।

सूचना प्रौद्योगिकी के साथ पादपालय प्रतिरुपों का विवरण न केवल द्रुत गति से प्राप्त किया जा सकता है, बल्कि इनका उपयोग विशिष्ट प्रयोजन के लिए भी किया जा सकता है। पादपालयों में कंप्यूटर के माध्यम से प्रतिरुपों के डिजिटलीकरण के कारण आभासी पादपालय या डिजिटल पादपालय पर आसानीपूर्वक अल्प ज्ञात वर्गिकी सुलभ हो सका है। विश्वविद्यालय और संस्थान के पादपालय में व्यक्तिगत लघु संग्रह से लेकर विशाल संग्रह तक शामिल हैं। 1,00,000 से कम संगृहीत प्रतिरुपों वाले पादपालय को लघु पादपालय, 1,00,000 से 5,00,000 संगृहीत प्रतिरुपों वाले पादपालय को मध्यम पादपालय, 5,00,000 से अधिक संगृहीत प्रतिरुपों वाले पादपालय को विशाल पादपालय के रूप में वर्गीकृत किया गया है। वर्तमान में 183 देशों में लगभग 3,500 पंजीकृत पादपालय हैं, जिनमें संगृहीत प्रतिरुपों की कुल संख्या लगभग 400 लाख है। भारत में 3.5 मिलियन से अधिक संगृहीत प्रतिरुपों के साथ 86 मान्यता प्राप्त पादपालय विद्यमान है जो उनके संक्षिप्त नाम/कोड के साथ sciweb.nybg.org में सूचीबद्ध हैं।

भारत में पादपालय के विकास का इतिहास सीधे तौर पर वनस्पति अध्ययन के इतिहास से जुड़ा हुआ है। 1787 में कलकत्ता में रॉयल बोटैनिक गार्डन की स्थापना हुई। विलियम रॉक्सबर्ग (1794-1814) ने रॉयल बोटैनिक गार्डन में अपने तीन मंजिला आवासीय भवन के भूतल पर पादपालय स्थापित किया। इस पादपालय को समय के साथ 1882 में जॉर्ज किंग द्वारा निर्मित दो मंजिला भवन में स्थानांतरित कर दिया गया जो रॉक्सबर्ग द्वारा निर्मित भवन के समीप स्थित था और बाद में दुनिया की बड़ी इमारतों में से एक केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, भवन (सीएनएच बिल्डिंग) में स्थानांतरित कर दिया गया।

पादपालय की परिभाषा: पादपालय सावधानीपूर्वक संगृहीत, दाबित, पूर्णत: नमी रहित तथा वर्गिकी की स्वीकृत नियम-अनुरूप व्यवस्थित पादप प्रतिरुपों का एक संग्रह है। यह संग्रह संदर्भ या अन्य विविध वैज्ञानिक उद्देश्यों में उपयोगी होती है। सामान्यतः प्रतिरुपों में प्रजनन अंग जैसे फूल या फल सम्मिलित होते हैं, जो संबंधित पादपों के वास्तविक अभिनिर्धारण के लिए आवश्यक होते हैं। छोटे शाक-पादपों को पूरी तरह से संरक्षित किया जा सकता है। स्पष्ट तौर पर, वृक्ष और झाड़ी जैसे बड़े पादप के प्रतिनिधि व मूल भाग को ही संरक्षित किया जाता है।

पादपालय प्रतिरुप: सरल और कम तकनीक से तैयार होने के बावजूद पादपालय प्रतिरुप बहुमूल्य सूचना को संरक्षित करती है। यदि उचित विधि से भंडारण किया जाए तो पादपालय प्रतिरुप कम क्षरण के साथ शताब्दियों तक उपयोगी होगा। प्रतिरुप, पादप सरंचना और भौगोलिक सीमा की विविधता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। यह अल्पकालिक संरचनाओं जैसे कैक्टस फल, कभी-कभार उत्पन्न होने वाले बांस के फूल को संरक्षित करती हैं। पादपालय मूल्यवान ऐतिहासिक संग्रह, जैसे प्ररूप, मूलप्ररूप जिन पर पादप का वैज्ञानिक नाम होता है, का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इसमें संलग्न सूचक-पत्र का विवरण प्राकृतिक-वास सहित पादप के बारे में बहुमूल्य जानकारी संरक्षित करता है। अनेक पादपालय प्रारूप, पादप के प्राकृतिक-वास के अस्तित्व का उल्लेख करते हैं जो अब शहरीकृत होकर लुप्त हो गए हैं। यह खर-पतवारों के विस्तार तथा मिशिगन में यूरोपीय हेलेबोरिन ऑर्किड के प्रवेशन को भी अंकित करते हैं। कुछ पादपालयों में दुर्लभ प्रजाति की सामग्री संरक्षित होती है, जैसे *मधुका इनसिग्निस* जो पहले 1900 में कर्नाटक, भारत में पाया गया था।

पादपालय का इतिहास: लुका घिनी (1490-1556) बोलोग्ना, इटली, पादपालय के अन्वेषक थे और उनके पास कागज पर चिपके लगभग 300 प्रतिरुपों का संग्रह था। घिनी के एक शिष्य घेरार्ड्स सिबो ने 1532 की शुरुआत में ही प्रतिरुपों को इकट्ठा करके संरक्षित करना शुरू कर दिया था और उनका पादपालय आज भी विद्यमान है। 1606 में ब्रुसेल्स के मूल निवासी एड्रियन स्पीघेल द्वारा पादपालय बनाने से

संबंधित प्रथम अभिलिखित प्रकाशन है। पिटन डी टूरनेफोर्ट की पुस्तक "एलेमेंस डी बोटैनिक" में पहली बार "पादपालय" शब्द का प्रयोग किया गया है। सत्रहवीं शताब्दी के दौरान अन्य पादपालय विकसित हुए, जैसे कि पेरिस में म्यूज़ियम नेशनल डी'हिस्टोइरे नेचुरेला, उस समय का दुनिया का सबसे विशाल पादपालय था।

पादपालय के उद्देश्य:

- नए वर्गिकी सहित किसी भी सामग्री के निर्धारण में सहायता करना।
- नए मोनोग्राफ और वनस्पतिजात को तैयार करने में सक्षम बनाना।
- ऐतिहासिक महत्व के प्रतिरूपों को संरक्षित करना।
- क्षेत्रीय और पारिस्थितिकीय वितरण की गणना के लिए डाटा एकत्र करना।
- तुलनात्मक या जातिवृत्तीय अध्ययन के लिए प्रतिरुप को पूर्णत: स्थायी संरचना में एक साथ लाना।
- विशिष्ट शोध जैसे कि पादप संरचना विज्ञान, पॉलिनोलॉजी तथा लोकवनस्पति विज्ञान और आण्विक शोध के लिए सामग्री प्रदान करना।

पादपालय पत्र: माउंटिंग बोर्ड या पाद्पालय शीट का सामान्य आकार 42 × 28 सेमी है। माउंटिंग बोर्ड के निचले दाएं कोने पर 12 × 8 सेमी के आकार का पादपालय सूचक-पत्र चिपकाया जाता है। जहां तक संभव हो पादपालय-पत्र के ऊपर प्रतिरुप को मध्य में, फ़ील्ड संख्या को बाएं हाशिया के मध्य में तथा परिग्रहण संख्या और/या बारकोड को दाहिने शीर्ष पर चिपकाया जाता है।

पादप संग्रहण/संचयन में प्रयुक्त उपकरण: कार्य क्षेत्र में सूचीबद्ध वस्तुओं को पीठ व थैले के अलग-अलग हिस्सों में रख कर ले जाना सुविधाजनक होता है। प्रतिरुपों को एकत्रित करने में कई उपकरणों का प्रयोग किया जाता है जैसे कैंची (पादपों को काटने के लिए), खनक (जड़ों और प्रकंदों जैसे भूमिगत हिस्सों की खुदाई के लिए) और तक्षक (काई और शैवाल को खुरचने के लिए) आदि। संगृहीत प्रतिरुपों को अलग-अलग प्लास्टिक थैलियों में पानी की कुछ बूंदों के साथ रबर बैंड से कस कर बांध कर रखा जा सकता है। विभिन्न आकारों की थैलियों को ले जाने से हमें प्रत्येक प्रतिरुप के लिए सही आकार की थैली चुनने में सहायता मिलती है। इसके अलावा, प्रत्येक संग्रहण के लिए अगल-अलग थैली होने से यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि फूल यदि बार-बार गिरते हैं तो मिश्रित नहीं होंगे। प्रतिरुप रखने के बाद अलग-अलग आकार के प्लास्टिक तथा पेपर बैग और उन्हें बंद करने हेतु रबर बैंड आवश्यक हैं। फलों और बीजों को संगृहीत करने के लिए छोटे भूरे रंग के पेपर बैग का प्रयोग किया जाता है। फील्ड प्रेस का प्रयोग, जो 30 × 42 सेमी के दो साधारण हार्ड बोर्ड/प्लाई बोर्ड को दो चमड़े या सूती पट्टियों से बांध कर बनाया जाता है, संगृहीत पादपों को रखने में किया जाता है। कम से कम 10 हैंडलेंस की सहायता से प्रतिरुपों की ताज़ा स्थिति का अध्ययन किया जा सकता है तथा पेंसिल की सहायता से महत्वपूर्ण विशेषताओं को नोट किया जाता है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि पत्तियाँ मुड़ी न हो या उनमें अतिच्छादन न हो या इनसे फूल या फल ढके न हो तथा दबाते समय कम से कम एक पत्ती और एक फूल को उलट दें। दबाने तथा सुखाने के दौरान प्रतिरुपों को रखने के लिए ब्लॉटिंग पेपर और समाचार पत्रों का उपयोग किया जाता है। भविष्य के संदर्भ में उपयोग हेतु प्रतिरुपों को अक्षांश और देशांतर द्वारा दर्शाया जाता है। जीपीएस द्वारा संगृहीत प्रतिरुप की सजीव स्थिति में तस्वीरें खींचने के लिए एक कैमरा अपेक्षित है। फ़ील्ड नोटबुक आवश्यक है, जिसमें संगृहीत प्रतिरुप के संग्रहण के समय की सभी सूचनाओं का रिकॉर्ड होता है तथा प्रायः मुद्रित फील्ड संख्या के साथ बहुल वियोज्य चिपका हुआ छिद्रित टैग होता है। इन फील्ड नंबर मुद्रित टैग को फ़ील्ड बुक से अलग किया जाना चाहिए और संगृहीत प्रतिरुपों के साथ बांधना चाहिए। क्षेत्र में किसी संग्रह के लिए निर्धारित संख्या प्रतिरुप से संबंधित होती है और उसी से उनकी पहचान होती है और संग्रहणकर्ता की नोटबुक में दर्ज डाटा को संदर्भित करता है। इसे अक्सर संग्राहक संख्या भी कहा जाता है, प्रत्येक पत्र के पादपालय में शामिल होने के पश्चात पंजीकरण संख्या नियत किया जाता है।

फील्ड प्रेस: फील्ड प्रेस को सरलता से निर्मित किया जा सकता या खरीदा जा सकता है। प्रेस के मुख्य फ्रेम के रूप में 30 x 45 सेमी आकार के 12 मिमी ठोस प्लाईवुड के दो छिद्रयुक्त टुकड़ों का उपयोग भी कर सकते हैं। प्लाईवुड के छिद्र हवा के संचालन में सहायता करते हैं। फील्ड प्रेस के लिए हार्डवुड का प्रयोग करना हो, तो 30 × 45 मिमी आकार के वलिमय कार्डबोर्ड के 2 आंतर टुकड़े को हार्डवुड फ्रेम के ठीक नीचे रखना उपयोगी होता है। प्रतिरुप पर पर्याप्त दबाव डालने के लिए समायोज्य पट्टा होना चाहिए जिसे मुख्य फ्रेम के क्लिप की सहायता से घुमाया जा सके।

पादप संग्रहण यात्रा के दौरान निम्नलिखित वस्तुएँ बहुत आवश्यक हैं:

• तुंगतामापी/अल्टीमीटर	• पहचान पत्र	• रस्सी
• कुल्हाड़ी	• मिट्टी का तेल	• रबड़
• दूरबीन	• खुरपी	• स्केल
• कैमरा	• चाकू	• कंधे का थैला
• मोमबत्ती	• माचिस	• साबुन
• कंटिजेंसी वाउचर	• पेंसिल	• प्रतिरुप ट्यूब
• काटने का उपकरण	• पेट्रोमैक्स	• तम्बू
• ड्राइंग/ब्लॉटिंग शीट	• पॉकेट लेंस	• बैटरी के साथ टॉर्च
• फील्ड बुक	• पॉलिथीन बैग	• वृक्ष छांटने वाला/ ट्री प्रूनर
• फील्ड जूते/फील्ड शू	• आयरन-प्रेस	• बर्तन
• प्राथमिक उपचार पेटी	• रेनकोट	• दवा, पुराने समाचार-पत्र
• ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस)		

तकनीक:

1.क्या/कौन सा पौधा इकट्ठा करना है?

किस प्रकार का पादप संग्रह करना है, यह अध्ययन के उद्देश्य पर निर्भर है। यदि अध्ययन का उद्देश्य किसी क्षेत्र की वनस्पति को प्रस्तुत करना है, तो उस क्षेत्र की संपूर्ण वनस्पति के प्रतिरुप का व्यापक संग्रह होना चाहिए। संग्रह में बेहतर यह है कि फल या फूल दोनों ही या कम-से-कम एक फूल या एक फल शामिल होना चाहिए। घास और अन्य जड़ी-बूटी के मामले में भूमिगत भाग सहित पूरा पौधा संग्रह किया जाना चाहिए। पादपालय शीट की आकार लगभग 28 x 42 सेमी होती है, जिस पर अंततः प्रतिरुप को चिपकाया जाता है तथा यह संगृहीत पादप या टहनियों के आकार को सीमित करता है। विभिन्न कारणों से प्रत्येक पादप के कम से कम चार प्रतिरुप संगृहीत किए जाते हैं, यह विशेष रूप से वितरण और विनिमय को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से किया जाता है। इन चार प्रतिरुपों में से दो को पादपालय में रखा जाता है तथा दो प्रतिरुपों को दूसरी प्रति के रूप में रखा जाता है। संग्रह के लिए निर्धारण की गई संख्या अत्यंत महत्वपूर्ण अभिलेख है। एक ही पादप के चार प्रतिरुपों को एक ही फ़ील्ड संख्या दिया जाता है। यदि प्रतिरुप जड़ी-बूटी है, तो भूमिगत भाग सहित पूरे पादप को संगृहीत किया जाना चाहिए या यदि वह वृक्ष संकुल है, तो सरलता से पादपालय पत्र के उपयुक्त टहनी का संग्रह किया जाता है।

पौधों के कुछ समूहों जैसे गूदेदार पौधे, जलीय पादप, अरबी, विशाल बांस और बहुत ऊँचे वृक्ष को एकत्रित करने के लिए विशेष तरीकों और सावधानियों की आवश्यकता होती है। गूदेदार पादप जैसे नागफनी, दुधिया और क्रस्यूलेसी के अवयव पादपालय प्रतिरुप बनाने में एक असामान्य कठिनाई उत्पन्न करते हैं। उनके ठोस गुदेदार ऊतकों को सूखने में बहुत लंबा समय लगता है और इसलिए उन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इसलिए या तो इन ऊतकों को उबलते पानी में डालकर नष्ट कर देना चाहिए या ठोस भाग को खोखला करके अतिरिक्त ऊतकों को हटा दिया जाता है। ये ऊतक अल्कोहल या मजबूत फॉर्मेलिन से भी नष्ट हो सकते हैं। गूदेदार पौधे, विशेषकर कांटेदार गूदेदार पादपों की विशेषताओं को रिकॉर्ड करते समय, रचना और आकार का विवरण और काटों तथा संधि के क्रम-विन्यास पर ध्यान दिया जाना चाहिए। कुछ पादप जैसे कि *लेम्ना* और *वोल्फिया* सूक्ष्मदर्शी होते हैं और उन्हें सामान्य तरीके से पादपालय के लिए संसाधित नहीं किया जा सकता है। इन पादपों को संग्रह संख्या, टिप्पणी आदि के साथ बड़े पैमाने पर संग्रह किया जाना चाहिए, धूप में सुखाकर एक पैकेट में रखकर और पूरे पैकेट को माउंटिंग बोर्ड पर चिपका देना चाहिए। इनको भ्रूणविज्ञान या आंतरिक संरचना का अध्ययन के लिए उपयोग किए जाने वाले किसी भी तरल परिरक्षकों में संरक्षित किया जा सकता है। सामान्य तरल परिरक्षक का निर्माण एथिल अल्कोहल 95% 50 सीसी, ग्लेशियल एसेटिक एसिड 5 सीसी, फॉर्मेल्डिहाइड 40% 5 सीसी और जल 40 सीसी आदि मिलाकर किया जाता है। एक पर्ची पर संग्रह संख्या और स्थान, तिथि इत्यादि को लेड पेंसिल या भारतीय स्याही से लिखकर जार में रख देना चाहिए या उसके ऊपर चिपका देना चाहिए।

पर्णांगों को उनके आधारी भाग के साथ संगृहीत किया जाना चाहिए क्योंकि प्रकंद और रोम का आकार और प्रकंद पर शल्क वर्गीकरण के महत्वपूर्ण लक्षण हैं। बीजाणुधानी के बिना पत्ते का कोई महत्व नहीं है। निर्बल जलीय पादपों को संग्रह के बाद पानी वाले ट्रे में रखा जाता है और फैला दिया जाता है। फिर एक वायर प्रेस या चालित पट्टिका के नीचे कागज या मलमल के कपड़े को प्रतिरुप के नीचे डालकर बाहर लाया जाता है; कागज या कपड़े को दोनों हाथों से धीरे-धीरे उठाकर ड्रायर के बीच रखा जाता है। कुछ जलीय लिथोफाइट जैसे पोडोस्टेमेसी के सदस्य पथरीली आधार से अलग नहीं हो सकते तथा उनके संग्रह के लिए चट्टान के एक हिस्से को तोड़ने की आवश्यकता होती है। पादप के साथ चट्टान को या तो सुखाना होगा या तरल माध्यम में संरक्षित करना होगा।

2. फील्ड नोट बुक (फील्ड डायरी): पादपालय प्रतिरुप तैयार करते समय पादप से संबंधित सभी आकड़ों के अभिलेखीकरण पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए, जो पादप के सुखने पर मौजूद न हो या जिनका पता लगाना संभव नहीं हो। फील्ड नोटबुक में पादपों के संग्रह के दौरान ध्यान देने योग्य निम्नलिखित बातें:

(क) तिथि (ख) देशी नाम (ग) स्थानीयता (घ) प्राकृतिक वास (च) विवरण (पर्णसमूह और पुष्प का रंग; दलपुंज शिराविन्यास: परागकोश रंग: पर्णसमूह और परिदल-पुंज भाग की बनावट, मांसल परिपक्व फल का रंग औऱ प्रकृति) (छ) संग्राहक का नाम आदि ।

3. प्रतिरुप का प्रक्रमण - प्रतिरुपों को तैयार करने में निम्नलिखित प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं:

विषाक्तता: प्रतिरुपों को शिविर में तुरंत या मुख्यालय पहुंचने के तुरंत बाद विषाक्त कर दिया जाता है। एक दिवसीय यात्रा के मामले में, संग्रह के तुरंत बाद पादप को विषाक्त करने की सलाह दी जाती है। विषाक्तता से पादप निर्जीव हो जाता है और इस प्रकार विच्छेदन परत के निर्माण को रोका जाता है। आम तौर पर पूरे पादप को एथिल अल्कोहल में मरक्यूरिक क्लोराइड के संतृप्त घोल में डुबाकर विषाक्त किया जाता है। घोल को एक ट्रे में डाला जाता है और इसमें चिमटे की सहायता से प्रतिरुप डुबोया जाता है। घोल में उंगलियों को डुबाने से बचना चाहिए तथा विषाक्तता के समय रबर के दस्तानों का उपयोग करना चाहिए। पादप पूरी तरह से घोल में डूबा होना चाहिए तथा पादप की मोटाई के आधार पर 15-20 सेकंड के लिए वहीं छोड़ देना चाहिए। मरक्यूरिक क्लोराइड एक घातक विषैला रसायन है और इसका असर इंसानों पर उत्तरोत्तर क्रम में होता है। कुछ पादपालयों में लॉरिल पेंटाक्लोरफिनेट (एलपीसीपी) का उपयोग मर्क्यूरिक क्लोराइड के विकल्प के रूप में किया जाता है और यह बहुत प्रभावी है और इसका प्रबंधन तुलनात्मक रूप से सुरक्षित है। हाल ही में लंबी अवधि वाले अन्वेषण और अभियान में पादपों को संगृहीत करने तथा उन्हें विषाक्त करने में एक दूसरी विधि का प्रयोग किया जा रहा है। इसे फॉर्मेलिन विधि कहा जाता है। यह विधि उष्णकटिबंधीय देशों या गीले मौसम के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। पादप संग्रह को साधारण पुराने अखबारों में फैलाकर बंडल बना दिया जाता है। फिर प्रत्येक बंडल को एक बड़े पॉलिथीन बैग में रखा जाता है। बंडल पर 10% फॉर्मेलिन मिश्रण के 5 सीसी के साथ 70% एथिल अल्कोहल डाला जाता है, जिससे बंडल बिना अधिक गिला हुए भींग जाता है। फिर बैग को वायुरोधी करके बांध दिया जाता है। फ़ोल्डरों में मुख्यालय पहुंचने तक और किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। मुख्यालय पहुंचने पर प्रतिरुप हमेशा की तरह दबाने और सुखाने के लिए फैला दिया जाता है।

प्रेसिंग: यथासंभव शिविर में ही पौधों को दबाने का कार्य किया जाता है। यह प्रतिरुपों को भारी दबाव में अवशोषकों के बीच रखने की प्रक्रिया है। जड़ी-बूटी के प्रतिरुपों को धोना चाहिए जिससे जड़ों से कीचड़ हट जाए। पादप के सभी भाग जैसे पर्ण और पुष्प आदि को सुव्यवस्थित ढंग से फैलाना चाहिए। कुछ पत्तों को ऊपर की ओर तथा कुछ को नीचे की ओर मुख करके रखा जाता है ताकि दोनों सतहों की विशेषता दिखे। अक्षीय ओर से सोरी के साथ पर्णांग के मामले में यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। दबाते समय प्रतिरुपों को इस तरह बीच में रखा जाना चाहिए कि बीच में तथा किनारों पर बंडल की मोटाई लगभग एक समान हो। इससे दाब एक समान पडेगा। दाब का मुख्य उद्देश्य प्रतिरुपों को समतल करना और सुखाना है। इसे पट्टियों को हल्का रखकर और हर दिन ब्लॉटर बदलकर मौसमानुसार लगभग 6-10 दिन सूखाया जा सकता है।

सुखाना: पादप को दाब में कसकर रखा जाना चाहिए। पादप जितनी तेजी से सूखेगा, सूखे प्रतिरुपों की गुणवत्ता उतनी ही बेहतर होगी। कवक और जीवाणु संक्रमण बहुत कम या न के बराबर होगा। सूखने में तेजी रहने पर, पादप के अव्ययों का रंग ज्यादा क्षीण नहीं होगा। कुछ छात्र दाब से पहले पादप को कॉपर सल्फेट के घोल में डुबाएंगे। इससे यह पादप सूखने के बाद भी हरा दिखाई देगा। पादप को 12-24 घंटे तक फील्ड प्रेस में दबाकर अतिरिक्त जल निकालना चाहिए। उसके पश्चात फ़ील्ड प्रेस को खोलकर और सामग्री को ताज़ा ब्लॉटर में स्थानांतरित करें। 48 घंटें की समयावधि के दौरान, पादप को कम से कम 3 बार बदलना चाहिए। इससे पादप तेजी से सूखेगा तथा पादप के अव्ययों का अपक्षय कम होगा।

चिपकाना: प्रतिरुपों को दबाने, सुखाने और विषाक्त करने के बाद, माउंटिंग शीट पर इसे एक सूचक-पत्र के साथ चिपका दिया जाता है। माउंटिंग शीट 28 x 42 सेमी आकार के एकरूप सघन टिकाऊ सफेद कार्ड शीट से बनाई जाती है। चिपकाने का उद्देश्य यह है कि प्रतिरुप पत्रों पर स्पष्ट तथा समरूपता से फैला हुआ होना चाहिए और अध्ययन के समय पादप के सभी अव्यय सरलता से दिखने चाहिए। वर्तमान में हमारे देश में प्रतिरुपों को चिपकाने की सामान्य तकनीक गोंद है। किताबों की बाइंडिंग के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला सामान्य पशु गोंद बाजार में लच्छे या टुकड़े के रूप में उपलब्ध है। उबलते पानी में थोड़ी मात्रा में गोंद के टुकड़े को डालकर धीरे-धीरे गाढ़ा लेई तैयार किया जाता है।

सिलाई: सिलाई छोटी और अलग-अलग होनी चाहिए और माउंटिंग शीट के निचले हिस्से पर धागे को एक टांके से खींचकर दूसरे टांके तक नहीं ले जाना चाहिए। प्रत्येक तने/टहनी के पास छेद किया जाता है और धागा डाला जाता है। पीछे एक गांठ लगाई जाती है और प्रत्येक गांठ के बाद धागे को काट दिया जाता है।

पट्टी बांधना (स्ट्रैपिंग): इस प्रक्रिया में, प्रतिरुपों को शीट से चिपकाया नहीं जाता है, बल्कि साधारण धागे के टांके या किसी अन्य उपकरण जैसे कि गोंद के कपड़े या कागज़ के टेप या तरल प्लास्टिक विधि के माध्यम से केवल ढीली स्ट्रैपिंग की जाती है। इसमें जल्दी सूखने वाले तरल प्लास्टिक होते हैं जो बाज़ार में उपलब्ध है। यह एक महंगी प्रक्रिया है।

सूचक-पत्र लगाना: पादपालय पत्र पर प्रतिरुपों को चिपकाने के बाद, पादपालय सूचक-पत्र चिपकाने का कार्य किया जाता है। पादपालय सूचक-पत्र का आकार और डिज़ाइन आवश्यकतानुसार थोड़ा भिन्न होता है। आकार लगभग 8 x 12 सेमी होता है। सामान्य तौर पर, सूचक-पत्र में कुल का नाम, वंश और प्रजाति का नाम, संग्रह का स्थान, संग्रह की तिथि, पर्यावास, संग्राहक का नाम और क्षेत्र संख्या और स्थानीय नाम एवं स्थानीय उपयोग आदि विवरण होना चाहिए। पादपालय सूचक-पत्र को माउंटिंग शीट के किनारों से लगभग 1 सेमी की दूरी पर निचले दाएं कोने पर लगाया जाता है। इसे गोंद से चिपकाया जाना चाहिए। प्रतिरुपों को चिपकाने और सूचक-पत्र को चिपकाने के बाद सूचक-पत्र पर विवरण को स्पष्ट रूप से स्थायी स्याही से दर्ज करना चाहिए या सूचक-पत्र पर टंकित करके चिपकाना चाहिए। नामपत्र अभिलेख होते है, अतः इनको चिरस्थायी होना चाहिए तथा इनका अपक्षय नहीं होना चाहिए। कितना ही साफ-सुथरा और सही तरीके से चिपकाया गया क्यों न हो, बिना सूचक-पत्र के प्रतिरुप का महत्व नगण्य होता है।

पादप पहचान/निर्धारण: सामान्यतः अभिनिर्धारण वह प्रक्रिया मानी जाती है, जिसके माध्यम से किसी अज्ञात नाम के प्रतिरुपों को उसके लक्षणों से पहचाना जाता है, किसी ज्ञात पादप के समान होने पर तदनुसार नाम दिया जाता है। लेकिन अब यह महसूस किया जा रहा है कि कोई भी दो अलग-अलग पादप एक समान नहीं होते हैं, इस प्रक्रिया को पहचान नहीं बल्कि अभिनिर्धारण कहा जाना चाहिए। इसलिए टिप्पण पर्ची को निर्धारी पर्ची के रूप में जाना जाता है और चिह्नित किया जाता है। हालाँकि, यह पहचान शब्द सार्वभौमिक रूप से इतना प्रयुक्त किया जा चुका है कि यह पूरी प्रक्रिया को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। अभिनिर्धारण की वैज्ञानिक विधि में सबसे पहले पादप के लक्षणों का अध्ययन किया जाता है, क्षेत्र की वनस्पति के साथ मिलान करके, कुल, वंश और प्रजाति मूल के साथ अच्छी तरह से प्रयोग करके और पूर्ण वर्णन और उदाहरण के साथ तुलना किया जाता है। इसके बाद पूर्व से अभिनिर्धारित प्रजाति या किस्म के साथ इसकी तुलना सावधानीपूर्वक किया जाता है।

समावेशन: जब प्रतिरुप तैयार हो जाते हैं (चिपकाना, सूचक-पत्र और अभिनिर्धारण का कार्य हो जाता है), तब उन पर पादपालय या संस्था का विशिष्ट चिह्न लगा दिया जाता है। मुद्रांकन सामान्यतः पत्र के दाहिने कोने के शीर्ष पर किया जाता है। इस मोहर पर संस्था का नाम, पादपालय परिग्रहण संख्या कहा जाने वाला क्रमांक तथा कभी-कभी परिग्रहण की तिथि अंकित होती है। पत्र को परिग्रहण रजिस्टर में सूचीबद्ध किया जाता है और तब पत्र पादपालय में दाखिल होने के लिए तैयार हो जाता हैं। माउंटेड, अभिनिर्धारित तथा परिग्रहित पादपालय पत्र कुल, वंश और प्रजाति के अनुसार वर्गीकृत होती है। एक ही प्रजाति के सभी पत्रों को हल्के आवरणों में रखा जाता है जिन्हें "प्रजात लिफाफा या फ़ोल्डर" कहा जाता है और एक ही वंश से संबंधित सभी प्रजातियों को (प्रजातियों के कवर या फ़ोल्डरों के साथ) सघन कागज के एक और फ़ोल्डर में रखा जाता है जिसे "वंश लिफाफा" कहा जाता है।

प्रतिरुपों का प्रबंधन: सामान्यतः प्रतिरुपों को वर्गिकी की स्वीकृत विधि के अनुरूप पादपालय में प्रबंधित किया जाता है। कई भारतीय पादपालयों में बेंथम और हूकर के जेनेरा प्लांटेरम के अनुसार कुल और वंश का क्रम और क्रमांक निर्धारित है। कुछ यूरोपीय पादपालय में कुल को नवीन वर्गिकी एपीजी प्रणाली (एंजीयोस्पर्म फाइलोजेनी ग्रुप) के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। पादपालय-पत्र को लकड़ी

या स्टील की आलमारी के दराज में व्यवस्थित किया जाता है। जिस दराज से नए कुल के बंडल की शुरूआत होती हैं, उसको एक निश्चित सूचक-पत्र या एक कार्डबोर्ड विभाजक द्वारा चिह्नित किया जाता है। इन पर कुल का नाम बड़े अक्षरों में टंकित या लिखित होना चाहिए। प्रजाति लिफाफे का आकार सामान्यतः 32 x 48 सेमी और वंश लिफाफे का आकार 40 x 60 सेमी होता है।

रख-रखाव: संग्राहक बड़ी कठिनाई से पादपालय-पत्र को तैयार करता है। कुछ मामलों में, पादपालय पत्र ही उस पादप का प्रतिरूप के रूप में कार्य करती है, जब उस क्षेत्र के सभी पादप लुप्त हो गए हों। फाइसन द्वारा अभिलेखित किए गए प्रतिलिपि प्रतिरुपों का यही हाल है। अतः पादपालय-पत्र को कवक तथा कीड़े से सुरक्षित रखना एक महत्वपूर्ण कार्य है। तम्बाकू या पादपालय बीटल (लैसियोडर्मा सेरीकोर्न) या ड्रगस्टोर बीटल (स्टेगोलियम पैनिकियम) और सिल्वर फिश (लेपिस्मा सैकेरिनम) सामान्य शत्रु हैं। वे सूखे प्रतिरुपों के साथ अपना जीवन चक्र पूरा करते हैं। जीवन चक्र की अवधि 70 से 90 दिन है। इन कीड़ो के कारण उपेक्षित पादपालय-पत्र नष्ट हो जाते हैं। कीड़े कीटनाशक के संपर्क में आकर या खाकर नष्ट हो जाते है। पादपालय में प्रयुक्त संपर्क कीटनाशक साइनाइड गैस, पैराडाइक्लोरो बेंजीन (पीडीबी), कार्बन डाइऑक्साइड या डीडीटी है। भक्षण-विष पारा और आर्सेनिक के लवण हैं। मर्क्यूरिक क्लोराइड कीटनाशक है। नए पादपालय प्रतिरुपों और संग्रह लाने में सावधानी बरतनी चाहिए। किसी को यह जांचना चाहिए कि प्रतिरुप ठीक से विषाक्त है या नहीं। यदि कोई विषाक्तहीन संक्रमित प्रतिरुप पादपालय में प्रवेश करता है, तो यह इसके अतिरिक्त संक्रमण का स्रोत बन सकता है। आने वाले प्रतिरुपों को रात भर के लिए डीप फ्रीजर में रखा जाता है और अंदर ले जाया जाता है। यह बहुत विशाल पादपालय में संभव है, जहां आने वाले प्रतिरुपों की संख्या बहुत अधिक होती है तथा हाथ से विषाक्तता संभव नहीं है।

धूमन चिपकाए हुए (माउंटेड) और बिना चिपकाए हुए (अनमाउंडेड) दोनों प्रकार के डुप्लिकेट प्रतिरुपों से कीटों को मारने के लिए किया जाता है। इस प्रक्रिया में मिथाइल ब्रोमाइड कार्बन डाइसल्फ़ाइड या कार्बन टेट्राक्लोराइड जैसे उड़नशील जहरीले तरल पदार्थों में से कोई एक होता है। इन्हें छोटी तश्तरियों में रखा जाता है या पेट्री-डिश में रखकर पादपालय अलमारी में रखा जाता है तथा अलमारी को लगभग एक सप्ताह तक बंद रखा जाता है। मिथाइल ब्रोमाइड का प्रयोग न्यूयॉर्क बॉटैनिकल गार्डन के पादपालय में किया जाता है। कभी-कभी पैराडाइक्लोरोबेंजीन को सभी या कुछ एक दराजों में रखा जाता है। तापन कीड़ों को मारने का एक तरीका है। कुछ पादपालय धूमन के स्थान पर विद्युत हीटर का उपयोग करते हैं। इसके लिए निचले तल में इलेक्ट्रिक हीटिंग एलिमेंट के साथ विशेष इंसुलेटेड पादपालय केस की आवश्यकता होती है। प्रतिरुपों को चैम्बर के अंदर 44°C पर रखा जाता है और कुछ घंटों के लिए वहीं छोड़ दिया जाता है। रासायनिक उपचार कीट नियंत्रण का एक अन्य तरीका है। इसमें विष क्रिया के दो तरीके है। एक तरीके में प्रतिरुपों को स्थायी रूप से विषाक्त करना है तथा दूसरा उस सामग्री को अरूचिकर बनाना है। इसका तरीका है कि चिपकाने से पहले इसे कीटनाशक में डुबाया जाए या चिपकाने के बाद रसायन का छिड़काव किया जाए। मर्क्यूरिक क्लोराइड ($HgCl_2$) और एथिल अल्कोहल सबसे अच्छा मिश्रण है, लेकिन यह अत्यधिक जहरीला है और इसका रखरखाव सावधानी पूर्वक करना चाहिए। इसके अलावा, यदि इसे खुले हाथों से रखा जाएगा, तो हाथ काला हो सकता है। इसके अतिरिक्त धात्विक चिमटा और ट्रे का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। वे संक्षारित हो जाते हैं।

पादपालय का उपयोग:

पादप के पहचान की खोज या पुष्टि करना या यह निर्धारित करना कि यह विज्ञान (वर्गीकरण) के लिए नवीन है:

पादप वर्गिकी के अध्ययन का पहला चरण पादप का अभिनिर्धारण करना है। पादप संग्रह करने के उपरांत वनस्पतिज्ञ का पहला कार्य जल्द से जल्द इसकी सटीक पहचान खोजना है। पादपालय प्रतिरुप से तुलना करके अभिनिर्धारण किया जाता है। पादपालय में पादपालय प्रतिरुपों के प्रबंधन से इनकी पुनर्प्राप्ति शीघ्र संभव हो जाती है। विशिष्ट पादपालय में प्रतिरुपों की अनुपलब्धता का तात्पर्य यह नहीं है कि यह प्रतिरुप विज्ञान के लिए नवीन है। यह एक प्रवेशन हो सकता है। अन्य स्थानों के पादपालय से प्रश्नगत प्रतिरुपों का सत्यापन किया जाना चाहिए। हालाँकि, यदि प्रतिरुप किसी भी पादपालय में नहीं पाया जाता है, तब संगृहीत की गई नई प्रजाति विज्ञान के लिए नई मानी जाती है तथा इसको नाम देने की प्रक्रिया का आरंभ होता है। संगृहीत प्रतिरुप बहुमूल्य हो जाता है और एक प्ररूप प्रतिरुप बन जाता है तथा इसका भंडारण सुरक्षित ढंग से किया जाता है।

विशेषज्ञों की संकल्पना का दस्तावेज बनाना, जिन्होंने अतीत में प्रतिरुपों का अध्ययन (वर्गीकरण) किया है:

कोई विशेषज्ञ अपने प्रतिरुपों की तुलना पादपालय में मौजूद प्रतिरुपों से करता है, तो यह संभव हो कि पादपालय में पहले से मौजूद

प्रतिरुपों के समान अपने प्रतिरुपों को नहीं माने। वह अपने प्रतिरुपों में अलग-अलग विशेषताओं का निरीक्षण करता है और पादपालय-पत्र पर अपनी अभ्युक्तियां देता है, जो वनस्पति, पुनरीक्षण, मोनोग्राफ, आदि पर व्यापक अध्ययन करने वाले वर्गिकीविज्ञ के लिए मूल्यवान मार्गदर्शक बन जाता है।

आकारिकीय माप (वर्गिकी, वर्गीकरण विज्ञान) बनाने के लिए सामग्री प्रदान करना:

पादपों की प्रजातियों के आकारिकीय अध्ययन के लिए, वर्गिकीविज्ञ पादपालय प्रतिरुपों का उपयोग करते हैं। विभिन्न पादपालय प्रतिरुपों से न केवल लक्षणों को अभिलेखित किया जाता है, बल्कि पादपों के वर्गीकरणीय अध्ययन में उपयोग के लिए आकार का माप लिया जाता है।

क्षेत्र यात्रा की योजना बनाने के लिए स्थानीय विवरण प्रदान करना (वर्गिकी, वर्गीकरण विज्ञान, शिक्षण):

यदि किसी वैज्ञानिक को किसी विशेष प्रजाति का संग्रह करना है, तो उसे पादप सामग्री का संग्रह करने हेतु उस स्थान को चिह्नित करना होगा। पादपालय प्रतिरुप इस बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। पादपालय सूचक-पत्र उस प्राकृतिक-वास का भी संकेत देते हैं, जहां किसी को प्रतिरुपों के संग्रह के लिए ध्यान देना होता है। इसी प्रकार, प्रतिरुपों का संग्रह करने हेतु क्षेत्र यात्रा की योजना बनाते समय, पादपालय प्रतिरुपों की जांच के आधार पर स्थान विशेष को भी चिह्नित किया जाता है।

पादप अध्ययन (वर्गीकरण) के लिए विवरण प्रदान करना:

किसी क्षेत्र के पादपालय प्रतिरुपों का अध्ययन, पादप विविधता के लिए किया जाता है। पादपालय प्रतिरुपों वनस्पति-जात को तैयार करने, मोनोग्राफ, संशोधन कार्यों के लिए महत्वपूर्ण हैं। इन सभी कार्यों में पादपालय प्रतिरुप का निरीक्षण और अध्ययन को यथोचित श्रेय दिया जाता है।

नए संग्रह (वर्गिकी, वर्गीकरण विज्ञान) के भंडार के रूप में कार्य करना:

शोध कार्य के लिए किसी क्षेत्र से संगृहीत प्रतिरुपों को कार्य पूर्ण होने पर भविष्य के संदर्भ के लिए पादपालय में जमा कर दिया जाता है। यह भविष्य के शोधकर्ताओं को उनकी आवश्यकता के अनुसार प्रतिरुपों का निरीक्षण करने में सक्षम बनाता है।

पादपों के लैटिन नाम का सत्यापन करना (नामकरण):

एक ही पादप के लिए विभिन्न वर्गिकीविज्ञों द्वारा प्रयुक्त विभिन्न वानस्पतिक नामों का आकारिकीय विशेषताओं के साथ अध्ययन किया जा सकता है। अन्य वर्गीकरण साहित्य से सटीक नाम का सत्यापन किया जा सकता है।

"प्ररूप प्रतिरुप" और "वाउचर प्रतिरुप" (वर्गीकरण) के लिए एक सुरक्षित भंडार के रूप में कार्य करना:

प्रारूप प्रतिरुप मूल्यवान हैं क्योंकि पादप का नामकरण इसी पर आधारित है। इस तरह, ये भविष्य के वर्गीकरण कार्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। प्रारूप प्रतिरुपों को सावधानी पूर्वक अलग से संगृहीत किया जाता है। प्रारूप प्रतिरुपों के अलावा अन्य सभी प्रतिरुप वाउचर प्रतिरुप हैं तथा परामर्श और परीक्षण प्रयोजनों के लिए शोधकर्ताओं को सरलता से उपलब्ध होते हैं।

शोध सामग्री ((वर्गिकी, वर्गीकरण विज्ञान) के लिए लोन आदि प्रदान करने हेतु अवसंरचना प्रदान करना:

पादपालय किसी भी शोध संस्थान को अध्ययन के लिए आवश्यक होने पर निश्चित समयावधि के लिए प्रतिरुप उधार भी देता है। प्रतिरुपों को पारगमन नुकसान से बचाने हेतु सावधानी रखी जाती है।

पुष्प और फल लगने के समय और पादप के तरूण रूप का लिखित प्रमाण प्रदान करना(वर्गिकी, वर्गीकरण विज्ञान, पारिस्थितिकी, लक्षण विज्ञान):

पादपालय में प्रतिरुपों के संग्रह की तारीख के साथ-साथ जिस स्थान से प्रतिरुप संग्रह किया गया है, उस स्थान का भी विवरण दर्ज किया जाता है। शोधकर्ता इस विवरण का उपयोग करके किसी भी प्रजाति पर पुष्प लगने और फल लगने के समय को जानकर संग्रह कर सकता है।

किसी पादप के चित्रण के लिए आधार प्रदान करना (वर्गीकरण और सामान्य प्रकाशन):

पादपालय प्रतिरुपों का उपयोग चित्रण तैयार करने के लिए किया जाता है, जिनका उपयोग पादप अध्ययन में किया जाता है।

डीएनए विश्लेषण (वर्गीकरण, क्रमिक विकास और आनुवांशिकी) के लिए सामग्री प्रदान करना:

पादप में डीएनए अणु होते हैं, जो पादपालय प्रतिरुपों में संरक्षित होते हैं। पादपालय प्रतिरुपों से डीएनए अणु को अलग करने के लिए व्यवस्था उपलब्ध है। डीएनए अणु का उपयोग वर्गिकी, क्रमिक विकास, आनुवंशिकी, जीनोम विश्लेषण, जैव सूचना विज्ञान पर अध्ययन आदि के लिए किया जाता है।

अतीत और भविष्य के संग्रह अभियानों (वर्गीकण, पारिस्थितिकी आदि) के लिए जीआईएस अध्ययन की जानकारी प्रदान करना:

जीआईएस हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर की एक प्रणाली है जिसका उपयोग पादप प्रजातियों के भौगोलिक विवरण के भंडारण, पुनर्प्राप्ति, मैपिंग और विश्लेषण के लिए किया जाता है। पादपालय प्रतिरुपों का उपयोग जीआईएस अध्ययन के लिए विवरण/डेटा उपलब्ध कराने के लिए किया जाता है।

उन दुर्लभ, विलुप्त प्रजातियों के बारे में जानकारी प्रदान करना, जो अब प्रकृति में नहीं पाई जा सकती (वर्गीकरण, संरक्षण जीव विज्ञान):

पादपालय संग्रह अतीत में मौजूद वनस्पति संपदा को चित्रित करता है। प्रजातियाँ, जो उस समय दुर्लभ थीं, जब वर्गीकरण विज्ञानियों द्वारा पादप संग्रह किया गया था, इसको अक्सर संग्राहक द्वारा पादपालय सूचक-पत्र पर दर्ज किया जाता है। विलुप्त हो रही प्रजातियों की पहचान उन क्षेत्रों का दोबारा दौरा करने पर की जा सकेगी, जहां से पहले पादप संगृहीत किया गया था।

शिक्षण और प्रशिक्षण

शिक्षण हेतु सामग्री उपलब्ध कराना - एक बार विद्यार्थियों को पादपालय प्रतिरुप दिखाए जाने से उन्हें पादप संग्रह के लिए क्षेत्र भ्रमण के दौरान ऐसी प्रजातियों को खोजने में मदद मिलेगी।

स्नातक और स्नातक कर रहें विद्यार्थियों के लिए इंटर्नशिप और नौकरी के अवसर प्रदान करना - एक छात्र द्वारा पादपालय प्रतिरुपों पर गहन अध्ययन के बाद क्षेत्र में औषधीय या औद्योगिक प्रयोजनों के लिए औषधीय पादपों की सही पहचान से औषधीय और औद्योगिक व्यवसाय में रोजगार के अवसर प्रदान करता है।

विद्यार्थियों और युवा वैज्ञानिकों को प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों से मिलने के अवसर प्रदान करना - विद्यार्थी पादपालय प्रतिरुपों के परामर्श से अक्सर प्रसिद्ध वर्गिकीविज्ञों के साथ बातचीत करने में सक्षम होते है।

लोकजन के लिए शिक्षा पाठ्यक्रम चलाना - सर्वसाधारण विशेष रूप से महिलाओं और छोटे बच्चों को पादपालय प्रतिरुपों के माध्यम से स्थानीय पादपों की प्रजाति के उपयोग के बारे में शिक्षित किया जा सकता है।

भारत के महत्वपूर्ण पादपालय

क्रम संख्या	पादपालय (परिवर्णी)	स्थान	प्रतिरुपों की संख्या
1.	केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय (CAL)	हावड़ा	2,000.000
2.	वन अनुसंधान संस्थान (DD)	देहरादून	3,30,000
3.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र (ASSAM)	शिलांग	2,90,650
4.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, दक्षिणी क्षेत्रीय केंद्र (MH)	कोयम्बत्तूर	2,66,000
5.	राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान (LWG)	लखनऊ	2,65,572

क्रम संख्या	पादपालय (परिवर्णी)	स्थान	प्रतिरुपों की संख्या
6.	रैपिनैट पादपालय, सेंट जोसेफ कॉलेज (RHT)	तिरूचिरापल्ली	2,25,686
7.	ब्लैटर पादपालय, सेंट जेवियर कॉलेज (BLT)	मुंबई	1,81,186
8.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पश्चिमी क्षेत्रीय केंद्र (BSI)	पुणे	1,76,600
9.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केंद्र (BSD)	देहरादून	1,24,392
10.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्रीय केंद्र (BSA)	इलाहाबाद	1,07,968
11.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, औद्योगिक अनुभाग, भारतीय संग्रहालय (BSIS)	कोलकाता	70,000
12.	आगरकर अनुसंधान संस्थान (AHMA-25,000; AMH-39418)	पुणे	64,418
13.	केंद्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान (CDRI)	लखनऊ	52,000
14.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, सिक्किम हिमालय क्षेत्रीय केंद्र (BSHC)	गंगटोक	45,200
15.	वनस्पति विज्ञान विभाग, कालीकट विश्वविद्यालय कालीकट (CALI)	कालीकट	42,000
16.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शुष्क क्षेत्र क्षेत्रीय केंद्र (BSJO)	जोधपुर	32,600
17.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अंडमान और निकोबार क्षेत्रीय केंद्र (PBL)	पोर्ट ब्लेयर	26,000
18.	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अरूणाचल प्रदेश क्षेत्रीय केंद्र (ARUN)	ईटानगर	20,000

विश्व के 12 बड़े पादपालय

परिवर्णी	स्थान	नाम	प्रतिरुपों की संख्या (लाखों में)
K	लंदन, यूके	रॉयल बोटेनिक गार्डेन, कीव	8.1
P, PC	पेरिस, फ्रांस	म्यूजियम नेशनल डीहिस्टोरे नैचुरेले	8
NY	न्यूयॉर्क, यूएसए	न्यूयॉर्क बोटेनिकल गार्डेन	7.9
MO	सेंट लूईस, एमओ	मिसौरी बोटेनिकल गार्डेन	6.9
LE	सेंट पीटरबर्ग, रूस	कोमारोव बोटेनिकल इंस्टिच्यूट	6
G	जिनेवा, स्विट्ज़रलैंड	कंजरवेटरे एट जार्डिन वोटेनिक्स डे ला विले डे	6
W	विएना, आस्ट्रिया	नेटुहिस्टोरिसचेस म्यूजियम	5.5
BM	लंदन, यूके	ब्रिटिश म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री	5.2
US	वाशिंगटन डीसी	स्मिथ्सोनियान इंस्टिच्यूशन	5.1
L, U, WAG	नीदरलैंड	द नेशनल पाद्पालय, नीदरलैंड (एनएचएन)	5
GH, A, AMES, ECON, FH	कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स	हार्वर्ड यूनिवर्सिटी हर्बेरिया	5
FI	फ्लोरेंस, इटली	नैचुरल हिस्ट्री म्यूजियम	5

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 72-74 (2025)

आद्रभूमियों के जैव-भू-रसायन

अर्क बनर्जी, वरिष्ठ परिरक्षण सहायक

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण मुख्यालय

आद्रभूमियाँ पृथ्वी के सबसे विविधतापूर्ण एवं उत्पादक पारिस्थितिक तंत्रों में से एक हैं। ये क्षेत्र स्थायी या अस्थायी रूप से जलसिंचित होते हैं, जिससे यहाँ विशेष प्रकार की वनस्पति, जीव-जंतु तथा सूक्ष्मजीव समुदाय विकसित होते हैं। ध्रुवीय जलवायु में उच्च शीतलता को छोडकर, उष्णकटिबंधीय से लेकर टुंड्रा जलवायु तक की अंचल में आद्रभूमि की उपस्थिति को परिलक्षित किया जा सकता है। कुल धरती के क्षेत्रफल का करीब 6% भाग लगभग 1200 मिलियन हेक्टर इलाका आद्रभूमि से घिरा है। "जैव-भू-रसायन" उन प्रक्रियाओं को दर्शाता है जिनमें जीव, पृथ्वी और रासायनिक तत्व एक-दूसरे से अंतःक्रिया करते हैं। आद्रभूमियों में जैव-भू-रसायन मुख्यतः पोषक तत्वों (जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस), कार्बन, गंधक, लौह आदि के चक्रण एवं परिवर्तन पर आधारित होता है। यह न केवल पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यक्षमता को बनाए रखने में सहायक होता है, बल्कि वैश्विक जलवायु और मानव कल्याण को भी प्रभावित करता है।

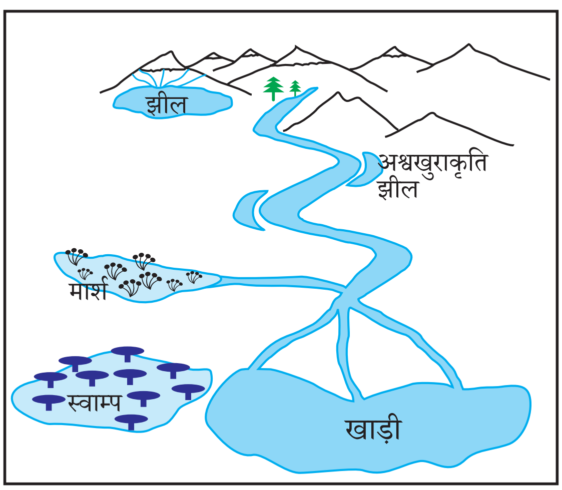

चित्र : भिन्न प्रकार की आर्द्रभूमियाँ

आद्रभूमियों की विशेषताएँ और महत्त्व:

- आद्रभूमियों की तीन प्रमुख विशेषताएँ होती हैं:
- जल की उपस्थिति
- विशेष मृदा
- जल-जैविकी के अनुकूल वनस्पति

ये पारिस्थितिक तंत्र कार्बन का प्रमुख भंडार होते हैं, बाढ़ नियंत्रण में मदद करते हैं, जल शुद्ध करते हैं, जैव विविधता को बढ़ावा देते हैं और मानव आजीविका को सहारा प्रदान करते हैं।

जैव-भू-रसायन - अवधारणा और भूमिका:

जैव-भू-रसायन, तीन प्रमुख अवयवों की परस्पर क्रिया पर आधारित है:

- **जीव:** सूक्ष्मजीव, पौधे, जानवर
- **भू-तत्व:** मिट्टी, खनिज
- **रासायनिक प्रक्रियाएँ:** पोषक तत्व चक्र, ऑक्सीकरण - अपचयन प्रतिक्रियाएँ

आद्रभूमियों में ये प्रक्रियाएँ धीमी गति से होती हैं क्योंकि वहाँ ऑक्सीजन की मात्रा सीमित होती है। इसलिए वहाँ के जैव-भू-रासायनिक चक्र अन्य पारिस्थितिकी तंत्रों से भिन्न होते हैं।

प्रमुख जैव-भू-रासायनिक चक्र:

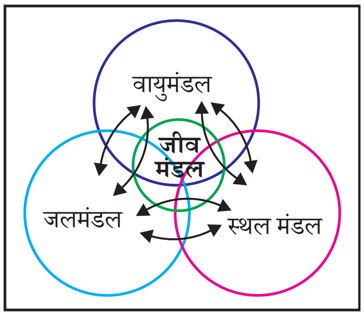

चित्र : जीवज तत्वों और भौत तत्वों के बीच संबंध का वैचारिक आरेख

1. **कार्बन चक्र:**

- **कार्बन का भंडारण:** आद्रभूमियाँ वैश्विक कार्बन के प्रमुख भंडार हैं। यहाँ मृत पौधों एवं कार्बनिक पदार्थों का अपघटन धीमी गति से होता है, जिससे पीट (peat) का निर्माण होता है।
- **मिथेन उत्सर्जन:** ऑक्सीजन की कमी के कारण मीथेन उत्पादक जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को मीथेन में परिवर्तित करते हैं, जो एक शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस है।
- **कार्बनडायऑक्साइड अवशोषण और उत्सर्जन:** पौधों द्वारा प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से CO_2 का अवशोषण होता है, वहीं अपघटन एवं श्वसन से CO_2 मुक्त होती है।

2. **नाइट्रोजन चक्र:**

- **नाइट्रोजन स्थिरीकरण:** वायुमंडलीय नाइट्रोजन को कुछ सूक्ष्मजीव अमोनिया में बदलते हैं।
- **नाइट्रिफिकेशन:** ऑक्सीजन की उपस्थिति में अमोनिया से नाइट्राइट और फिर नाइट्रेट बनता है। लेकिन आद्रभूमियों में यह सीमित होता है।
- **डीनाइट्रिफिकेशन:** ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में नाइट्रेट को गैसीय नाइट्रोजन में परिवर्तित कर दिया जाता है, जिससे नाइट्रोजन वापस वायुमंडल में चला जाता है।

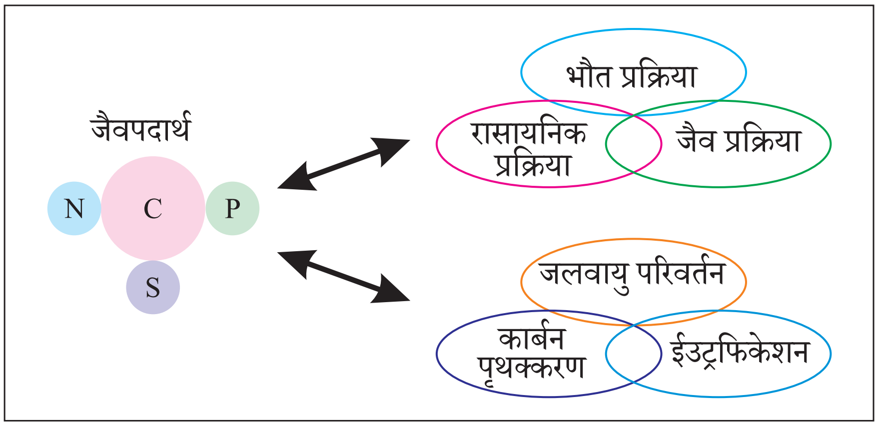

चित्र : भौत, रासायनिक एवं जैव प्रक्रिया के बीच आपसी संबंध तथा जीवजगत के वैश्विक स्तर की प्रक्रियाएं

3. **फॉस्फोरस चक्र:** फॉस्फोरस सामान्यतः मृदा कणों से जुड़ा रहता है और ऑक्सीजन की स्थिति के अनुसार उपलब्धता बदलती रहती है। ऐनॉक्सिक परिस्थितियों में आयरन के साथ जुड़ा फॉस्फोरस मुक्त होकर जल में घुल जाता है, जिससे यूट्रोफिकेशन की संभावना बढ़ जाती है।

4. **गंधक चक्र:** गंधक युक्त यौगिक (जैसे सल्फेट) सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटित होकर हाइड्रोजन सल्फाइड में परिवर्तित हो जाते हैं। हाइड्रोजन सल्फाइड एक विषैली गैस है जो पौधों की वृद्धि को प्रभावित कर सकती है।

मृदा के रासायनिक परिवर्तन:

- **रेडॉक्स स्थितियाँ:** आद्रभूमियों में जल जमाव के कारण ऑक्सीजन की कमी होती है, जिससे मृदा में ऐनॉक्सिक स्थितियाँ बनती हैं। इससे अपचयन की प्रक्रियाएँ सक्रिय हो जाती हैं।
- **धातुओं का घुलनशीलता परिवर्तन:** आयरन और मैंगनीज़ जैसे धातु अपचयन द्वारा घुलनशील अवस्था में आ जाते हैं, जिससे उनकी गतिशीलता और जैव उपलब्धता बढ़ जाती है।

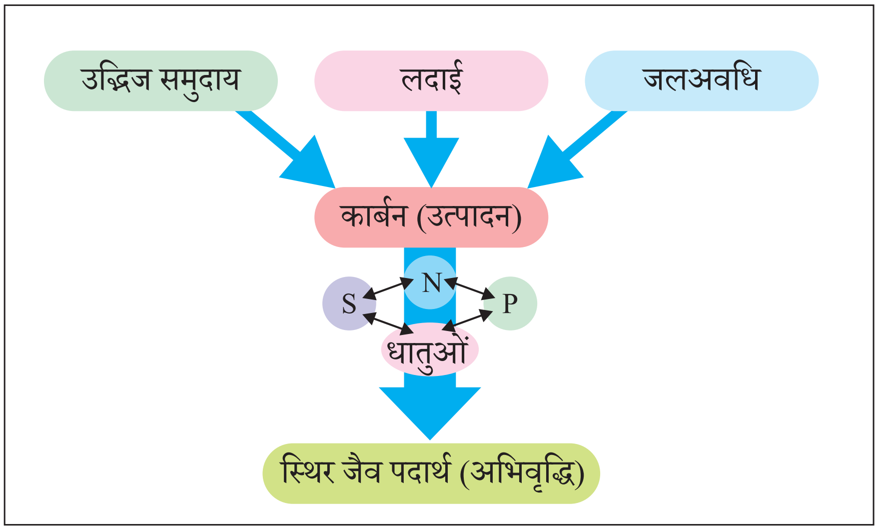

चित्र : युग्मित जैव-भू-रसायनिक चक्रों और आर्द्रभूमि में जैव पदार्थ अभिवृद्धि के बीच आपसी संबंध

सूक्ष्मजीवों की भूमिका: सूक्ष्मजीव जैव-भू-रसायन की धुरी हैं। वे जैव अपघटन, पोषक तत्व चक्रण, गैसों के उत्पादन और विषैले तत्वों को न्यूट्रलाइज़ करने में अहम भूमिका निभाते हैं। मीथेन उत्पादक, डीनाइट्रीफाइंग, सल्फेट-अपघटक और नाइट्रोजन स्थिर करने वाले बैक्टीरिया जैव-भू-रासायनिक चक्र के प्रमुख चालक हैं।

आद्रभूमियों का जलवायु परिवर्तन से सम्बन्ध: आद्रभूमियाँ एक ओर तो कार्बन सिंक के रूप में कार्य करती हैं, वहीं दूसरी ओर मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीनहाउस गैसें उत्सर्जित करती हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण जल स्तर में परिवर्तन, तापमान में वृद्धि एवं वर्षा के पैटर्न में बदलाव, जैव-भू-रासायनिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करते हैं।

मानवजनित प्रभाव: कृषि अपशिष्ट, रासायनिक उर्वरकों, औद्योगिक कचरे के कारण पोषक तत्वों का अत्यधिक जमाव होता है, जिससे यूट्रोफिकेशन एवं ऑक्सीजन की कमी जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। आद्रभूमियों का अतिक्रमण जैव-भू-रासायनिक संतुलन को बिगाड़ता है, जिससे कार्बन भंडारण क्षमता घटती है।

प्रबंधन: जलस्तर को संतुलित बनाकर जैव-भू-रासायनिक चक्रों को स्थिर रखा जा सकता है। नाइट्रोजन और फॉस्फोरस के बाहरी स्रोतों को नियंत्रित कर यूट्रोफिकेशन को रोका जा सकता है।

प्राकृतिक वनस्पति का संरक्षण: ये पौधे न केवल पोषक तत्वों को अवशोषित करते हैं, बल्कि सूक्ष्मजीव गतिविधियों को भी सहयोग देते हैं। आद्रभूमियों के जैव-भू-रसायन प्रकृति का अद्भुत संतुलन है जिसमें जीव, मृदा, जल और रसायन परस्पर निर्भर होकर पारिस्थितिक तंत्र की कार्यक्षमता को बनाए रखते हैं। इन प्रक्रियाओं का अध्ययन और संरक्षण न केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है, बल्कि मानव समाज के लिए जल, भोजन, जलवायु एवं जैव विविधता की स्थिरता हेतु आवश्यक है। बदलते पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य में आद्रभूमियों के जैव-भू-रासायनिक संतुलन को बनाए रखना हमारी एक साझा जिम्मेदारी है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 75-77 (2025)

भारत में बाह्य-स्थलीय बीज बैंकिंग: अवसंरचना, वैज्ञानिक प्रभावशीलता, संरक्षण-परिणाम तथा नीतिगत दिशा

प्रियंका, सुमन हलदर व संदीप कुमार चौहान

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा

बीज बैंक आनुवंशिक संसाधनों के बाह्य स्थल भंडार के रूप में कार्य करते हैं, जो फसल सुधार, वैज्ञानिक शोध और पारिस्थितिकी तंत्र संरक्षण के लिए विविधता का संरक्षण करते हैं। भारत में इन प्रयासों में राष्ट्रीय जीन बैंक, उच्च-स्तरीय वॉल्ट और संस्थागत एवं सामुदायिक प्रबंधित सुविधाओं का एक नेटवर्क शामिल है जो पारंपरिक, जंगली और कृषि जर्मप्लाज्म की सुरक्षा करते हैं। शुष्कन-प्रतिरोधी बीजों को कठोर नियंत्रित परिस्थितियों में संग्रहीत करके, बीज बैंकिंग वैश्विक पादप संरक्षण को बल प्रदान करती है। भारत की असाधारण पादप समृद्धि और उच्च संकट स्तरों को देखते हुए, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर समन्वित बाह्य स्थल कार्यक्रम लागू किए गए हैं। इस समीक्षा में अंतरराष्ट्रीय उदाहरणों के आधार पर, बीज बैंकिंग के वैज्ञानिक सिद्धांतों की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए भारत के बुनियादी ढाँचे की तुलना की गई है जिसमें संरक्षण के प्रभावों और चुनौतियों का मूल्यांकन और देश की वानस्पतिक विरासत की लचीलापन को मज़बूत करने संबंधी सुझाव शामिल हैं।

बीज बैंकिंग: सिद्धांत और वैश्विक ढाँचा

- **वैज्ञानिक आधार:** अधिकांश आवृतबीजी (80%) ऐसे रूढ़िवादी बीज उत्पन्न करते हैं जो कम नमी वाले -18°C तापमान पर दीर्घकालिक भंडारण में दशकों या सदियों तक व्यवहार्य बने रह सकते हैं। अड़ियल प्रजातियों के लिए, जिनके बीज सूखने पर व्यवहार्यता खो देते हैं (जैसे *मैंगिफेरा इंडिका*) तरल नाइट्रोजन (-196°C) में निम्नताप परिरक्षण आवश्यक है ताकि कोशिका के अंदर बर्फ जमने से रोका जा सके। कठोर व्यवहार्यता निगरानी, आमतौर पर आई.एस.टी.ए. प्रोटोकॉल (आई.एस.टी.ए. 2023) का पालन करते हुए आवधिक अंकुरण परीक्षणों के माध्यम से, बीज की अखंडता सुनिश्चित करती है और पुनर्जनन कार्यक्रम की जानकारी देती है।
- **वैश्विक मानक:** रॉयल बॉटेनिक गार्डन्स, क्यू स्थित मिलेनियम सीड बैंक (एम.एस.बी.) वर्तमान में 40,000 प्रजातियों के 2.4 बिलियन से अधिक बीजों का संग्रह करता है, जो बाह्य-स्थानिक संरक्षण के लिए एक वैश्विक मानक के रूप में कार्य करता है। एम.एस.बी के पूरक के रूप में, स्वालबार्ड ग्लोबल सीड वॉल्ट दुनिया की सबसे बड़ी और सबसे सुरक्षित बीज भंडारण सुविधा के रूप में कार्य करता है, जिसमें 1.2 मिलियन फसल अभिगम हैं, जो दुनिया भर में बैकअप रणनीतियों को आधार प्रदान करता है।

भारत में बीज बैंकिंग अवसंरचना: राष्ट्रीय से सामुदायिक स्तर तक फील्ड जीन बैंक

बीज बैंकिंग के लिए अनुपयुक्त अड़ियल वर्गकों के संरक्षण हेतु, भारत विशेष केंद्रों पर फील्ड जीन बैंक संचालित करता है। जोधपुर स्थित आई.सी.ए.आर- सी.ए.जे.ड.आर.आई में शुष्क अनुकूलित प्रजातियों (जैसे प्रोसोपिस सिनेरिया) के 3200 परिग्रहण हैं, जबकि केरल स्थित उष्णकटिबंधीय वनस्पति उद्यान एवं अनुसंधान संस्थान पश्चिमी घाट के 48 संकटग्रस्त स्थानिक पौधों का संरक्षण करता है, और वानस्पतिक पुनर्जनन एवं अनुसंधान के लिए जीवित संग्रह बनाए रखता है।

- **राष्ट्रीय जीन बैंक:** भारत का पहला राष्ट्रीय जीन बैंक 1996 में आई.सी.ए.आर-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो (आई.सी.ए.आर-एन.बी.पी.जी.आर) द्वारा अपने नई दिल्ली मुख्यालय में स्थापित किया गया था। फरवरी 2025 तक, इसमें लगभग 1,800 प्रजातियों के लगभग 0.47 मिलियन (4.68 लाख) जर्मप्लाज्म प्रविष्टियों का संरक्षण किया गया है। इन परिग्रहणों में अनाज (1,70,000 परिग्रहण), बाजरा (60,600 से अधिक), फलियाँ (69,200 से अधिक), तिलहन (63,500 से अधिक) और सब्जियाँ (लगभग 30,000) शामिल हैं, जो भारत की फसल सुधार और खाद्य सुरक्षा पहलों का आधार हैं। केंद्रीय बजट 2025-26 में, सरकार ने दस लाख जर्मप्लाज्म वंशावलियों को धारण करने की क्षमता वाले दूसरे राष्ट्रीय जीन बैंक की घोषणा की, जो बाह्य-स्थान संरक्षण को एक महत्वपूर्ण बढ़ावा देता है।

- **भारतीय बीज भंडार (चांगला, लद्दाख):** लद्दाख में चांगला दर्रे पर 17,300 फीट की ऊँचाई पर 2010 में स्थापित, भारतीय बीज भंडार एक उच्च-ऊँचाई वाली सुविधा है जिसका प्रबंधन रक्षा उच्च-ऊँचाई अनुसंधान संस्थान और एन.बी.पी.जी.आर द्वारा संयुक्त रूप से किया जाता है। यह भारत की फसल विविधता के लिए एक सुरक्षित बैकअप के रूप में कार्य करता है। ग्रेनाइट की चट्टान पर उकेरी गई यह तिजोरी, सौर ऊर्जा और डीजल बैकअप का उपयोग करके -18°C पर वायुरोधी रूप से सीलबंद क्रायोटैंकों को बनाए रखती है। इसमें 200 से अधिक पौधों की प्रजातियों के 10,000 से अधिक बीज संगृहीत हैं और नुकसान से बचाव के लिए सभी पैकेटों को नई दिल्ली स्थित निचली भूमि स्थित राष्ट्रीय जीन बैंक में आर.एफ.आई.डी टैगिंग के माध्यम से प्रतिबिम्बित किया जाता है।

- **सामुदायिक बीज बैंक:** सामुदायिक बीज बैंक (सी.एस.बी) स्थानीय स्तर पर प्रबंधित संस्थाएँ हैं जो प्रमुख, गौण और कम उपयोग वाली फसलों के बीजों का संग्रह, भंडारण और आदान-प्रदान करती हैं। ये भू-प्रजातियों और उपेक्षित प्रजातियों के यथास्थान संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण हैं, लेकिन अक्सर इन्हें धन की कमी, बुनियादी ढाँचे की कमी और तकनीकी विशेषज्ञता की कमी का सामना करना पड़ता है। कृषि जैव विविधता संरक्षण के क्षेत्र में अग्रणी गैर-सरकारी संगठन 'नवदान्या' ने पिछले 30 वर्षों में 22 राज्यों में लगभग 150 सामुदायिक बीज बैंक स्थापित किए हैं। इनमें से कई अब जलवायु प्रतिरोधी और पारंपरिक किस्मों के संरक्षण के लिए स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं। किसान अधिकार "डायवर्सिफार्म इंडिया" परियोजना जैसे प्लेटफ़ॉर्म प्रति राज्य दर्जनों सी.एस.बी का प्रलेखीकरण करते हैं, जो पूरे भारत में बीज संरक्षण के व्यापक जमीनी प्रयासों पर प्रकाश डालते हैं। उदाहरण- राजकोट (गुजरात) के निकट बलसर गाँव में सुरक्षा गार्ड राजेश बरैया द्वारा 2019 में शुरू किए गए वंदे वसुंधरा बीज बैंक ने 200 से अधिक देशी और औषधीय बीजों की किस्मों का संरक्षण किया है और हजारों पैकेट वितरित किए हैं। 2025 के मानसून सत्र में 4,000 बीज पैकेट वितरित करने का लक्ष्य रखते हुए, यह बैंक 550 से अधिक शैक्षणिक संस्थानों तक पहुँच रहा है।

संरक्षण प्रभाव: भारत द्वारा किए गए प्रयासों से प्राप्त आँकड़े

- **प्रजातियों की पुनर्प्राप्ति:** बाह्य-स्थलीय बीज भंडारों ने प्रजातियों के पुनरुत्पादन को प्रत्यक्ष रूप से सुगम बनाया है। उदाहरण के लिए, गंभीर रूप से संकटग्रस्त घास *हबार्डिया हेप्टान्यूरॉन* के बीज बैंक अभिगम ने काली नदी घाटी में पुनरुत्पादन प्रयासों को बल प्रदान किया, जहाँ आवास क्षति 80% से अधिक हो गई थी। इसी प्रकार, जंगली *ओरिज़ा निवारा* के एनबीपीजीआर संग्रह ने चावल के ब्लास्ट प्रतिरोध के प्रजनन के लिए महत्वपूर्ण पर्याप्त आनुवंशिक विविधता का खुलासा किया।

- **संकट शमन:** बड़े पैमाने की बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं में, बचाव संग्रह महत्वपूर्ण साबित हुए हैं। सरदार सरोवर बांध के डूबने से पहले, एम.एस.एस.आर.एफ ने प्रभावित क्षेत्रों से 97% स्थानिक वनस्पतियों को संरक्षित किया, जिससे अपरिवर्तनीय क्षति को रोका जा सका। आपदा के बाद, ओडिशा के सी.एस.बी ने चक्रवाती क्षति के बाद एक ही फसल मौसम में 85% खोए हुए बीज भंडार को बहाल कर दिया।

भारतीय संदर्भ में चुनौतियाँ: उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद, भारत की बाह्य-स्थल बीज-संरक्षण प्रणाली अभी भी कई गंभीर कमियों से ग्रस्त है। देश की लगभग 22% संकटग्रस्त वृक्ष प्रजातियाँ ऐसे अड़ियल बीज उत्पन्न करती हैं जिन्हें पारंपरिक निम्न-तापमान, निम्न-नमी परिस्थितियों में संरक्षित नहीं किया जा सकता है - *मधुका इन्सिग्निस* इसका प्रमुख उदाहरण है - जिससे क्रायोजेनिक क्षमता का विस्तार एक तत्काल प्राथमिकता बन गया है। इस चुनौती को और भी जटिल बनाते हुए, एन.बी.पी.जी.आर (2022) द्वारा किए गए एक ऑडिट में पाया गया कि केवल 38% घरेलू बीज बैंक ही आई.एस.टी.ए कोल्ड-स्टोरेज मानकों को पूरी तरह से पूरा करते हैं, जिससे कई संगृहीत उपार्जनों की दीर्घकालिक व्यवहार्यता पर संदेह पैदा होता है। कवरेज भी अपूर्ण है: मिलेनियम सीड बैंक साझेदारी के आंकड़ों के अनुसार, आई.यू.सी.एन-सूचीबद्ध संकटग्रस्त प्रजातियों में से 15% से भी कम वर्तमान में बाह्य संग्रहण में प्रतिनिधित्व करती हैं। यह कमी लंबे समय से चली आ रही वर्गीकरण संबंधी अस्पष्टताओं और सीमित संसाधनों के कारण है। अंत में, नियामक ढाँचों में अभी भी जर्मप्लाज्म के व्यवसायीकरण के लिए स्पष्ट लाभ-साझाकरण प्रावधानों का अभाव है, जो जैविक विविधता अधिनियम के तहत समान उपयोग में बाधाएँ पैदा करता है और व्यापक भागीदारी के लिए प्रोत्साहन को कमजोर करता है।

बीज बैंकों में प्रमुख कार्य: बाह्य-स्थल बीज संरक्षण, पारंपरिक बीजों को कम तापमान और कम नमी वाली परिस्थितियों में संगृहीत करके, मूल्यवान आनुवंशिक संसाधनों को आवास क्षति, प्राकृतिक आपदाओं और निरंतर आनुवंशिक क्षरण से बचाकर, आधार प्रदान करता है। इस सुरक्षित भंडार के आधार पर, व्यवस्थित जर्मप्लाज्म लक्षण-निर्धारण और मूल्यांकन, प्रमुख लक्षणों की पहचान करता है, जैसे उपज क्षमता, कीटों और रोगों के प्रति प्रतिरोध, और जलवायु तनावों के प्रति लचीलापन, जो आधुनिक प्रजनन कार्यक्रमों का मार्गदर्शन करते हैं। लक्षण-निर्धारण के बाद, जर्मप्लाज्म को पादप विविधता संरक्षण और कृषक अधिकार विनियमों के अनुरूप शोधकर्ताओं, पादप प्रजनकों, किसानों और संरक्षणवादियों के साथ साझा किया जाता है, जिससे जिम्मेदार वितरण और उपयोग सुनिश्चित होता है। महत्वपूर्ण रूप से, ये तकनीकी प्रयास सामुदायिक सहभागिता पर आधारित हैं। किसानों और स्थानीय संरक्षकों को प्रशिक्षण, क्षमता-निर्माण सहायता और समान लाभ-साझाकरण प्राप्त होता है, जिससे पारंपरिक ज्ञान को समकालीन संरक्षण प्रथाओं के साथ मिलाकर एक वास्तविक समावेशी रणनीति बनाने में मदद मिलती है।

बाह्य-स्थानीय बीज संरक्षण को आगे बढ़ाने हेतु रणनीतिक रोडमैप: भारत के बाह्य-स्थानीय बीज संरक्षण को सुदृढ़ करने हेतु एक व्यापक रोडमैप संरक्षित क्षेत्रों के भीतर "बीज उपग्रह" बैंकों का एक नेटवर्क बनाने से शुरू होता है, जिससे स्वस्थानिक पादप समष्टियों को राष्ट्रीय स्तर के भंडारों से जोड़ा जा सके और संग्रहों की प्रतिनिधित्व क्षमता में सुधार हो सके। इस भौतिक नेटवर्क के आधार पर, संरक्षणवादियों को अनुकूली आनुवंशिक विविधता को अधिकतम करने वाले बीज समूहों की पहचान और भंडारण हेतु जनसंख्या-जीनोमिक उपकरण अपनाने चाहिए विशेषकर जलवायु लचीलेपन से संबंधित लक्षणों को, जैसा कि राजशेखरन और रामनाथ राव (2020) द्वारा प्रदर्शित किया गया है। साथ ही, निम्नताप परिरक्षण क्षमता को बढ़ाया जाना चाहिए ताकि 2030 तक राष्ट्रीय जैव विविधता कार्य योजना के लक्ष्यों के अनुरूप, कम से कम 500 अतिरिक्त अड़ियल प्रजातियों को सुरक्षित रूप से संगृहीत किया जा सके। अंततः सार्थक नीतिगत सुधार आवश्यक हैं। जैविक विविधता अधिनियम (संशोधन 2023) में संशोधनों द्वारा सामुदायिक बीज बैंकों को औपचारिक रूप से मान्यता दी जानी चाहिए और स्पष्ट लाभ-साझाकरण प्रावधानों और क्षमता-निर्माण समर्थन को शामिल किया जाना चाहिए, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि स्थानीय हितधारक राष्ट्रीय संरक्षण प्रयास में पूरी तरह से एकीकृत हों और उन्हें इससे लाभ मिले।

भारत की व्यापक बीज बैंकिंग प्रणाली जिसमें राष्ट्रीय जीन बैंक, क्षेत्र संग्रह और समुदाय आधारित पहल शामिल हैं,ने कई पादप प्रजातियों के विलुप्त होने के जोखिम को प्रभावी ढंग से कम किया है। हालाँकि, अड़ियल बीजों के भंडारण, बुनियादी ढाँचे को उन्नत करने और नीतिगत कमियों को दूर करने जैसी चुनौतियों पर काबू पाना महत्वपूर्ण है। जीनोमिक स्क्रीनिंग का लाभ उठाकर, निम्नताप परिरक्षण क्षमता का विस्तार करके और परस्पर जुड़े संरक्षण नेटवर्क को बढ़ावा देकर, भारत बढ़ते पर्यावरणीय खतरों के बीच वनस्पति विविधता की रक्षा करने की अपनी क्षमता को बढ़ा सकता है। यह बहुस्तरीय दृष्टिकोण न केवल देश की खाद्य और पोषण सुरक्षा को मजबूत करता है और इसकी कृषि विरासत को संरक्षित करता है, बल्कि इसे जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता हानि से उत्पन्न भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए भी तैयार करता है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 78-79 (2025)

अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ और लाल सूची

विजय, डेविड लालसामा बियते एवं एन. ऑडियो

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003

अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ, प्राकृतिक दुनिया की स्थिति का आकलन करने और इसके संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला एक अंतरराष्ट्रीय प्राधिकरण है। यह सरकारी, गैर सरकारी, वैज्ञानिक, आर्थिक, स्वदेशी नागरिक समूह तथा धर्म-आधारित आदि जैसे 1400 से अधिक संगठनों से मिलकर बना है। इसकी स्थापना अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के रूप में 5 अक्टूबर 1948 को फॉनटेनब्लियू, फ्रांस में की गई थी। इसका मुख्यालय स्विटजरलैंड के ग्लैंड में स्थित है, जिसका नेतृत्व महानिदेशक द्वारा किया जाता है। इस प्राधिकरण के 8 क्षेत्रीय कार्यालय और 50 से अधिक देशों में इकाई कार्यालय स्थित हैं। इनका प्रमुख कार्य प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु वैज्ञानिक ज्ञान और उपकरण प्रदान करके अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना है। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ (आईयूसीएन) का मुख्य उद्देश्य प्रकृति के संरक्षण और सतत विकास को सुनिश्चित करने पर केंद्रित है। वनस्पतियों और जीवों की विभिन्न प्रजातियों के संरक्षण, संरक्षण की स्थिति, विलुप्त होने के खतरे का आकलन करने के लिए मानदंड तथा वैश्विक संरक्षण प्रयासों को समझने के लिए अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ की सिफारिशें बहुमूल्य संसाधन हैं। इसने प्रमुख अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों जैसे की जैव विविधता सम्मेलन, आर्द्रभूमि रामसर सम्मेलन, लुप्तप्राय प्रजाति अंतरराष्ट्रीय व्यापार सम्मेलन, विश्व विरासत सम्मेलन और पर्यावरण संबंधित अन्य सम्मेलनों के आयोजन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस संस्था ने वर्ष 1964 में संकटग्रस्त प्रजातियों की आईयूसीएन रेड लिस्ट जारी किया था।

वर्तमान में, अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ विश्व का सबसे अनोखा और प्रतिष्ठित पर्यावरण संरक्षण नेटवर्क है, जो प्रजातियों के संरक्षण, पर्यावरणीय कानून, संरक्षित क्षेत्रों, सामाजिक एवं आर्थिक नीतियों, पारिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन, शिक्षा और संचार जैसे विविध पहलूओं के लिए समर्पित है। सन 1980 में, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम और विश्व वन्यजीव कोष के साथ साझेदारी करते हुए, आईयूसीएन ने विश्व संरक्षण रणनीति प्रकाशित की, जो एक ऐसा दस्तावेज था, जिसने सतत विकास की अवधारणा को पारिभाषित करने में मदद किया और वैश्विक संरक्षण और सतत विकास के एजेंडे को एक नया आकार दिया। सन 1992 में, बढ़ती पर्यावरणीय चिंताओं को ध्यान में रखकर, संयुक्त राष्ट्र द्वारा रियो डी जेनेरियो में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन में अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे वैश्विक पर्यावरण संरक्षण प्रयासों को गति मिली।

अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ की संरचना और कार्यप्रणाली

अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ का प्रमुख प्रशासनिक निकाय आईयूसीएन परिषद है। इस संगठन से जुड़ने वाले सदस्य संगठन एक लोकतांत्रिक प्रणाली के अंतर्गत कार्य करते हैं, जिसमें वे विभिन्न आयोगों के अध्यक्षों का चुनाव करते हैं। ये अध्यक्ष चार वर्ष के कार्यकाल के लिए नियुक्त किए जाते हैं। प्रत्येक चार वर्षों में, आईयूसीएन द्वारा विश्व संरक्षण सम्मेलन का आयोजन किया जाता है, जिसमें सभी सदस्य भाग लेते हैं। इस सम्मेलन में वैश्विक संरक्षण प्रयासों के एजेंडे पर चर्चा की जाती है और प्रस्तावों पर मतदान के माध्यम से निर्णय लिए जाते हैं। आईयूसीएन की संरचना में छह विशेष आयोग शामिल हैं, जो विभिन्न क्षेत्रों जैसे प्रजातियों के संरक्षण, संरक्षित क्षेत्रों का प्रबंधन, पर्यावरण कानून, सामाजिक व आर्थिक नीति, पारिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन तथा पर्यावरण शिक्षा व संचार आदि को समर्पित हैं। आईयूसीएन की परियोजनाएँ स्थानीय समूदायों के पारंपरिक ज्ञान और वैज्ञानिक तकनीकों को समन्वित कर कार्य करती हैं। इनका उद्देश्य आवासीय क्षति को रोकना, पारिस्थितिकी तंत्र का पुनरुद्धार करना और लोगों के समग्र कल्याण को बढ़ाना है। इन पहलों के माध्यम से आईयूसीएन न केवल संरक्षण को प्रोत्साहित करता है, बल्कि महत्वपूर्ण डेटा और सूचनाओं का भंडार भी तैयार करता है, जो उसकी विश्लेषणात्मक क्षमताओं को मजबूत करता है। इससे वह वैश्विक संरक्षण एजेंडा को आकार देने वाले प्रस्तावों पर ठोस निर्णय ले सकता है।

आईयूसीएन लाल सूची, संरक्षण के प्रयास और वैश्विक पहल: आईयूसीएन लाल सूची पौधों, जानवरों और कवकों की विलुप्ति संबंधी वैश्विक सूचना का एक व्यापक स्रोत है। यह पाँच वैज्ञानिक मानदंडों जैसे जनसंख्या में गिरावट, भौगोलिक सीमा, आबादी का आकार और विलुप्त होने की संभावना आदि के आधार पर प्रजातियों का वर्गीकरण करती है। यह सूची संरक्षण से जुड़े निर्णयों को तय करने में मदद करती है। लिविंग प्लैनेट रिपोर्ट(2024) के अनुसार, 1970 से 2020 के बीच 5495 कशेरु की प्रजातियों की औसत जनसंख्या में 73%

गिरावट दर्ज की गई है, जबकि मीठे पानी की प्रजातियों में 85% गिरावट एवं सबसे अधिक प्रभावित हुई हैं। लगभग 40% पौधों की प्रजातियां आवास विनाश के कारण विलुप्ति के कगार पर हैं। भारत की जैव विविधता में गिरावट देखी गई है, लेकिन अधिकांश पौधों और जानवरों की प्रजातियों के विलुप्ति व इससे जुडे जोखिम पर पर्याप्त आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा और पुनर्स्थापना, दीर्घकालिक स्थिरता के लिए आंकड़े अत्यंत आवश्यक है। आईयूसीएन 2025 की रिपोर्ट के अनुसार, संकटग्रस्त प्रजातियों की आईयूसीएन लाल सूची में 169,420 प्रजातियां शामिल हैं, जिनमें से 76,069 पौधे, कवक और प्रजीव हैं और शेष 93,351 जंतु हैं। आईयूसीएन लाल सूची रणनीतिक योजना (2021-2023) के अनुसार, 2030 तक अतिरिक्त 2,60,000 प्रजातियों के आकलन को शामिल करने का लक्ष्य है, ताकि वर्गीकरण और भौगोलिक परिधि का विस्तार किया जा सके, जिससे प्रजातियों का प्रभावी संरक्षण संभव हो सके। जैव विविधता संरक्षण की वैश्विक आवश्यकता को स्वीकार करते हुए, विभिन्न अंतरराष्ट्रीय पहल आरंभ की गई हैं जो न केवल संरक्षण के लक्ष्यों को निर्धारित करती हैं, बल्कि वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से उन लक्ष्यों की प्रगति पर निगरानी भी रखती हैं।

भारत में राष्ट्रीय रेड लिस्टिंग की आवश्यकता और प्राथमिकताएँ: भारत के विविध पारिस्थितिक तंत्रों में वनस्पतियों और जीवों की वास्तविक संरक्षण स्थिति का सटीक प्रतिबिंब प्रस्तुत करने हेतु एक समन्वित, सहभागी और उन्नयन योग्य राष्ट्रीय रेड लिस्टिंग प्रणाली की आवश्यकता है। भारत सरकार के पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने आईयूसीएन से मान्यता प्राप्त दिशा-निर्देशों के तहत देश की वनस्पतियों और जीवों का **राष्ट्रीय रेड लिस्ट मूल्यांकन** शुरू किया है। इस मूल्यांकन के लिए भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण और भारतीय प्राणी सर्वेक्षण को नोडल एजेंसियों के रूप में नियुक्त किया गया है। साथ ही, **आईयूसीएन इंडिया, सेंटर फॉर स्पीशीज सर्वायवल, भारतीय वन्यजीव ट्रस्ट तथा स्पीशीज सर्वायवल कमीशन नेटवर्क** जैसी संस्थाएँ सहयोग प्रदान करेंगी, जिससे एक व्यापक, उन्नत और देशव्यापी जैव विविधता मूल्यांकन सुनिश्चित हो सकेगा। इस संयुक्त प्रयास से एक व्यापक, वैज्ञानिक और देशव्यापी जैव विविधता मूल्यांकन सुनिश्चित होगा, जो संरक्षण की दिशा और नीतियों को मजबूत करेगा। चूंकि प्रजातियों की संख्या अत्यधिक है और संसाधन सीमित हैं, इस कार्य को चरणबद्ध तरीके से प्राथमिकता के आधार पर किया जाएगा। विशेष रूप से निम्न प्रकार की प्रजातियों को प्राथमिकता दी जाएगी:

(i) देश की स्थानिक प्रजातियां

(ii) क्षेत्रीय स्थानिक प्रजातियां

(iii) वन्य जीव-जंतुओं और वनस्पतियों की लुप्तप्राय प्रजातियों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार सम्मेलन और वन्य जीवन (संरक्षण) संशोधन अधिनियम 2022 के तहत संरक्षित प्रजातियां

(iv) व्यापार के अंतर्गत आने वाली प्रजातियां

(v) फसली पौधों की जंगली प्रजातियां

(vi) जंगली खाद्य प्रजातियां

(vii) नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र में रहने वाली प्रजातियां

अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ ने सतत विकास की अवधारणा को वैश्विक स्तर पर स्थापित कर संरक्षण और सतत विकास एजेंडे को आकार दिया है। जैव विविधता हॉटस्पॉट्स में विलुप्ति की दर प्राकृतिक पृष्ठभूमि दर से लगभग 10,000 गुना तक अधिक है जो यह दर्शाता है कि जैव विविधता के संरक्षण के लिए सटीक वैज्ञानिक आंकड़ों, मूल्यांकन और लक्ष्योन्मुख संरक्षण कार्यों की आवश्यकता है। अत: भारत, जो विश्व के 17 महाविविध देशों में से एक है, दुनिया के कुल 36 जैव विविधता हॉटस्पॉट्स में से चार का घर है, जो इसकी जैविक विविधता की समृद्धि और विविधता को दर्शाता है। इस दृष्टिकोण से विविध पारिस्थितिकी तंत्र में वनस्पतियों और जीवों की प्रजातियों की वास्तविक संरक्षण स्थिति को प्रभावी रूप से प्रतिबिंबित करने के लिए एक राष्ट्रीय स्तर पर समन्वित, सहभागी और उन्नयन योग्य रेड लिस्टिंग प्रणाली स्थापित करना अत्यंत आवश्यक है। अत: आईयूसीएन लाल सूची नीति निर्माता और संरक्षणकर्ताओं के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 80-81 (2025)

हिमाचल प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यान - जैव विविधता संरक्षण और इको-टूरिज्म के संसाधन

बृजेश मीणा, कुमार अंबरीश, कुलदीप सिंह डोगरा, रितेश कुमार व संजीव कुमार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उच्च पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रीय केंद्र, सोलन, हिमाचल प्रदेश

हिमालय पर्वतमाला की गोद में स्थित हिमाचल प्रदेश अपने आप में वास्तविक सुंदरता से परिपूर्ण है। यह राज्य पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र का हिस्सा है जो 500 मीटर से लेकर 6800 मीटर की ऊंचाई तक लगभग 55,673 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्रफल में फैला हुआ है। इसकी सीमा पूर्व में चीन, उत्तर में जम्मू कश्मीर व लद्दाख, दक्षिण पूर्व में उत्तराखंड एवं पश्चिम में पंजाब राज्य से लगती है। भारत का यह खूबसूरत पहाड़ी राज्य अपने मनमोहक पर्यटक स्थलों के साथ-साथ आश्चर्यजनक राष्ट्रीय उद्यानों का भी घर है। यहां पर लगभग 4000 जंगली पौधों की प्रजातियां पाई जाती है जो पर्यटक और वन्यजीव प्रेमियों के लिए आकर्षण का केंद्र है। इसमें बर्फ से ढके पहाड़, घने जंगल, प्रकृति के मनोरम दृश्य और हिमाचल प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यानों की लुप्तप्राय वन्यजीव प्रजातियां शामिल हैं। इसके अलावा, इन राष्ट्रीय उद्यानों में ट्रैकिंग, रॉक क्लाइंबिंग, एडवेंचर प्रेमियों के लिए रैपिंलिंग जैसी कुछ आकर्षक गतिविधियां भी मौजूद होती है जो आपको रोमांच से भर देगी। विलक्षण जैव विविधता से परिपूर्ण इस प्रदेश में 5 राष्ट्रीय उद्यान हैं जो यहां की वानस्पतिक धरोहर को सहेजने के साथ-साथ इको- टूरिज्म को भी बढ़ावा देते हैं।

हिमाचल प्रदेश के प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान निम्न हैं :

1.ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय उद्यान: हिमाचल प्रदेश का प्रमुख पर्यटक स्थल ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय उद्यान भारत के प्रमुख राष्ट्रीय उद्यानों में से एक है, जो हिमाचल प्रदेश के कुल्लू क्षेत्र में 1500 से 6000 मीटर की ऊंचाई में 1171 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। इसे यूनेस्को ने 2014 में एक विश्व विरासत स्थल है के रूप में घोषित किया है। यह राष्ट्रीय उद्यान तीनों तरफ से हिमालय पर्वत से घिरा हुआ है। यह वर्तमान में लगभग 1900 से अधिक औषधीय पादप प्रजातियों, 375 से अधिक जानवरों की प्रजातियों, स्तनधारियों की 31 प्रजातियों और 181 पक्षियों की प्रजातियों का घर है। ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क को 1984 में राष्ट्रीय उद्यान बनाने का दर्जा दिया गया था। देवदार और ओक के पेड़ों के कारण यह नेशनल पार्क और भी अधिक आकर्षित हो जाता है। यहां पर लगभग 37 पादपो की प्रजातियां पाई जाती है जो संकटग्रस्त की श्रेणी में आती है जिनमें *ऐकोनाइटस*, *अरनीबिया*, *डेकटाइलोराइजा*, *हथा जड़ी*, *जैनसियाना कुरो*, *पिककोराइजा* आदि जो वन्य जीव प्रेमियों और प्रकृति प्रेमियों के लिए यह स्वर्ग के समान है। जीव जंतुओं में वैस्टर्न ट्रेगोपान, विभिन्न प्रकार की तितलियां, रेड फॉक्स, स्नो लिपर्ड, गोरल, हिमालय ईबेक्स आदि प्रमुख हैं।

2. पिन वैली राष्ट्रीय उद्यान: हिमाचल प्रदेश के लाहौल और स्पीति जिले में कोल्ड डेजर्ट बायोस्फीयर रिजर्व में स्थित पिन वैली नेशनल पार्क हिमाचल प्रदेश के सबसे आकर्षक राष्ट्रीय उद्यान में से एक है जिसे 1987 में स्थापित किया गया। यह राष्ट्रीय उद्यान उत्तर पश्चिम हिमालय में स्थित है। शुष्क ऐलपाइन क्षेत्र में फैला यह क्षेत्र 513 विशिष्ट पादप प्रजातियों से सुसज्जित है जिसमें विभिन्न स्थानिक एवं औषधीय संकटग्रस्त प्रजातियां शामिल हैं। पार्क का मुख्य क्षेत्र 675 वर्ग किलोमीटर के विशाल क्षेत्र में फैला हुआ है जबकि इसका बफर जोन लगभग 1150 वर्ग किलोमीटर में विस्तारित है। आज यह लुप्तप्राय हिम तेंदुए सहित और साइबेरियन इबेक्स, भारत, रेड फॉक्स, वीज़ल और माट्रेन सहित जीवों की लगभग 20 से अधिक प्रजातियों का घर है, जो पिन वैली पार्क का सबसे महत्वपूर्ण निवासी हैं जबकि पक्षियों की कई प्रजातियों में पिका, स्नो कांक, दाढ़ी वाले गिद्ध, चकोर, गोल्डन ईगल, ग्रिफोन, हिमालयन चाऊ और रेवेन को देख सकते हैं। पिन वैली राष्ट्रीय उद्यान अपनी वन्यजीव प्रजातियों के साथ-साथ अपने अविश्वसनीय ट्रैक के लिए भी सबसे प्रसिद्ध है, जो अपने पर्यटकों को रोमांचकारी और साहसिक ट्रैक मार्ग प्रदान करता है। पिन वैली राष्ट्रीय उद्यान में घूमने के लिए कोई प्रवेश शुल्क नहीं है।

3. सिंबलवाड़ा राष्ट्रीय उद्यान: पोटा-कयारडा घाटी में लगभग 27.88 वर्ग किलोमीटर के विशाल क्षेत्र में फैला हुआ सिंबलवाडा राष्ट्रीय उद्यान हिमाचल प्रदेश में घूमने के लिए सबसे लोकप्रिय राष्ट्रीय उद्यानों में से एक है। यह उद्यान पोटा-कयारडा घाटी में घने साल के जंगल के बीच में स्थित है, जिसमें *टर्मिनेलिया*, *केसिया*, *होलोपटेलिया* आदि प्रजातियां पाई जाती है। यह उद्यान कलेसर वन्य जीव अभयारण्य के काफी करीब है। यह एक शांतिपूर्ण, उद्यान है जो शिवालिक पर्वत श्रृंखलाओं के निचले हिस्से में स्थित है। सिंबलवाडा उद्यान को 1958

में एक वन्यजीव अभयारण्य के रूप में स्थापित किया गया था जिसे बाद में 1974 में एक राष्ट्रीय उद्यान घोषित किया गया। जंगल की परिधि से पर्यटक सुरम्य घाटी की झलक देख सकते हैं। रीसस मकाक, तेंदुआ, भारतीय मुंतजित, गोरल और क्रेस्टेड पोरपाइन, हिमालय ब्लैक बेयर, जंगली सूअर और आम लंगूर कुछ ऐसे जंगली जानवर हैं जिन्हें लोग उद्यान में आसानी से देख सकते हैं साथ ही पर्यटक यहां ट्रैकिंग जैसी साहसिक गतिविधियों का भी आनंद उठा सकते हैं।

4. खीरगंगा राष्ट्रीय उद्यान: यह राष्ट्रीय उद्यान कुल्लू जिले में 2000 से 6000 मीटर ऊंचाई पर खीरगंगा राष्ट्रीय उद्यान पार्वती जलग्रहण क्षेत्र के लगभग 710 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है और यह पार्क ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क के उत्तर में सीमा साझा करता है। प्राकृतिक सौंदर्य, हरी भरी झाड़ियों, ऊंचे विशाल पेड़ों और जंगलों में स्थित पुराने रेस्ट हाउस के साथ खीरगंगा राष्ट्रीय उद्यान कल्लू के सबसे आकर्षक पर्यटक स्थलों में से एक है। खीरगंगा नेशनल पार्क की यात्रा के दौरान पर्यटक समृद्ध वनस्पतियों जिनमें मेपल, ओक, देवघर के घने जंगल और जीवों की विभिन्न प्रजातियों को देख सकते हैं, जो प्रकृति प्रेमियों और पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बने हुए है और यह पार्क हर साल हजारों वन्यजीव प्रेमियों और पर्यटकों की मेजबानी करता है। खीरगंगा पर्यटकों के लिए बिल्कुल निःशुल्क है या किसी प्रकार की एंट्री फीस की आवश्यकता नहीं है। खीरगंगा राष्ट्रीय उद्यान पार्क सुबह 10 बजे से लेकर शाम तक खुला रहता है।

5. इंदेराकिला राष्ट्रीय उद्यान: 2010 में स्थापित इंदेराकिला हिमाचल प्रदेश का एक विशिष्ट राष्ट्रीय उद्यान है। कुल्लू जिले में स्थित लगभग 104 वर्ग किलोमीटर के विशाल क्षेत्र में फैला इंदेराकिला राष्ट्रीय उद्यान विभिन्न वनस्पतियों जैसे ओक, फिर, देवदार, अखरोट, रोडोडेंड्रन एवं मेपल के मिश्रित वन और भोजपत्र के वृक्षों से संपूर्ण है। यह जीवों की कई प्रजातियों जैसे स्नो लेपर्ड, हिमालय बियर, हिमालयी थार एवं संकटग्रस्त मस्क डीयर जैसे जीवों का घर है। यह उद्यान समृद्ध वन्य जीवन को मुर्त रुप प्रदान करता है जो पर्यटकों और वन्य जीव प्रेमियों के लिए आकर्षण का केंद्र बना हुआ है। इस पार्क के पास से होकर गुजरने वाली एक संकरी पगडंडी है, जहां आप जानवरों और पौधों को उनके प्राकृतिक आवास में देख सकते हैं।

हिमाचल प्रदेश के ये सभी राष्ट्रीय उद्यान जैव विविधता संरक्षण के दृष्टिकोण और पर्यटन के लिए अति आवश्यक हैं। ये उद्यान पर्यटन के दृष्टिकोण से भी उतने ही आवश्यक हैं जो क्षेत्रीय रोजगार के अवसर भी प्रदान करते हैं। इनकी सुरक्षा करना भी जनमानस का दायित्व है।, जिससे इस अति आवश्यक जैव विविधता को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखा जा सके।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 82-86 (2025)

बिन्सर वन्यजीव अभयारण्य - एमराल्ड ऑफ़ वेस्टर्न हिमालय

प्रशांत केशव पुसालकर

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पश्चिमी क्षेत्रीय केंद्र, पुणे

मिश्रित ओक वन

भारत के पश्चिमी हिमालयी राज्य, 'देवभूमि' उत्तराखंड के कुमाऊँ मंडल के मध्य में स्थित बिन्सर, शीतोष्ण हिमालयी सघन वनों से समृद्ध हरी-भरी वादियों की प्राकृतिक सुंदरता और शांति से भरा अतिसुंदर पर्वतीय क्षेत्र है। अल्मोड़ा शहर के पूर्व में 30 किमी की दूरी पर स्थित बिन्सर वन्यजीव अभयारण्य पादप भौगोलिक क्षेत्र 2 बी - मध्य हिमालयी बेल्ट में स्थित है। नंदादेवी, त्रिशूल और पंचाचूली पर्वतश्रृंखला की गोद में स्थित, 47.07 वर्ग किलोमीटर में फैला यह अभयारण्य बागेश्वर जिले के दक्षिणी सीमा और अल्मोड़ा सिविल सोयम वन प्रभाग क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। हिमालय के चीड़, बुरांश, बांज, मोरु और देवदार के वनों से आच्छादित इस जैवविविधता से समृद्ध पहाड़ी क्षेत्र के संरक्षण के लिए 1880 में इसे आरक्षित वन के रूप में घोषित किया गया और बाद में 1988 में संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क में वन्यजीव अभयारण्य के रूप में शामिल किया गया। सघन नम वनों से आच्छादित और जलस्रोतों से भरपूर बिन्सर पहाड़ियां अल्मोड़ा को पूरे साल जल आपूर्ति सुनिश्चित करती है और इसलिए बिन्सर को अल्मोड़ा जिले का जलस्रोत भी कहा जाता है। बिन्सर कुमाऊँ के चंद राजाओं की ग्रीष्मकालीन राजधानी थी और ब्रिटिश युग में, ब्रिटिश आयुक्त सर हेनरी रामसे द्वारा इसे अल्मोड़ा मंडल के ग्रीष्मकालीन मुख्यालय के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। अभयारण्य के उच्चतम ऊंचाई (2412 मीटर) पर लगे सफेद झंडे के माध्यम से आम लोगों के लिए सर रामसे की उपस्थिति का संकेत दिया जाता था। इसी उच्चतम ऊंचाई 'जीरो-पॉइंट' से हिमालय की कई चोटियों के दर्शन और प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर अद्भुत दृश्यों का आनंद लेने का मौका मिलता है।

बिन्सर अभयारण्य स्थित बिनेश्वर महादेव मंदिर

बिन्सर वन्यजीव अभयारण्य का नाम यहाँ स्थित भगवान भोलेनाथ को समर्पित पुराने शिवमंदिर 'बिनेश्वर महादेव' के नाम पर रखा गया है, जहां ग्रामीण और पर्यटक दोनों धार्मिक पूजा करने आते हैं। अभयारण्य को दो खंडों और नौ बीटों में विभाजित किया गया है। वर्तमान में छः गाँव (कटधारा, सत्री, गौनाप, दलार, रिसाल और मायोलिखान), पांच निजी स्वामित्व वाले भू-क्षेत्र (बड़ेन, ग्रैंड ओक मैन्नोर, बिन्सर रिट्रीट, नंदादेवी और खली इस्टेट) उत्तराखण्ड वन विभाग का एक वन विश्रामगृह और कुमाऊँ मंडल विकास निगम का इको-लॉज अभयारण्य के अंदर स्थित हैं और आगंतुकों को आवास सेवा प्रदान करते हैं। स्थानीय लोग और यात्रियों की प्यास बुझाने वाले शुद्ध पानी के ढ़के हुए जलस्रोत, जिनको 'नौला' के नाम से जाना जाता है, कुमाऊँ जीवनशैली का अनोखा हिस्सा है। 'बिन्सर नौला' के नाम से प्रसिद्ध ऐसा ही एक स्रोत शिवमंदिर के पास मुख्य मार्ग के किनारे पर स्थित है। अभयारण्य के अयारपानी प्रवेशद्वार से चार किलोमीटर की दूरी पर कुमाऊँ के प्रसिद्ध गैराड़ गोलू देवता का पवित्र धाम है, जिसे चीड़ पाइन पवित्र देववन के रूप में संरक्षित रखा गया है।

विशिष्ट वनस्पति विविधता के साथ ही यह अभयारण्य तेंदुआ, गोरल, जंगली बिल्ली, काला भालू, चितराल, लोमड़ी, लंगूर, साही, उड़ने वाली गिलहरी, भौंकने जैसी आवाज निकालने वाले हिरन के अलावा कई जीवों का प्राकृतिक आवास है। साथ ही यहां ब्लैक फ्रेंकोलिन, कोक्लाज़ तीतर, रेड-बिल्ड ब्लू मैगपाई, कलिज फीजन्ट, हिल पैरीज़, ग्रेट बारबेट, हॉक ईगल, हिमालयन ग्रिफ़िन, येलो-बिल्ड मैगपि जैसी 166 से अधिक पक्षियों की प्रजातियाँ देखी जाती हैं। इसी वजह से बर्ड लाइफ इंटरनेशनल द्वारा बिन्सर को एक महत्वपूर्ण बर्ड एरिया (पक्षी क्षेत्र) घोषित किया गया है।

गैराड़ गोलू देवता धाम और चीड़ पाइन देववन

विभिन्न प्रबंधन और संरक्षण आवश्यकताओं को समायोजित करने के लिए, बिन्सर वन्यजीव अभयारण्य को मोटे तौर पर निम्नलिखित क्षेत्रों में विभाजित किया गया है:

कोर ज़ोन – इस क्षेत्र में वन्य जीवों के प्रमुख स्थान वाले घने ओक और मिश्रित ओक-बुरांश वन क्षेत्र को शामिल किया गया है, जहां किसी भी मानवीय गतिविधि की अनुमति नहीं है।

बफ़र ज़ोन - अभयारण्य का बाह्य क्षेत्र, जो कोर क्षेत्र के अंतर्गत नहीं आता, उसे बफ़र ज़ोन में रखा गया है। बफ़र ज़ोन क्षेत्र गाँव के साथ वहां के मूल निवासियों/ग्रामीणों के अधिकारों और सुरक्षा आवश्यकताओं का ध्यान रखता है।

पर्यटन क्षेत्र - इसमें मुख्य प्रवेशद्वार से वन अतिथि गृह तक जाने वाले मोटरमार्ग शामिल है।

नेचर ट्रेल्स – इसमें प्राकृतिक पगडंडिया (निर्दिष्ट ट्रेकिंग ट्रेल्स - त्रिशूल ट्रेल, नंदादेवी ट्रेल, पंचाचूली ट्रेल, गइलेख ट्रेल, कत्युरी ट्रेल, चंद ट्रेल और धौलछीना ट्रेल), झंडीधार (जीरो-पॉइंट टावर) और अभयारण्य क्षेत्र के गांवों में स्थित विलेज होम रिसॉर्ट (पाँच गांवों में आठ होम स्टे, एक समुदाय-आधारित पर्यटन आवास और तीन निजी स्वामित्व वाले होम स्टे) शामिल हैं।

इको-डेवलपमेंट ज़ोन - वन्यजीव अभयारण्य की सीमा से 5 किलोमीटर तक का यह क्षेत्र, जिसमें आगंतुक निवास के लिए एक गाँव और रिसॉर्ट शामिल हैं, उसे इको-डेवलपमेंट जोन के रूप में विकसित किया गया हैं। इकोटूरिज्म गतिविधियों में नेचर ट्रेल्स (निर्दिष्ट ट्रेल्स) पर ट्रेकिंग, फोटोग्राफी, सूर्योदय और सूर्यास्त के दृश्य, विशिष्ट दृश्य-बिंदुओं से वन्यजीव दर्शन, पक्षी दर्शन, हिमालय दृश्य दर्शन, प्रकृति व्याख्यान केंद्र पर जानकारी जैसी गतिविधियों की अनुमति तथा गांवों में आगंतुक निवास में रहने का अनुभव शामिल है।

वन संरचना: बिन्सर अभयारण्य के निम्न ऊंचाई वाले सभी क्षेत्र चीड़ के वनों से आच्छादित हैं और मध्य एवं उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्र ओक और मिश्रित ओक-बुरांश के वनों से समृद्ध हैं। उंचाई में परिवर्तन के साथ सामान्य वन संरचना और प्रजातियों के वितरण में उल्लेखनीय परिवर्तन देखा जा सकता है। बिन्सर के वनों को तीन प्रकार में विभाजित किया जा सकता है:

बिन्सर नौला

निम्न उंचाई वन क्षेत्र (1600-1900 मीटर) जहाँ खुले कैनोपी वाले चीड़ पाइन वन हैं।

मध्य ऊंचाई वन क्षेत्र (1900-2100 मीटर) जहाँ घने कैनोपी वाले मिश्रित ओक वन हैं।

उच्च ऊंचाई वन क्षेत्र (2100-2412 मीटर) जहाँ मिश्रित ओक-रोडोडेंड्रॉन वन हैं।

चीड़ पाइन वन

चीड़ पाइन (*पाइनस रॉक्सबर्गियाइ*) वनः अभयारण्य के निचले ऊंचाई वाले क्षेत्र चीड़ के वनों से समृद्ध हैं। पेंट उद्योग में आर्थिक महत्व के चलते शुरुआत में इसे ब्रिटिशों द्वारा बड़े पैमाने पर लगाया गया था। इस ऊंचाई वाले क्षेत्र में 'काफल' (*मिरका एस्कुलेन्टा* - उत्तराखंड का राज्यफल) के पेड़ों को अच्छी संख्या में देखा जा सकता है। यहाँ पर देखी जाने वाली कुछ सामान्य और विशिष्ट प्रजातियां हैः *एंड्रोसेस रोटुन्डिफोलिया*, *पॉलीगैला क्रोटालेरिओइडीज*, *लेस्पेडेजा जन्सिया*, *वर्बेस्कम थैपस*, *लेप्टोरहाब्डोस पार्वीफ्लोरा*, *इंडिगोफ़ेरा हेटेरेन्था*, *ऐरीसी*मा प्रजातियां और *डेस्मोडियम* प्रजातियां। चीड़ के वनों में *रूबस एलिप्टिकस*, *कॉरनस कैपिटेटा*, *लानीसेरा क्विनक्विलोकुलैरिस* और *बेरबेरिस एशिऐटिका* जैसी क्षुप प्रजातियां बहुतायत में दिखती हैं। गौरतलब है कि चीड़ के जंगलों में कुछ खुली जगहों में *ऐकेशिया डीलबेटा* जैसी आक्रामक विदेशी प्रजाति के समूह की उपस्थिति दर्ज की गई है, जिसकी निगरानी अभयारण्य प्रबंधन की दृष्टी से बेहद जरुरी है।

ओक (क्वेर्कस) वनः अभयारण्य के मध्य ऊंचाई वाले क्षेत्र घने ओक वनों से आच्छादित है, जिसमें बांज (*क्वेरकस ल्यूकोट्राइकोफोरा*) और मिश्रित बांज (*क्वेरकस ल्यूकोट्राइकोफोरा*, *क्वेरकस फ्लोरिबन्डा*) वन शामिल हैं। यहाँ दिखाई देने वाले पेड़ और झाड़ीदार प्रजातियों में लारेसी कुल के सदस्यों (*डैफनिफिलम हिमालइकम*/ *डैफनिफिलम हिमालेन्से*, *लिंडेरा पुल्चेरिमा*, *मैकीलस डूथीइ*) के साथ *आइलेक्स*, *वाइबर्नम*, *एसर कैपेडोसिकम*, *यूरिया ऐक्यूमिनटा*, *प्रूनस कॉर्नुटा*, *जुग्लैन्स रिजिआ*, *ऐस्कुलस इन्डिका* जैसे वृक्ष और *सिम्प्लोकॉस पैनीकुलेटा*, *सिम्प्लोकॉस रैसीमोसा*, *मिर्सीन अफ्रीकाना*, *बेरबेरिस चित्रिया*, *रोज़ा ब्रूनोनियाइ*, *प्रिंसेपिया यूटिलिस*, *इलेइएग्नस अम्बेलेटा*, *पाइरेकैन्था क्रेनुलेटा*, *लेइसिस्टेरिया फॉर्मोसा* जैसी क्षुप प्रजातियां शामिल हैं। *मिर्सीन अफ्रीकाना* ढलानों पर अत्यधिक पाई जाने वाली क्षूप प्रजाति है। नमी की अधिकता के कारण ओक के जंगलों में शाकीय प्रजातियों की अत्यधिक विविधता दिखाई देती है। शाकीय पादप प्रजातियां जैसे *बोनिंघौसिया ऐल्बिफ्लोरा*, *सेनेसियो ऐलेटस*, *डिजिटेलिस परप्यूरिया*, *टाइफोनियम डाइवर्सिफोलियम*, *ऐरीसीमा टोर्टुओसम*, *हेडीकियम स्पिकैटम* और साथ में रिंगाल (*ड्रिपैनोस्टैकिअम फल्केटम*) बांस के समूह भी यहां आम हैं। इसके अलावा, इन वनों में जड-परजीवी प्रजाति *मोनोट्रोपा यूनिफ्लोरा* भी आम तौर पर बांज की जड़ों पर पाई जाती है। उच्च आद्रता के कारण इस वन प्रकार में बड़ी संख्या में कवक और पर्णांग भी देखे जा सकते हैं। मशरूम कवक की प्रचुरता की वजह से यहाँ कवकभक्षी घोंघे भी बहुतायत में दिखते हैं।

इलेक्स डिपाइरेना वालिच

ओक-बुरांश (ओक-रोडोडेंड्रॉन) वनः मध्य ऊंचाई के ऊपरी सीमा क्षेत्र और उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्र में *रोडोडेंड्रोन आरबोरिअम* (बुरांश) वन आमतौर पर ओक (क्वेर्कस प्रजातियां) के साथ मिश्रित होते हैं। *इलेक्स डिपाइरेना*, *लायोनिआ ओवालीफोलिआ*, *मिर्सीन सेमिसिरेटा*, *वाइबर्नम कोटिनिफोलियम*, *कार्पिनस विमिनेआ*, *कार्पिनस फैजिनिआ* जैसी वृक्ष प्रजातियां ओक और मिश्रित ओक-बुरांश वन समुदायों के महत्वपूर्ण सहयोगी है। यहां की अन्य प्रजातियां ओक (क्वेरकस) के वनों के समान है। इसके अलावा, घने जंगलों की वजह

से यहां *हैबीनेरिया इंटरमीडिया*, *एपिपैक्टिस हेलेबोराइन*, *कैलिएंथे* जैसे ऑर्किड और *ऐरिस्टोलोकिआ डाइलेटेटा*, *टेट्रास्टिग्मा सरयूलेटम*, *टेट्रास्टिग्मा अफाइन*, पार्थेनोसिसस सेमिकॉर्डेटा, *क्लीमैटिस मोन्टाना*, *क्लीमैटिस बुकानानियाना*, *सोलेना हेटेरोफिला*, *हेडेरा हेलिक्स*, स्माइलेक्स ऐस्पेरा, *स्माइलैक्स ग्लाइसीफिला*, *स्टीफैनिया ग्लैब्रा*, *पोरैनॉप्सीस पैनीकुलेटा* जैसी आरोही प्रजातियां बहुतायत में दिखती हैं।

यह ध्यान देने योग्य है कि 1902 में वन अतिथि गृह के पास अंग्रेजों द्वारा लगाए गए देवदार (*सीड्रस देओदार*) वृक्षों का समूह जंगली प्रतीत होता है। साथ ही ऊंचाई वाले ढलानों पर सुरई (*क्यूप्रेसस टोरूलोसा*) के पेड़ भी बिखरे हुए दिखाई देते हैं। खुले जंगलों में अनेक जगह पर *ड्रेपेनोस्टेकिअम फल्केटम* नामक बांस प्रजाति और जंगलों के बीच खुली जगहों पर घास के समूह आम हैं। आकर्षक पिले फूलों वाली *ट्रैगोपोगोन ग्रैसिलिस* सूरजमुखी कुल की एक विशिष्ट प्रजाति है जिसके पत्ते घास की तरह होते हैं। यहां ओक के जंगल नम-पौधों, जैसे हरितोद्भिद की वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थितियां प्रदान करते हैं; पेड़ों के विघटित पत्ते गिले-कवक और सूखे गिरे वृक्ष एफाइलोफोरेल्स-कवक के लिए जरूरी विशिष्ट आवास प्रदान करते हैं। आद्र जलवायु के कारण यह पर्णांग विकास के लिए उपयुक्त निवास स्थान है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि अभयारण्य के अनेक जगहों में फॉक्सग्लोव नाम से मशहूर यूरोपियन प्रजाति - *डीजिटेलिस परप्यूरिया* पूरी तरह से ढल-बस गयी है और पूर्णता स्थानिक होने का आभास दिलाती है।

ओक वन का कवकभक्षी घोंघा

वनस्पति विविधताः इस अभयारण्य से 738 प्रजातियां प्रलेखित है जो 110 कुल और 471 वंशों से संबंधित हैं। इसके अलावा 58 पर्णांग प्रजातियां भी पाई गई हैं जो 11 कुल और 28 वंशों से संबंधित हैं। यह अभयारण्य अनेक संकटग्रस्त, स्थानिक तथा दुर्लभ प्रजातियों को संरक्षण प्रदान करता है। स्थानीय जनजीवन में उपयुक्त प्रजातियां: स्थानीय लोगों द्वारा सालो से अनेक और विविध वनस्पतियों का उपयोग अपनी प्रतिदिन जरूरतों के लिए किया जाता रहा है। जंगली फलः *मिरका ऐस्कूलेन्टा* (काफल), *जुग्लैन्स रेजिआ* (अख़रोट), *सौराइआ नेपौलेन्सिस* (गोगना, गोगिना, रतेन्दु), *प्रूनस कॉर्नुटा* (जमुई, जमरोई), *पोटेन्टिला इंडिका* (भुई-का-फल, कफ़ल्या), *पाइरस पाशिआ* (मेहल), *वाइबर्नम कोटिनिफोलियम* (घिनुआ, टिटमूल्या), *वाइबर्नम मुल्लाहा* (लाल टिटमूल्या), *फ़ीनिक्स लौरीरोइ* (खजूरी); जंगली सब्जियां: *सैल्विया लेनेटा*, *सोन्कस ओलरेसिअस*, *स्टीलेरिआ मीडिया*, *अर्टिका पार्वीफ्लोरा*, *कीनोपोडियम एल्बम* (बथुआ), *नस्टर्शियम ऑफीसिनेल*, *ऑक्जैलिस कॉर्निकुलेटा* (पत्ते); *इंडिगोफेरा हेटेरैन्था* (फूल); *कोलोकेसिया एस्कुलेन्टा*, *वुल्फेनिआ अम्हेर्स्टिआना* (प्रकंद); बुरांश शरबतः *रोडोडेंड्रोन आर्बोरियम* (बुरांश फूल); तेलः *प्रिन्सेपिआ यूटिलिस* (भेकल), *जुग्लैन्स रेजिआ* (अख़रोट बीज); फाइबर देने वाले पौधेः *कैनेबिस सैटाइवा* (भांग), *अर्टिका पार्वीफ्लोरा* (कंडाली), *जिराडींनिया डाइवर्सिफोलिआ* (बड़ी कंडाली), *लॉनीसेरा क्वीन्क्वेलोक्युलैरिस* (भटकुकरा, किरमाली), *विक्स्ट्रोएमिआ कैनीसेन्स* (चमलिया, तिलक), *डैफनी पैपाइरेसिआ* (बंचोई, चमुआ), *ड्रिपैनोस्टैकिअम फल्केटम*, *फ़ीनिक्स लौरीरोइ*; सजावटी शोपीसः *पाइनस रॉक्सबर्गाई* (चीड के फल/कोन्स); धूप : *वैलेरिऐना जटामांसी* (मांसी, सुमाल्या - प्रकन्दीय जड़ें); हर्बल/औषधीय चायः *सिम्बोपोगान*, *थाइमस लीनिऐरिस* (जंगली अजवाइवन); टोकरी बनाने हेतु : *ड्रिपैनोस्टैकिअम फल्केटम*, *स्पाइरीआ कैनीसेन्स* : झाड़ू बनाने हेतुः *पाइनस रॉक्सबर्गाई*, *फ़ीनिक्स लौरीरोइ*, *ड्रिपैनोस्टैकिअम फल्केटम*; कीटनाशकः *बोनिंघौसेनिआ ऐल्बिफ्लोरा* (दाम्पाते, पिसुमार, उपन्याघास), *ओरिगैनम वल्गेरी*, *थाइमस लीनिऐरिस*; रंगद्रव्य (डाइज), *बेरबेरिस* प्रजातियां (किन्गोड- छाल और लकड़ी से प्राप्त पीला रंग), *कोरेलोडिस्कस लेनूजिनोसस* (शिलापुष्प - पत्तो से प्राप्त लाल रंग), *जिरेनियम वालीचिआनम* (प्रकंद से प्राप्त बैंगनी रंग) जैसी कई रंगद्रव्य (डाइज) उपज देने वाली प्रजातियां यहां पायी जाती है, जिसमें *यूओनिमस टिन्जेन्स* (बरमेली, भम्बेली, काला चिन्दवारा) धार्मिक महत्व का वृक्ष है। इस छोटे वृक्ष की छाल से मिलने वाला लाल-केसरिया रंग, जिसे गढ़वाल-कुमाऊँ में 'कुमकुम' के नाम से जाना जाता है, भगवान की पूजा में इसे विशेष स्थान प्राप्त है।

हैबीनेरिया इंटरमीडिआ डी.डॉन

औषधीय वनस्पतियां: सर्प दंश/बिच्छू डंक के इलाज हेतु *ऐरीसीमा कॉन्सिनम, रूबिया कॉर्डिफोलिया, साऐथुला टोमेन्टोसा, रुबस निविअस, थेलिक्ट्रम फोलिओलोसम*; शक्तिवर्धक : *हैबीनेरिया इंटरमीडिआ, पेरिस पॉलिफिला, रसकोइया* प्रजाति; अल्सर : *बेरबेरिस एशिऐटिका*; घाव/फोड़े : *जरबेरा गौसीपिना, कोलब्रूकिआ अपोसिटीफोलिआ, इम्पेशिएन्स बालसेमिना, होल्बोएलिआ लैटीफ़ोलिआ, हाइपेरीकम ओब्लॉन्गीफोलियम, राइनवारटिआ इण्डिका, लायोनिआ ओवलीफोलिआ*; मूत्ररोग : *ऐनस्लिआ ऐप्टेरा, बर्जेनिआ लीगूलेटा, क्लीमैटिस मॉन्टेना, कोरैलोडिस्कस लेनूजीनोसस, डुहल्डिया कैपा*; उदरशूल : *मिर्सीन सेमीसेरेटा, ओरिगैनम वल्गैरी, डुहल्डिया कस्पीडेटा, मिर्सीन अफ्रिकाना, ऐनस्लिआ लैटीफोलिआ*; सर्दी-जुक़ाम और खांसी : *सैल्विया लेनेटा, स्वर्शिआ सिलिएटा, व्हायोला रेपेन्स, इम्पेशिएन्स रेसीमोसा, सीरेस्टियम सीरेस्टोइडीज, थाइमस लीनिऐरिस*; नेत्ररोग : *बेरबेरिस* प्रजातियां, *पार्थेनोसिसस सेमिकॉर्डेटा, रोज़ा ब्रुननियाइ, थेलिक्ट्रम फोलिओलोसम*; बिच्छू बूटी डंक : *कैनेबिस सैटाइवा* और *गेलिनसोगा पार्वीफ्लोरा*; सन्धिवात : *ऐस्क्युलस इंडिका, सारकोक्का सेलिग्ना, जिरेनियम वालिचिआनम, प्रिन्सेपिया यूटीलिस, लेपिडियम वर्जिनीएकम*; सरदर्दः *रोडोडेंड्रॉन अर्बोरिअम*; पिलियाः *बेरबेरिस लाइसियम, कैलेन्थी ट्राइकैरिनेटा, व्हायोला रेपेन्स*; बुख़ार : *ऐनस्लिआ ऐप्टेरा, स्वर्शिआ सिलिएटा, स्वर्शिया चिरायिता, स्वर्शिआ ऐलेटा, स्वर्शिआ कॉर्डेटा, ऐजूगा ब्रैक्टिओसा, चिरिता बाइफोलिआ, इलेइएग्नस अम्बेलेटा, बेरबेरिस* प्रजातियां, *महोनिआ नेपालेंसिस, थेलिक्ट्रम फोलिओलोसम*; पाचनरोग : रोडोडेंड्रॉन *अर्बोरिअम*, जेन्थोजाइलम आर्मेटम, सोलेना हेटेरोफिला, पाइरस पाशिआ, *गैलियम एपेराइन, स्माइलेक्स ग्लौकोफिला*; त्वचारोग : *ऐजिरेटिना ऐडेनोफोरा, ऐनाफेलिस मार्गेरिटेशिआ, ऐनिमोन विटिफोलिआ, बुडलेजा एशिऐटिका, कॉटलेया ग्रैसिलिस, लायोनिआ ओवलीफोलिआ, बोनिंघौसेनिआ ऐल्बिफ्लोरा, कैलेन्थी ट्राइकैरिनेटा, डैफनी पैपपाइरेसिआ, जैस्मिनम ऑफिसिनेल*।

बेंथमीडिआ कैपिटेटा (वालिच) नाकइ

अभयारण्य में वनस्पति सर्वेक्षण के दौरान यह भी देखा गया है कि बेहद खूबसूरत, रंगीन और सुगंधित पुष्पों से संपन्न कुछ प्रजातियों को बाग़वानी हेतु उपयोग में लाया जा सकता है। जैसे *स्ट्रान्वीसिआ नुस्सिआ* (सफ़ेद सुगंधित पुष्प); ऑर्किड्स : *सेटाइरियम नेपालेन्स* (गुलाबी पुष्प); जिंजिबर प्रजातियां: *कॉटलेया स्पाइकेटा, ग्लोब्बा रेसीमोसा* (पीले पुष्प), *हेडीकीयम स्पाइकेटम* (सफ़ेद पुष्प); क्षुप प्रजातियां : *डैफनी पैपपाइरेसिआ, रोज़ा ब्रुनोनियाइ, लेप्टोडर्मिस लेंसिओलाटा, बेंथमीडिआ कैपिटेटा, स्पाइरीआ कैनीसेन्स, जैस्मिनम ऑफिसिनेल* (सफ़ेद पुष्प), *विक्स्ट्रोएमीआ कैनीसेन्स* (पीले पुष्प), *रोज़ा मैक्रोफिला* और *इंडिगोफेरा हेटेरैंथा* (गुलाबी पुष्प); आरोही प्रजातियां: *आइपोमिया परप्युरिया* (गुलाबी, जामुनी पुष्प), *पोरेनॉप्सिस पैनीकुलेटा, डाइनेटस रेसीमोसस* (सफ़ेद पुष्प); शाकीय प्रजातियां: *ऐनीमोन विटिफोलिआ* (सफ़ेद पुष्प), *बिगोनिआ पिक्टा, बिगोनिआ डायोइका* (गुलाबी पुष्प)।

बिन्सर अभयारण्य के वन और वनस्पतियों के उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है की पश्चिमी हिमालय की शीतोष्ण वनस्पति और प्राणी विविधता के संरक्षण के लिए यह एक बेहद महत्वपूर्ण संरक्षित क्षेत्र है और अपने सघन, नम, हरे-भरे वनों की वजह से अपनी पहचान 'एमराल्ड ऑफ़ वेस्टर्न हिमालय' के रुप में बना चुकी है जो इसके नाम को सार्थक बनाती है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 87-89 (2025)

पादप संरक्षण के लिए जीआईएस और रिमोट सेंसिंग का एकीकरण: एक व्यापक समीक्षा

महेंद्र कुमार सिंघाड़िया, प्रियंका, सुमन हलदर व संदीप कुमार चौहान

भारतीय गणराज्य का वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, नोएडा – 201303 (उत्तर प्रदेश)

आवास क्षरण, जलवायु परिवर्तन और आक्रामक प्रजातियों के कारण जैव विविधता में तेज़ी से हो रही कमी ने पादप संरक्षण को एक वैश्विक अनिवार्यता बना दिया है। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) और सुदूर संवेदन परिवर्तनकारी उपकरण के रूप में उभरे हैं, जो पादप समष्टि और उनके आवासों की निगरानी, प्रतिरूपण और प्रबंधन के लिए स्थानिक रूप से स्पष्ट, लागत प्रभावी तरीके प्रदान करते हैं। इस समीक्षा में पादप संरक्षण में इन भू-स्थानिक तकनीकों के सैद्धांतिक आधार, पद्धतिगत ढाँचे और व्यावहारिक कार्यान्वयन का संश्लेषण किया गया है। विविध केस स्टडी और अनुभवजन्य साक्ष्यों के आधार पर, हम प्रदर्शित करते हैं कि कैसे जीआईएस और सुदूर संवेदन सटीक आवास मानचित्रण, प्रजाति वितरण मॉडलिंग, वनस्पति स्वास्थ्य निगरानी और मापनीय संरक्षण योजना को सक्षम बनाते हैं। हम मशीन लर्निंग, हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग, LiDAR और मानवरहित हवाई प्रणालियों में प्रगति की आगे जाँच करते हैं, मौजूदा तकनीकी और पारिस्थितिक चुनौतियों की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं और भविष्य के विकास और संरक्षण अभ्यास में इन उपकरणों के एकीकरण के लिए एक रणनीतिक रोडमैप प्रस्तावित करते हैं।

वैश्विक वनस्पति—जिसमें लगभग 3,90,000 ज्ञात संवहनी पादप प्रजातियाँ शामिल हैं—अभूतपूर्व खतरों का सामना कर रही है। अनुमानतः 15,000 प्रजातियाँ अब विलुप्ति के खतरे में हैं। पारंपरिक संरक्षण दृष्टिकोण (जैसे क्षेत्र सर्वेक्षण और मैन्युअल प्लॉट निगरानी) विशाल स्थानिक और लौकिक पैमानों पर संचालित होने वाले दबावों का पर्याप्त रूप से प्रलेखीकरण और प्रतिक्रिया करने में संघर्ष करते हैं। प्रतिक्रिया स्वरूप, संरक्षण जीव विज्ञान तेजी से जीआईएस और सुदूर संवेदन के सहक्रियात्मक अनुप्रयोग की ओर मुड़ रहा है। ये प्रौद्योगिकियाँ स्थानीय चतुर्भुजों से लेकर महाद्वीपीय विस्तार तक, स्थानिक डेटा एकत्र करने, उसका विश्लेषण करने और उसे दृश्यमान करने के लिए एक एकीकृत ढाँचा प्रदान करती हैं। पिछले तीन दशकों में, उपग्रह सेंसरों, हवाई प्लेटफार्मों और विश्लेषणात्मक एल्गोरिदम में सुधारों ने बुनियादी भूमि आवरण वर्गीकरण को परिष्कृत, वास्तविक समय निगरानी और पूर्वानुमानात्मक मॉडलिंग प्रणालियों में बदल दिया है। यह समीक्षा पादप संरक्षण में जीआईएस और सुदूर संवेदन के वैचारिक आधारों का विवरण देती है, प्रमुख पद्धतिगत दृष्टिकोणों की रूपरेखा प्रस्तुत करती है, प्रतिनिधि केस स्टडीज़ प्रस्तुत करती है और उभरते नवाचारों और चुनौतियों की जाँच करती है।

जीआईएस सिद्धांत: जीआईएस पारिस्थितिकी में एक आदर्श बदलाव का प्रतिनिधित्व करता है, जो तीन परस्पर संबंधित अवधारणाओं पर आधारित है:

• स्थानिक स्वसहसंबंध : निकटवर्ती स्थान दूर के स्थानों की तुलना में अधिक समान पर्यावरणीय और जैविक विशेषताएँ प्रदर्शित करते हैं। इन संबंधों का परिमाणीकरण आवास समूहों, विखंडन पैटर्न और प्रजातियों के वितरण के पर्यावरणीय चालकों की पहचान करने में मदद करता है।

• पैमाने पर निर्भरता: पारिस्थितिक प्रक्रियाएँ कई स्थानिक और लौकिक पैमानों पर प्रकट होती हैं—वर्ग मीटर के भूखंडों से लेकर संपूर्ण बायोम तक। प्रभावी संरक्षण योजना के लिए बहु-स्तरीय विश्लेषण करने में सक्षम जीआईएस उपकरणों की आवश्यकता होती है, जिससे प्रबंधक हस्तक्षेपों को उपयुक्त पारिस्थितिक संदर्भ के साथ संरेखित कर सकें।

• पारिस्थितिक संपर्क: जीन प्रवाह और पारिस्थितिकी तंत्र के लचीलेपन को बनाए रखना उपयुक्त आवासों को जोड़ने पर निर्भर करता है। जीआईएस प्रजातियों के संचालन और दीर्घकालिक व्यवहार्यता के लिए आवश्यक गलियारों और चरणबद्ध पैच की पहचान और प्राथमिकता निर्धारण को सुगम बनाता है।

• सुदूर संवेदन सिद्धांत: सुदूर संवेदन उन अनूठे तरीकों का लाभ उठाता है जिनसे वनस्पति और अन्य पदार्थ विद्युत चुम्बकीय विकिरण के साथ परस्पर क्रिया करते हैं:

• स्पेक्ट्रल सिग्नेचर: स्वस्थ वनस्पति दृश्यमान लाल तरंगदैर्ध्य को अवशोषित करती है और निकट अवरक्त प्रकाश को दृढ़ता से परावर्तित करती है। सामान्यीकृत अंतर वनस्पति सूचकांक जैसे मापदंड इस विषमता का उपयोग वनस्पति की प्रबलता का मानचित्रण करने, तनाव का पता लगाने और विशाल क्षेत्रों में फेनोलॉजी की निगरानी करने के लिए करते हैं।

• हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग: सैकड़ों संकीर्ण, सन्निहित वर्णक्रमीय बैंडों को कैप्चर करके, हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसर प्रजातियों के स्तर पर विभेद और विस्तृत शारीरिक आकलन को सक्षम बनाते हैं। मशीन लर्निंग क्लासिफायर के साथ, यह दृष्टिकोण स्वचालित प्रजातियों की पहचान और तनाव का शीघ्र पता लगाने में सहायता करता है।

पद्धतिगत दृष्टिकोण:

प्रजाति वितरण मॉडलिंग: प्रजाति वितरण मॉडल (एसडीएम) पर्यावरणीय सहसंबंधों और ज्ञात घटना अभिलेखों के आधार पर यह अनुमान लगाते हैं कि किसी प्रजाति के कहाँ पाए जाने की संभावना है। अधिकतम एन्ट्रॉपी (मैक्सएंट) एल्गोरिथम का व्यापक रूप से केवल उपस्थिति आँकड़ों के लिए उपयोग किया जाता है, जो प्रेक्षण संबंधी बाधाओं के अधीन पूर्वानुमानित एन्ट्रॉपी को अधिकतम करके आवास उपयुक्तता का अनुमान लगाता है। हाल के संवर्द्धन उच्च-रिज़ॉल्यूशन सुदूर संवेदन चरों और समूह मशीन लर्निंग तकनीकों को एकीकृत करते हैं, जिससे पूर्वानुमान सटीकता में सुधार होता है और जलवायु परिवर्तन प्रभाव आकलन तक अनुप्रयोगों का विस्तार होता है।

आवास मानचित्रण और वर्गीकरण: उपग्रह या हवाई चित्रों का स्वचालित वर्गीकरण त्वरित आवास मानचित्रण का आधार है:

• वस्तु-आधारित छवि विश्लेषण: वर्गीकरण से पहले चित्रों को सार्थक वस्तुओं में विभाजित करता है, जिससे पिक्सेल-आधारित विधियों की तुलना में विषम भूदृश्यों में अधिक सटीकता प्राप्त होती है।

• मशीन लर्निंग क्लासिफायर: रैंडम फ़ॉरेस्ट, सपोर्ट वेक्टर मशीन और न्यूरल नेटवर्क जैसे एल्गोरिदम वर्णक्रमीय, संरचनात्मक और बनावट संबंधी विशेषताओं के बीच गैर-रैखिक संबंधों को सीखकर जटिल वनस्पति प्रकारों में अंतर कर सकते हैं।

वनस्पति स्वास्थ्य निगरानी: एनडीवीआई के अलावा, संवर्धित वनस्पति सूचकांक (ईवीआई) और सामान्यीकृत अंतर जल सूचकांक (एनडीडब्ल्यूआई) जैसे सूचकांक क्रमशः जैवभार और जल तनाव के प्रति बेहतर संवेदनशीलता प्रदान करते हैं। इन सूचकांकों के समय-श्रृंखला विश्लेषण से फेनोलॉजिकल बदलाव का पता चलता है, जिससे सूखे के प्रभावों, रोग प्रकोपों या पुनर्स्थापन प्रगति का पता लगाना संभव हो पाता है।

आक्रामक प्रजातियों का पता लगाना: आक्रामक पौधों के बारे में अतिशीघ्र पता लगाना महत्वपूर्ण है। हाइपरस्पेक्ट्रल और मल्टीस्पेक्ट्रल डेटा आक्रमणकारियों के विशिष्ट वर्णक्रमिय या संरचनात्मक संकेतों को उजागर कर सकते हैं। गहन शिक्षण मॉडल, विशेष रूप से कन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क, ने उच्च स्थानिक विभेदन पर नवजात आक्रमणों की पहचान करने में आशाजनक परिणाम दिखाए हैं।

वैश्विक संरक्षण प्राथमिकता : 150,000 से अधिक प्रजातियों के एक यादृच्छिक वन मशीन लर्निंग विश्लेषण ने अभूतपूर्व पैमाने पर विलुप्त होने के जोखिम का आकलन करने के लिए भौगोलिक, जलवायु और लक्षण डेटा को संयोजित किया। परिणामी मानचित्रों ने अंतरराष्ट्रीय वित्त पोषण आवंटन और लाल सूची आकलन को निर्देशित किया।

उन्नत प्रौद्योगिकियाँ

क. हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग: लघुकृत ड्रोन-माउंटेड हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसर अब सब-मीटर रिज़ॉल्यूशन वाली प्रजातियों का मानचित्रण और स्वास्थ्य आकलन प्रदान करते हैं। एआई क्लासिफायर के साथ उनका एकीकरण दुर्लभ या व्यावसायिक रूप से संकटग्रस्त प्रजातियों (जैसे-डेल्*बर्जिया* प्रजाति) की त्वरित, गैर-आक्रामक निगरानी को सक्षम बनाता है।

ख. संरचनात्मक विश्लेषण के लिए LiDAR: वायुजनित और स्थलीय LiDAR त्रि-आयामी वनस्पति संरचना माप प्रदान करते हैं—कैनोपी की ऊँचाई, घनत्व और परत-रेखा—जो जैव विविधता और आवास की जटिलता से संबंधित हैं। संयुक्त हाइपरस्पेक्ट्रल-LiDAR वर्कफ़्लो व्यापक पारिस्थितिक अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

ग. मानवरहित हवाई वाहन: मल्टीस्पेक्ट्रल, थर्मल और LiDAR पेलोड से लैस UAV संवेदनशील या दुर्गम आबादी के सूक्ष्म पैमाने

पर सर्वेक्षण की सुविधा प्रदान करते हैं। पायलट अध्ययन नाजुक आवासों को प्रभावित किए बिना संकटग्रस्त जड़ी-बूटियों (जैसे *फैसिलिया सबम्यूटिका*) की निगरानी में UAV की प्रभावकारिता को प्रदर्शित करते हैं।

घ. मशीन लर्निंग और एआई: डीप लर्निंग सिस्टम (जैसे, कन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क) ने बड़े रिमोट सेंसिंग डेटासेट में पैटर्न अभिनिर्धारण में क्रांति ला दी है - वनस्पति वर्गीकरण को स्वचालित करना, रोग के प्रकोप का पता लगाना और निरंतर डेटा स्ट्रीम से प्रारंभिक चेतावनी अलर्ट उत्पन्न करना।

चुनौतियाँ और सीमाएँ:

• डेटा गुणवत्ता और सत्यापन: वायुमंडलीय हस्तक्षेप, बादल आवरण और सेंसर शोर के लिए कठोर पूर्व-प्रसंस्करण आवश्यक है। ग्राउंड ट्रुथिंग अभी भी महंगी है और उपग्रह अधिग्रहण से पिछड़ सकती है।

• तकनीकी बाधाएँ: उच्च-रिज़ॉल्यूशन इमेजरी, विशेष सॉफ़्टवेयर और हार्डवेयर की उच्च लागत, विशेष रूप से संसाधन-विहीन क्षेत्रों में, अपनाने को सीमित कर सकती है।

• डेटा एकीकरण और पैमाने का बेमेल: विषम डेटासेट (जैसे सूक्ष्म पैमाने पर घटना रिकॉर्ड के साथ स्थूल जलवायु परतें) को मिलाने के लिए प्रक्षेपण, रिज़ॉल्यूशन और अनिश्चितता का सावधानीपूर्वक उपचार आवश्यक है।

• पारिस्थितिकीय जटिलता: सुदूर संवेदन जनसंख्या व्यवहार्यता विश्लेषण के लिए महत्वपूर्ण सभी जैविक अंतःक्रियाओं या जनसांख्यिकीय प्रक्रियाओं को शामिल नहीं कर सकता है। फेनोलॉजिकल परिवर्तनशीलता और गुप्त प्रजातियाँ मानचित्रण प्रयासों को और जटिल बनाती हैं।

रणनीतिक मार्ग और प्रमुख अनुशंसाएँ:

क. बहु-स्रोत डेटा संलयन: उपग्रह, वायुजनित, भू-आधारित और नागरिक विज्ञान डेटा को एकीकृत करने के लिए मज़बूत एल्गोरिदम विकसित करें और समग्र पारिस्थितिकीय मॉडल बनाने के लिए प्रत्येक प्लेटफ़ॉर्म की क्षमताओं का लाभ उठाएँ।

ख. रीयल-टाइम मॉनिटरिंग और पूर्व चेतावनी: उभरते खतरों (जैसे कीट प्रकोप और आवास क्षरण) का पता लगाने और उनके बढ़ने से पहले उनका जवाब देने के लिए लगभग रीयल-टाइम रिमोट सेंसिंग के साथ-साथ IoT सेंसर नेटवर्क तैनात करें।

ग. जलवायु अनुकूलन मॉडलिंग: जलवायु परिदृश्यों के तहत जनसांख्यिकीय अनुमानों के साथ प्रजातियों के वितरण मॉडल को संयोजित करें ताकि शरणस्थलों की पहचान की जा सके, सहायता प्राप्त प्रवासन की जानकारी दी जा सके और जलवायु-स्मार्ट संरक्षित क्षेत्रों का डिज़ाइन तैयार किया जा सके।

घ. क्षमता निर्माण और मुक्त विज्ञान: ओपन-एक्सेस टूल, क्लाउड-आधारित प्लेटफ़ॉर्म और मानकीकृत प्रोटोकॉल को बढ़ावा दें। भू-स्थानिक संरक्षण विधियों का लोकतंत्रीकरण करने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों में निवेश करें और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा दें।

जीआईएस और सुदूर संवेदन ने पादप संरक्षण को मौलिक रूप से नया रूप दिया है और जैव विविधता के नुकसान से निपटने के लिए मापनीय, डेटा-आधारित दृष्टिकोण प्रदान किए हैं। सूक्ष्म पैमाने पर आवास आकलन से लेकर वैश्विक जोखिम विश्लेषण तक, ये उपकरण पहले अप्राप्य गति और पैमाने पर साक्ष्य-आधारित निर्णय लेने में सक्षम बनाते हैं। हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग, लिडार, यूएवी और एआई में निरंतर नवाचार—डेटा एकीकरण, क्षमता निर्माण और नीतिगत समर्थन में रणनीतिक निवेश के साथ—भू-स्थानिक प्रौद्योगिकियों की पूरी क्षमता का दोहन करने के लिए आवश्यक होगा। जैसे-जैसे जलवायु परिवर्तन और मानवीय दबावों के कारण संरक्षण चुनौतियाँ तीव्र होती जा रही हैं, ग्रह की वनस्पति विरासत की रक्षा के प्रयास में जीआईएस और सुदूर संवेदन अपरिहार्य सहयोगी के रूप में उभर रहे हैं।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 90-92 (2025)

शहरी हरियाली और पारिस्थितिकीय तंत्र सेवाएँ: भारतीय शहरों में पौधों की भूमिका

महेंद्र कुमार सिंघाड़िया, सुमन हलदर, प्रियंका व संदीप कुमार चौहान

भारतीय गणराज्य का वनस्पति उद्यान, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, नोएडा – 201303 (उत्तर प्रदेश)

भारत अपनी जनसंख्या के तेज़ी से शहरीकरण के कारण एक गहन परिवर्तन का अनुभव कर रहा है। 2025 तक, भारत की 1.46 अरब की आबादी में से लगभग 35% यानी 534 मिलियन से ज़्यादा लोग शहरी क्षेत्रों में निवास करेंगे और 2050 तक यह आँकड़ा बढ़कर 50% हो जाने की उम्मीद है। यह 1951 में दर्ज 17.3% शहरीकरण दर से काफ़ी वृद्धि दर्शाता है। अकेले उत्तर प्रदेश जैसे राज्य में अब लगभग 14.9 लाख हेक्टेयर शहरी और ग्रामीण निर्माण क्षेत्र है, जबकि राजस्थान और गुजरात जैसे क्षेत्रों में 2011 से शहरी भूमि में दोहरे अंकों में वृद्धि दर्ज की गई है। 2030 तक 40% से ज़्यादा भारतीयों के शहरी क्षेत्रों में निवास करने की उम्मीद है जिससे भारत दुनिया भर में सबसे तेज़ी से शहरीकरण करने वाले देशों में से एक बन जाएगा।

हालाँकि शहरी आबादी में यह वृद्धि एक भारी पारिस्थितिकीय लागत पर आती है। उपग्रह चित्रों और भूमि उपयोग के आंकड़ों से पता चलता है कि शहर की सीमाओं के भीतर और आसपास, अक्सर महत्वपूर्ण पार्कों, उद्यानों और प्राकृतिक वनस्पतियों की जगह निर्मित क्षेत्रों में तेज़ी से वृद्धि हो रही है। इस अतिक्रमण के कारण प्रति व्यक्ति उपलब्ध खुले हरे-भरे स्थानों में उल्लेखनीय कमी आ रही है जिससे निवासियों का प्रकृति से सीधा संपर्क टूट रहा है और स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र खतरे में पड़ रहा है।

इस पृष्ठभूमि में शहरी हरियाली की अवधारणा एक महत्वपूर्ण रणनीति के रूप में उभरती है जो शहरी परिदृश्यों में पार्कों, शहरी वनों, हरित मार्गों और छतों पर बगीचों जैसे हरित स्थानों के जानबूझकर निर्माण, विस्तार और संरक्षण को संदर्भित करती है। ये हरित स्थान पारिस्थितिकीय तंत्र सेवाओं की एक विस्तृत श्रृंखला प्रदान करते हैं—मानव कल्याण के लिए पारिस्थितिकीय तंत्र द्वारा प्रदान किए जाने वाले असंख्य लाभ, जिनमें वायु शोधन, तापमान नियंत्रण, वर्षा जल प्रबंधन, जैव विविधता समर्थन, कार्बन पृथक्करण और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य में सुधार शामिल हैं।

भारतीय शहरों के सामने मौजूद तात्कालिक चुनौतियों—बढ़ते प्रदूषण स्तर, तीव्र होती गर्म लहरें, पानी की कमी और घटती देशी प्रजातियों—को देखते हुए, शहरी हरियाली में निवेश न केवल एक पर्यावरणीय अनिवार्यता है, बल्कि एक सार्वजनिक स्वास्थ्य आवश्यकता और शहरी लचीलेपन की आधारशिला भी है।

शहरी हरित स्थानों का महत्व : शहरी हरित स्थान महत्वपूर्ण पारिस्थितिकीय अवसंरचना के रूप में कार्य करते हैं जो महत्वपूर्ण पारिस्थितिकीय तंत्र सेवाएँ प्रदान करके शहरों को सामाजिक, पर्यावरणीय और आर्थिक रूप से बनाए रखते हैं:

1. **वायु शोधन:** पेड़-पौधे प्राकृतिक जैव-फ़िल्टर का काम करते हैं। ये कणिका तत्व (PM2.5), नाइट्रोजन ऑक्साइड (NO_2) और धूल को रोकते हैं, साथ ही कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य हानिकारक गैसों को भी अवशोषित करते हैं। भारत में बिगड़ती शहरी वायु गुणवत्ता को देखते हुए जो उच्च प्रदूषण की घटनाओं से श्वसन संबंधी बीमारियों का कारण बन रही है—हरित बुनियादी ढाँचा एक अनिवार्य भूमिका निभाता है। अध्ययनों से संकेत मिलता है कि शहरी हरियाली में निवेश से भारतीय शहरों में प्रति वर्ष ₹8 करोड़ प्रति वर्ग किलोमीटर मूल्य की वायु शोधन सेवाएँ प्रदान की जा सकती हैं। दिल्ली रिज और नोएडा स्थित भारतीय गणराज्य का वनस्पति उद्यान (BGIR) जैसे शहरी वन और पार्क 'हरित फेफड़े' के उदाहरण हैं जो न केवल वायु गुणवत्ता में सुधार करते हैं बल्कि कार्बन भंडारण के माध्यम से जलवायु शमन में भी योगदान करते हैं।

2. **तापमान में कमी:** शहरी ऊष्मा द्वीप (UHI) प्रभाव जहाँ कंक्रीट और डामर जैसी निर्मित सतहें ऊष्मा को अवशोषित और विकीर्ण करती हैं, शहरों के भीतर के तापमान को आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में काफी अधिक बढ़ा देता है। पेड़ों और वनस्पतियों से समृद्ध भारतीय शहरी इलाकों में, वृक्षविहीन, निर्मित क्षेत्रों की तुलना में तापमान में 4°C से 6°C तक की गिरावट देखी जाती है। यह शीतलन प्रभाव अत्यधिक गर्मी के दौरान विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है क्योंकि यह स्वास्थ्य जोखिमों को

कम करता है, मृत्यु दर को कम करता है और कृत्रिम शीतलन की आवश्यकता को कम करके ऊर्जा प्रणालियों पर बोझ को कम करता है। शहरी वन, पार्कों और सामुदायिक उद्यानों के साथ, अत्यधिक गर्मी के विरुद्ध प्राकृतिक सुरक्षा कवच का काम करते हैं जिससे लाखों लोगों के आराम और सुरक्षा में सुधार होता है।

3. **जैव विविधता संवर्धन:** पारिस्थितिकीय तंत्र पर शहरीकरण के विनाशकारी प्रभाव के बावजूद जब हरित क्षेत्रों का संरक्षण या पुनर्स्थापन किया जाता है, तो शहर देशी प्रजातियों के लिए आश्रय स्थल बने रहते हैं। शहरी पार्क, आर्द्रभूमि और वन क्षेत्र पक्षियों, स्तनधारियों, उभयचरों, परागणकों और देशी पौधों के लिए महत्वपूर्ण आवास बनाए रखते हैं। उदाहरण के लिए, मुंबई का संजय गांधी राष्ट्रीय उद्यान तेंदुओं और विविध वन्यजीवों को आश्रय देता है। दिल्ली रिज पक्षी प्रजातियों के लिए एक पारिस्थितिकीय गलियारे के रूप में कार्य करता है और चेन्नई का पल्लीकरनई मार्श देशी जैव विविधता को बनाए रखने वाली एक महत्वपूर्ण आर्द्रभूमि के रूप में कार्य करता है। भारत भर में वनस्पति उद्यान दुर्लभ या संकटग्रस्त प्रजातियों के लिए "जीवित पुस्तकालय" के रूप में कार्य करते हैं, जन शिक्षा में योगदान करते हैं और पारिस्थितिकीय तंत्र की स्थिरता के लिए आवश्यक परागणकों की आबादी का समर्थन करते हैं।

एकीकृत लाभ: इन प्रमुख योगदानों के अलावा शहरी हरित क्षेत्र तूफानी जल के रिसाव को सुगम बनाते हैं और बाढ़ के जोखिम को कम करते हैं, ध्वनि प्रदूषण को कम करते हैं, मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ाते हैं और सामाजिक समावेश को बढ़ावा देते हैं। भारत का राष्ट्रीय शहरी हरित कार्यक्रम इन लाभों पर प्रकाश डालता है जिसका समर्थन बीजीआईआर के आगंतुक अध्ययनों जैसे अनुभवजन्य शोधों द्वारा किया जाता है जो हरित क्षेत्रों के संपर्क में आने से तनाव में कमी, सामाजिक संबंधों में वृद्धि और शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार को दर्शाते हैं।

प्रमुख चुनौतियाँ: भारत में तेज़ी से बढ़ता शहरीकरण शहरी हरियाली पर गहरा और अक्सर अपरिवर्तनीय दबाव डालता है। शहरी फैलाव हरित पट्टियों, जंगलों और आर्द्रभूमि को खतरनाक दर से निगल रहा है। 2011 और 2020 के बीच दिल्ली, मुंबई, बेंगलुरु और चेन्नई जैसे महानगरीय शहरों में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र में 5% की गिरावट आई है जो 48% तक पहुँच गई है जो तेज़ अनियोजित विकास का एक लक्षण है। अकेले बेंगलुरु में 5% की कमी का मतलब है कि हज़ारों हेक्टेयर हरित क्षेत्र विकास के दबावों की बलि चढ़ गया है। इससे न केवल सौंदर्य और मनोरंजन के स्थान नष्ट होते हैं बल्कि पारिस्थितिकीय तंत्र सेवाएँ भी कमज़ोर होती हैं।

प्रदूषण जटिलता की एक और परत जोड़ता है। शहरों में PM2.5 और NO_2 का बढ़ा हुआ स्तर श्वसन और हृदय संबंधी विकारों में वृद्धि से जुड़ा है और साथ ही शहरी पौधों पर दबाव डालता है और जैव विविधता में बाधा डालता है। ध्वनि प्रदूषण जीवों के प्राकृतिक व्यवहार को बाधित करता है और पौधों के स्वभाविक विकास को प्रभावित करता है। खराब तरीके से प्रबंधित ठोस अपशिष्ट और अनुपचारित सीवेज मिट्टी और पानी की गुणवत्ता को ख़राब करते हैं जिससे पर्यावरणीय और मानव स्वास्थ्य जोखिम बढ़ जाते हैं।

बाढ़ नियंत्रण, भूजल पुनर्भरण और जैव विविधता के लिए महत्वपूर्ण आर्द्रभूमि और जल निकाय तेज़ी से लुप्त हो रहे हैं। उदाहरण के लिए चेन्नई का पल्लीकरनई दलदल, जो कभी 5,500 हेक्टेयर में फैला एक विशाल आर्द्रभूमि था, अतिक्रमण और प्रदूषण के कारण नाटकीय रूप से सिकुड़ गया है। ऐसे पारिस्थितिकीय तंत्रों के नष्ट होने से शहरों की जलवायु प्रतिरोधक क्षमता कम हो रही है जिससे बाढ़ और लू के प्रति संवेदनशीलता बढ़ रही है।

समाधान और सुझाव: शहरी पारिस्थितिकीय गिरावट को उलटने और लचीले हरित शहरों को बढ़ावा देने के लिए भारत को एकीकृत, विज्ञान-आधारित दृष्टिकोण अपनाने होंगे:

- हरित बुनियादी ढाँचे का विस्तार: शहरी वनों, ऊर्ध्वाधर उद्यानों, हरित छतों और आर्द्रभूमि पुनर्स्थापन को प्राथमिकता दें। अहमदाबाद की सफलता जिसमें 22 लाख पेड़ लगाए गए और 21 शहरी वन बनाए गए, शहरी हरितीकरण की परिवर्तनकारी क्षमता को दर्शाती है।
- वैश्विक ढाँचों के साथ तालमेल बिठाएँ: मापनीय लक्ष्यों के साथ हरित नीति और नियोजन का मार्गदर्शन करने के लिए संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्य 11 और कुनमिंग-मॉन्ट्रियल वैश्विक जैव विविधता ढाँचे को लागू करें।

- विनियमन और अपशिष्ट प्रबंधन को मज़बूत बनाएँ: पर्यावरणीय क्षरण को रोकने के लिए कठोर आवास संरक्षण कानून लागू करें, कचरा और सीवेज निपटान प्रणालियों में सुधार करें।
- "3-30-300 नियम" अपनाएँ: सुनिश्चित करें कि प्रत्येक नागरिक घर से कम से कम 3 पेड़ देखता हो, 30% छत्र वाले क्षेत्रों में रहता हो और 300 मीटर के दायरे में एक पार्क हो—हरित लाभों तक समान पहुँच को बढ़ावा देना।
- जैव विविधता सूचकांक विकसित करना: शहरी पारिस्थितिकीय स्वास्थ्य की निगरानी के लिए उपकरण बनाना, लक्षित संरक्षण का मार्गदर्शन करना और अनुकूली प्रबंधन को सक्षम बनाना।

शहरी हरियाली भारत की शहरी पर्यावरणीय और सामाजिक चुनौतियों का एक महत्वपूर्ण बहुआयामी समाधान प्रस्तुत करती है। 2030 तक शहरों की आबादी लगभग आधा अरब हो जाएगी, इसलिए प्रदूषण से निपटने, जलवायु प्रभावों के प्रबंधन, जैव विविधता के संरक्षण और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए हरित स्थानों का विस्तार और सुरक्षा अनिवार्य है। पेड़ों, पार्कों, आर्द्रभूमि और उद्यानों का सामाजिक-पर्यावरणीय अंतर्संबंध सौंदर्यबोध से परे जन स्वास्थ्य, आर्थिक बचत और सामाजिक सामंजस्य तक लाभ पहुँचाता है।

सफलता नीति निर्माताओं, शहरी योजनाकारों, वैज्ञानिकों और शहरी विकास में पारिस्थितिकी को समाहित करने के लिए प्रतिबद्ध नागरिकों के बीच साझेदारी पर निर्भर करती है। आँकड़ों पर आधारित नियोजन और सामुदायिक नेतृत्व से सशक्त, भारतीय शहर जीवंत, लचीले पारिस्थितिक तंत्र के रूप में फल-फूल सकते हैं जहाँ मानवता आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से सह-अस्तित्व में रहेगी।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 93-94 (2025)

पर्यावरणीय मुद्दे और उनके निराकरण

विनीत कुमार रावत, श्रीमन लाल मीना व उदय वीर श्रीवास

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शुष्क क्षेत्र क्षेत्रीय केंद्र, जोधपुर

पर्यावरण को आम तौर पर परिवेश या अवस्था के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसमें कोई व्यक्ति, पशु या पौधे जीवित रहते हैं या गतियुक्त होते हैं। इससे जीवन चक्र के महत्व को समझना अपेक्षाकृत आसान होता है। हमारा पर्यावरण लगातार बदल रहा है, जैसे-जैसे हमारा पर्यावरण बदलता है, वैसे-वैसे इन परिवर्तनों के कारण होने वाले पर्यावरणीय समस्याओं के संबंध में जागरूक होने की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक आपदाओं, तापन एवं शीतलन अवधि में विभिन्न प्रकार के मौसम के नमूनों में अत्यधिक परिवर्तन से लोगों को पृथ्वी के पर्यावरणीय मुद्दों के लिए बहुत अधिक सतर्क रहने की आवश्यकता है। पर्यावरणीय मुद्दे के जनक मानवों द्वारा पर्यावरण के लिए हानिकारक गतिविधियों के परिणाम हैं। इनमें विभिन्न प्रकार के प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट, अपशिष्ट निपटान, जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, ग्रीनहाउस प्रभाव आदि शामिल हैं।

वर्तमान समय के निम्नलिखित कुछ विशेष पर्यावरणीय मुद्दों पर शीघ्रातिशीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता है:

जलवायु परिवर्तन : जलवायु परिवर्तन आज के परिदृश्य में एक बड़ी चिंता का विषय है। यह समस्या पिछले कुछ दशकों में सामने आई है। ग्रीनहाउस गैसें जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण हैं। पर्यावरणीय परिवर्तनों के कई विनाशकारी प्रभाव होते हैं जैसे ग्लेशियरों का पिघलना, मौसम में परिवर्तन, महामारियों का फैलना आदि।

वैश्विक तापन : जीवाश्म ईंधन के जलने, वाहन इत्यादि के द्वारा छोड़ी गई विविध गैसों एवं क्लोरो फ्लोरो कार्बन से उत्सर्जन से पर्यावरण में ग्रीनहाउस गैसों की पर्याप्त वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी के तापमान में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इसके कारण पर्यावरणीय परिवर्तन हुए हैं। दुनिया भर के तापमान में हुई इस वृद्धि को वैश्विक तापन (ग्लोबल वार्मिंग) के रूप में जाना जाता है।

ओजोन परत का क्षरण : ओजोन परत, एकाग्र ओजोन गैसों की एक परत है। यह सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणों से हमारी रक्षा करती है। मानव जीवन के लिए महत्वपूर्ण इस परत को 'क्लोरो फ्लोरो कार्बन' से बहुत अधिक क्षति पहुंच रही है। यह सी.एफ.सी. 'क्लोरो फ्लोरो कार्बन' विभिन्न उद्योगों एवं रोजमर्रा के जीवन में प्रयुक्त कार्यशैलियों (जैसे एयरोसोल के डिब्बे) से उत्सर्जित गैसों के कारण होता है। इन यौगिकों में प्रयुक्त क्लोरीन ओजोन परत को नष्ट कर देता है। ओजोन परत में बने छिद्र से आने वाली हानिकारक अल्ट्रावाइलेट किरणों से परिणामस्वरूप मानव और वन्यजीवों को कैंसर तथा त्वचा रोग जैसे कई अन्य रोग हो जाते हैं।

जल प्रदूषण : वर्तमान समय में शहरों और महानगरों में कार्यरत विभिन्न उद्योगों द्वारा नदियों, महासागरों, झीलों और तालाबों में छोड़े गए विभिन्न हानिकारक अपशिष्टों के कारण जल की भौतिक, रासायनिक या जैविक स्थिति बदल जाती है, जिससे जल प्रदूषित हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न जलस्रोतों के जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिससे उसमें रहने वाले जीवों की मृत्यु होने लगती है। हम सभी जानते हैं कि 'जल ही जीवन है' और इसीलिए यह हमारा मुख्य कर्तव्य है कि हम जल को प्रदूषित होने से बचाएं।

वायु प्रदूषण : वायु प्रदूषण वर्तमान समय में कार्यरत विभिन्न उद्योगों, वाहन, जीवाश्म और घरेलू ईंधन आदि के बढ़ते उपयोग से उत्सर्जित गैसों का परिणाम है। इसी गैसीय उत्सर्जन से पृथ्वी के तापमान में भारी वृद्धि हुई है जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की श्वसन संबंधी और अन्य बीमारियों का खतरा भी बढ़ गया है।

वनों की कटाई : व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए वनों की अनियंत्रित रूप से होने वाली कटाई के कारण पृथ्वी वन विहीन होती जा रही है। हम सभी जानते हैं कि पेड़ों से हमें ऑक्सीजन और कई अन्य कच्चे माल प्राप्त होते हैं। वन बड़ी संख्या में वन्य जीवों और पौधों का प्राकृतवास होते है। वनों के विनाश से बड़ी संख्या में पौधों और वन्यजीवों की कई प्रजातियों का उन्मूलन हुआ है जिससे जैव विविधता पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। इसके साथ ही निर्वनीकरण के कारण पृथ्वी के तापमान और जलवायु में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है जिसके परिणामस्वरूप जीव मात्र को कई समस्यों का सामना करना पड़ रहा है।

जनसंख्या वृद्धि : मनुष्य के कुप्रबंधन के कारण पृथ्वी पर जनसंख्या में भारी वृद्धि हो रही है। इसके सात अरब से अधिक होने का अनुमान है और इस बढ़ती जनसंख्या के कारण संसाधनों की कमी हो गई है। अगर ऐसा ही चलता रहा, तो इतनी बड़ी आबादी का भरण-पोषण करना बहुत मुश्किल हो जाएगा। इसके कारण प्रदूषण, अपशिष्ट प्रबंधन, वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग सहित अन्य पर्यावरणीय मुद्दों में तेजी से वृद्धि हो रही है।

ठोस-अपशिष्ट प्रबंधन : ठोस अपशिष्ट प्रबंधन शब्द मुख्य रूप से ठोस कचरे के संग्रह, उपचार और निपटान की पूरी प्रक्रिया को संदर्भित करता है। ठोस अपशिष्ट प्रबंधन को ठोस कचरे के उत्पादन, भंडारण, संग्रह, हस्तांतरण, परिवहन, प्रसंस्करण और निपटान से जुड़े अनुशासन के रूप में परिभाषित किया गया है ताकि इसका पर्यावरण पर हानिकारक प्रभाव न पड़े। अपशिष्ट प्रबंधन प्रक्रिया में, कचरे को विभिन्न स्रोतों से एकत्र करके निपटान किया जाता है। ठोस अपशिष्ट के स्रोत मुख्य रूप से ठोस घरेलू कचरा, विभिन्न उद्योगों से उत्सर्जित और विसर्जित ठोस अपशिष्ट सामग्री, ठोस कृषि अपशिष्ट, प्लास्टिक, कांच, धातु, ई-कचरा, अस्पतालों और नर्सिंग होम द्वारा विसर्जित चिकित्सा अपशिष्ट, निर्माण प्रक्रिया से उत्सर्जित अपशिष्ट, सीवेज कीचड़ आदि है, जिनका उचित प्रक्रिया से निपटान किया जाना चाहिए। इसके लिए संबंधित निकायों द्वारा विशेष निगरानी करने की आवश्यकता है ताकि नियमों और दिशानिर्देशों का सख्ती से पालन किया जा सके।

कचरे का निपटान : विश्व के विभिन्न देशों में अपशिष्ट प्रबंधन की प्रक्रियाएं और जिम्मेदार निकाय भिन्न-भिन्न होते हैं जबकि भारत में इसके निपटान हेतु ठोस अपशिष्ट के स्रोत के अनुसार प्रक्रियाएं अलग-अलग होती हैं। उन्हें इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है:

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट : नगरपालिका ठोस अपशिष्ट को बायोडिग्रेडेबल, पुनर्चक्रण योग्य और खतरनाक घरेलू कचरे के रूप में अलग-अलग भागों में विभाजित किया जाता है। बायोडिग्रेडेबल कचरे में सड़ा हुआ भोजन, सब्जियों के छिलके और ज्यादातर रसोई से उत्सर्जित गीले कचरे आदि शामिल हैं। इसके साथ ही पुनर्नवीनीकरण कचरे में प्लास्टिक व खतरनाक कचरे जैसे बल्ब, बैटरी आदि शामिल हैं।

खतरनाक ठोस अपशिष्ट : खतरनाक ठोस अपशिष्ट उद्योग और रासायनिक कारखानों से उत्पन्न अपशिष्ट और अस्पतालों से उत्पन्न चिकित्सा अपशिष्ट को खतरनाक ठोस अपशिष्ट माना जाता है। इसके निपटान के लिए विशेष प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। किसी भी क्षेत्र में, कचरे के सुरक्षित निपटान और पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के लिए ठोस अपशिष्ट प्रबंधन बहुत महत्वपूर्ण है। इसके कारण होने वाले किसी भी स्वास्थ्य संबंधित खतरे से बचने के लिए, 'लैंडफिल' ठोस कचरे के निपटान का सबसे आम तरीका है। आधुनिक लैंडफिल को विभिन्न पर्यावरणीय कारकों और कचरे के प्रकारों को ध्यान में रखते हुए डिज़ाइन किया गया है, ताकि प्रदूषण और स्वास्थ्य जोखिमों को कम किया जा सके।

खराब ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के प्रभाव : विशेष रूप से अपशिष्ट प्रबंधन संगठनों द्वारा ठोस कचरे के अनुचित निपटान के कारण, एकत्रित कचरे का ढेर लग जाता है, जो पर्यावरण और जनता दोनों के लिए एक समस्या बन जाती है। कचरे के बड़े-बड़े पहाड़ बनाने और असामान्य, अनियंत्रित व अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों में प्राकृतिक रूप से सड़ने वाली (बायोडिग्रेडेबल) सामग्री को विघटित करने से अपघटन के कुछ दिनों के बाद यह विभिन्न प्रकार के रोग पैदा करने वाले कीड़ों के साथ-साथ संक्रामक जीवों के लिए प्रजनन स्थल बन जाता है। इससे एक दुर्गंध पैदा होती है जो उस क्षेत्र के सौंदर्य मूल्य को भी खराब करती है। विभिन्न उद्योगों से एकत्र किए गए ठोस अपशिष्टों में जहरीली धातुएं, रसायन और अन्य खतरनाक अपशिष्ट शामिल हैं। जब इन अपशिष्टों को पर्यावरण में छोड़ा जाता है, तो वे पर्यावरण के लिए जैविक और भौतिक रासायनिक समस्याएं पैदा करते हैं तथा रसायन मिट्टी में मिलने से भूजल को प्रदूषित करते हैं। इसके साथ ही क्षेत्र विशेष की मिट्टी की उत्पादकता को भी खराब कर देते हैं। इसके निपटान हेतु दुर्लभ मामलों में, खतरनाक अपशिष्ट साधारण कचरे और अन्य दहनशील कचरे के साथ मिश्रित कर दिए जाते है, जिससे निपटान प्रक्रिया और भी कठिन व जोखिम भरी हो जाती है। खतरनाक कचरे के साथ कागज व अन्य स्क्रैप को जलाने से, डाइऑक्सिन व अन्य जहरीली गैसें उत्पन्न होती हैं जिसके परिणामस्वरूप पुरानी बीमारी, त्वचा संक्रमण, कैंसर आदि सहित विभिन्न बीमारियां होती है।

पर्यावरणीय मुद्दों के समाधान

पर्यावरणीय मुद्दों के सामान्य समाधान निम्नलिखित हैं:

निपटानयुक्त वस्तुओं को पुन: प्रयोज्य वस्तुओं से बदलें।

कागज के अत्यधिक उपयोग से बचना चाहिए।

पानी व बिजली को बचाऐं।

पर्यावरण समर्थित युक्तियों को अपनाएं।

प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए कचरे को पुनर्चक्रित करें।

उपर्युक्त पर्यावरण के मुद्दे आगामी आपदा की चेतावनी हैं। यदि इन मुद्दों को समय रहते नियंत्रित नहीं किया गया, तो पृथ्वी जीवन विहीन हो सकती है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 95-98 (2025)

पादप ऊतक संवर्धन: एक संक्षिप्त परिचय

दावनरी मार्विन व शिवराज कुमार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग

आज के समय में, कृषि क्षेत्र अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है। बढ़ती आबादी, जलवायु परिवर्तन, फसल का नुकसान, कीट संक्रमण और पारंपरिक कृषि विधियों की सीमाएँ आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोणों की आवश्यकता को उजागर करती हैं। ऐसे में पादप ऊतक संवर्धन एक अत्यंत उन्नत जैव प्रौद्योगिकी तकनीक के रूप में उभरा है। यह तकनीक पौधों की कोशिकाओं, ऊतकों या अंगों को नियंत्रित, जीवाणुरहित और पोषक तत्वों से भरपूर इन-विट्रो माध्यम में संवर्धित करके नए पौधे उत्पन्न करने की प्रक्रिया है। इसका प्राथमिक उद्देश्य पौधों की गुणवत्तापूर्ण वृद्धि, रोगमुक्त प्रवर्धन, आनुवंशिक लक्षणों और संकटग्रस्त प्रजातियों का संरक्षण है। यह पारंपरिक कृषि विधियों की तुलना में अधिक तीव्र, प्रभावशाली और प्रतिरूप रूप से पौधों के उत्पादन की सुविधा प्रदान करता है।

ऊतक संवर्धन का ऐतिहासिक विकास

पादप ऊतक संवर्धन का विकास एक लंबी वैज्ञानिक यात्रा का परिणाम है:

- सन् 1839 में, मैथियास श्लाइडेन और थियोडोर श्वान ने कोशिका सिद्धांत का प्रतिपादन किया, जिसमें यह बताया गया कि सभी जीवित जीव कोशिकाओं से बने होते हैं। इससे कोशिकाओं की संरचना और उनके कार्य की नींव रखी गई।
- 1902 में, जर्मन वैज्ञानिक गॉटलिब हेबरलैंड्ट ने टोटिपोटेंसी की अवधारणा प्रस्तुत की। इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक पादप कोशिका में संपूर्ण पौधा बनने की क्षमता विद्यमान होती है यदि उचित पोषण, हार्मोन और पर्यावरण उपलब्ध हो।
- 1939 में, पी. आर. व्हाइट और आर. जे. गौत्रे ने इंडोल एसीटिक एसिड का उपयोग करके पादप कोशिकाओं के सफल संवर्धन का मार्ग प्रशस्त किया।
- 1950 के दशक में प्रोफेसर पंचानन माहेश्वरी ने भारत के दिल्ली विश्वविद्यालय में इस तकनीक के विकास का नेतृत्व किया और इसे देश में लोकप्रिय बनाया। इसके पश्चात यह तकनीक वैज्ञानिक अनुसंधान, औषधीय पौधों के संवर्धन, और कृषि क्षेत्र में व्यापक रूप से उपयोग में लाई गई।

मुख्य सिद्धांत: पूर्णशक्तता

टोटिपोटेंसी पादप ऊतक संवर्धन का आधारभूत सिद्धांत है। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक जीवित पादप कोशिका में वह अंतर्निहित क्षमता होती है, जिससे वह नियंत्रित वातावरण में विकसित होकर संपूर्ण पौधा बन सकती है। उदाहरण के लिए, एक एकल पादप कोशिका को सही पोषण माध्यम और हार्मोन दिए जाने पर वह विभाजित होकर कैलस का निर्माण करती है और फिर एक स्वस्थ पौधें का रूप धारण कर लेती है। यह सिद्धांत ऊतक संवर्धन को वैज्ञानिक रूप से सशक्त बनाता है और नए पौधों के तेज़, रोग-मुक्त उत्पादन की सुविधा प्रदान करता है।

ऊतक संवर्धन की विस्तृत प्रक्रिया

चरण 1: एक्सप्लांट सेलेक्शन

- यह प्रक्रिया पादप ऊतक संवर्धन की पहली और सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है।
- पौधे के स्वस्थ और रोगमुक्त भाग (जैसे पत्ती, तना, जड़, पुष्प) को चुना जाता है। इसे एक्सप्लांट कहते हैं।
- चयन का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि चुने गए ऊतक, ऊतक संवर्धन के लिए उत्तम स्वास्थ्य और सजीवता प्रदान करता हो।

उदाहरण के लिए, यदि पौधे में रोग संक्रमण का संदेह हो, तो वह भाग संवर्धन के लिए अनुपयुक्त होता है क्योंकि यह प्रक्रिया संपूर्ण संवर्धन को प्रभावित कर सकती है।

चरण 2: सतह की निर्जलीकरण प्रक्रिया (Surface Sterlization)

- चुने हुए एक्सप्लांट को पहले पानी से धोया जाता है ताकि धूल-मिट्टी हटा दी जाए।
- इसके बाद इसे इथेनॉल (70%) या सोडियम हाइपोक्लोराइट (NaOCl) घोल से कीटाणुनाशित किया जाता है।
- इस प्रक्रिया का उद्देश्य एक्सप्लांट की सतह पर उपस्थित सूक्ष्मजीवों को पूरी तरह नष्ट करना है ताकि इनसे संवर्धन माध्यम में संक्रमण न हो।

चित्र-1: पादप ऊतक संवर्धन की पूरी प्रक्रिया

- सतह की निर्जलीकरण प्रक्रिया को सटीक समय और घोल के अनुपात के साथ अंजाम दिया जाता है ताकि एक्सप्लांट को हानि न पहुंचे और सभी संक्रामक तत्व हट जाएं।

चरण 3: वृद्धि माध्यम में इनोकुलेशन

- कीटाणुरहित एक्सप्लांट को पोषक माध्यम में रखा जाता है।
- पोषक माध्यम में मुख्य रूप से कार्बन स्रोत जैसे सुक्रोज, खनिज लवण, विटामिन्स, पादप हार्मोन (ऑक्सिन्स, साइटोकिनिन्स) और जल होते हैं।
- ऑक्सिन्स जैसे 'इंडोल एसीटिक एसिड', 'नाफथेलिन एसीटिक एसिड' कोशिका विभाजन और जड़ विकास को प्रोत्साहित करते हैं।
- साइटोकिनिन्स जैसे 'बेंज़ाइलएमिनोप्यूरिन', 'काइनेटिन' अंकुरण और कैलस गठन को प्रेरित करते हैं।
- एक्सप्लांट को विशिष्ट तापमान (25-27°C), प्रकाश (16 घंटे प्रकाश/8 घंटे अंधकार) और आर्द्रता (60-70%) वाले नियंत्रित कक्ष में रखा जाता है।

चरण 4: अंग निर्माण (ऑर्गेनोजेनेसिस)

- कैलस को दूसरे पोषक माध्यम में स्थानांतरित किया जाता है।
- इस माध्यम में हार्मोन अनुपात (ऑक्सिन्स, साइटोकिनिन्स) को वैज्ञानिक रूप से समायोजित किया जाता है।
- निम्न ऑक्सिन्स: साइटोकिनिन्स अनुपात पर अंकुर (शूट्स) और पत्तियाँ विकसित होती हैं।
- उच्च ऑक्सिन्स अनुपात पर जड़ें विकसित होती हैं।
- वैज्ञानिक अनुसंधान के अनुसार, यह अनुपात पौधे के प्रकार और संवर्धन उद्देश्य पर निर्भर करता है।

चरण 5: पादप विकास

- अंग निर्माण के बाद, विकसित कैलस से छोटे पौधे बनते हैं।
- छोटे पौधे ग्रीनहाउस में नियंत्रित पर्यावरण में वृद्धि के लिए स्थानांतरित किए जाते हैं।
- इनमें स्वस्थ जड़, अंकुर, पत्तियाँ विकसित हो चुकी होती हैं।
- पौधे की स्वस्थता, रोगमुक्तता और विकास दर का निरीक्षण किया जाता है।
- आवश्यकता पड़ने पर पोषण माध्यम में सुधार करके पौध विकास को उत्तम बनाया जाता है।

चरण 6: अनुकूलन (ऐक्लिमेटाइजेशन)

- विकसित प्लांटलेट्स को धीरे-धीरे बाहरी पर्यावरण के लिए तैयार किया जाता है।
- इन्हें प्रारंभ में नर्म, नियंत्रित वातावरण में रखा जाता है, फिर धीरे-धीरे वायुमंडलीय स्थितियों (मिट्टी, हवा, तापमान) में सामंजस्य स्थापित किया जाता है।
- यह प्रक्रिया बहुत ही सावधानीपूर्वक करनी होती है ताकि पौधे अचानक परिवर्तनों से नष्ट न हों।
- जब प्लांटलेट्स पूर्ण रूप से पर्यावरण के अनुकूल हो जाते हैं, तब उन्हें खुले वातावरण या उद्यान में प्रत्यारोपित किया जाता है।

ऊतक संवर्धन के प्रकार

1. भ्रूण संवर्धन (Embryo culture)

- बीज या अपरिपक्व फलों से निकाले गए भ्रूण (एम्ब्रायोज़) को पोषक माध्यम में संवर्धित किया जाता है।
- इसका उद्देश्य बीज का निष्क्रिय चरण (सीड डॉरमेंसी) को दूर करना और मिश्रित पौधे (हाइब्रिड प्लांट्स) उत्पन्न करना है।
- यह तकनीक कृषि में अनूठे हाइब्रिड पौधे उत्पन्न करने के लिए उपयोग की जाती है।

उदाहरण: मशरूम, संकरित गेहूं।

2. अंग संवर्धन (ऑर्गन कल्चर)

- संपूर्ण पादप अंगों (जड़, पत्ती, तना) को पोषक माध्यम में संवर्धित किया जाता है।
- इसका उद्देश्य अंग विकास (ऑर्गन डेवलपमेंट) और कार्य अध्ययन करना होता है।
- अंग संवर्धन से पौधों के विशिष्ट अंगों की वृद्धि, कार्यशक्ति और जैव रासायनिक गतिविधियों का अध्ययन किया जाता है।

3. पराग संवर्धन (पॉलेन कल्चर)

- परागकण का पोषक माध्यम में संवर्धन किया जाता है।
- इसका उपयोग अगुणित पौधे के उत्पादन और आनुवंशिक अध्ययन के लिए किया जाता है।
- इससे नए आनुवंशिक संयोजन की खोज की जा सकती है, जो पारंपरिक प्रजनन में संभव नहीं होता।

4. कैलस संवर्धन (कैलस कल्चर)

- अविभेदित कोशिकाओं (कैलस) का पोषक माध्यम में संवर्धन।

- कैलस को विशेष हार्मोन अनुपात के माध्यम से विशिष्ट अंग या संपूर्ण पौधे में परिवर्तित किया जाता है।
- इसका मुख्य उपयोग क्लोनल पौध उत्पादन और आनुवंशिक अभियांत्रिकी (जेनेटिक इंजीनियरिंग) में होता है।

5. प्रोटोप्लास्ट संवर्धन (प्रोटोप्लास्ट कल्चर)

- कोशिका भित्ति हटाकर कोशिकाओं को संवर्धित किया जाता है।
- यह तकनीक विशेष रूप से आनुवंशिक अभियांत्रिकी (जेनेटिक इंजीनियरिंग) और संकरण प्रक्रिया (हाइब्रिडाइजेशन) अध्ययनों के लिए उपयोगी है।
- प्रोटोप्लास्ट संवर्धन से आनुवंशिक स्थानांतरण की प्रक्रिया सुलभ होती है।

6. निलंबन संवर्धन (सस्पेंशन कल्चर)

- कोशिकाओं या कोशिका समूहों को द्रव पोषक माध्यम (लिक्विड मीडियम) में संवर्धित किया जाता है।
- इसका उद्देश्य द्वितीयक चयापचय उत्पाद (सेकेंडरी मेटाबोलाइट्स) जैसे औषधीय यौगिकों का बड़े पैमाने पर उत्पादन करना है।

उदाहरण: एलोवेरा से औषधीय पदार्थ।

7. एकल कोशिका संवर्धन (सिंगल सेल कल्चर)

- पोषक माध्यम में एकल कोशिका का संवर्धन किया जाता है।
- इसका उपयोग कोशिका व्यवहार, कोशिका विभाजन प्रक्रिया, आनुवंशिक गुणधर्मों का अध्ययन और क्लोनल पौधे उत्पादन में होता है।
- यह तकनीक अनुसंधान व प्रयोगशाला आधारित अध्ययन के लिए अत्यंत उपयोगी मानी जाती है।

ऊतक संवर्धन के लाभ

- **तीव्र गुणन (रैपिड मल्टिप्लीकेशन):** कम समय में हजारों पौधे उत्पन्न किए जा सकते हैं।
- **रोग-मुक्त पौधे (पैथोजन-फ्री प्लांट्स):** रोगाणु-मुक्त वातावरण में पौधे स्वस्थ और निष्फल उत्पन्न होते हैं।
- **वर्ष भर उत्पादन:** मौसम परिवर्तनों पर निर्भर नहीं होता।
- **कम स्थान की आवश्यकता:** पारंपरिक खेती की तुलना में कम स्थान पर अधिक पौधे उत्पन्न होते हैं।
- **वांछनीय गुणों का संरक्षण (कंसर्वेशन ऑफ डिजायरेबल ट्रेट्स):** उच्च उपज, कीट प्रतिरोधक क्षमता आदि।
- **दुर्लभ प्रजातियों का संरक्षण:** संकटग्रस्त पौधों के प्रसार की सुविधा।
- **औषधीय यौगिकों का उत्पादन:** फार्मास्यूटिकल इंडस्ट्री हेतु आवश्यक द्वितीयक यौगिकों का बड़े पैमाने पर उत्पादन।
- आधुनिक अनुप्रयोग
- **जैव विविधता संरक्षण:** संकटग्रस्त और लुप्तप्राय प्रजातियों की रक्षा।
- **औषधीय पौधों का उत्पादन:** औषधीय गुणों से युक्त पौधों का निर्माण।
- **जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान:** जीन संशोधन, कृत्रिम परागण, दैहिक संकरण।
- **कृषि सुधार:** सूखा-प्रतिरोधी, कीट-प्रतिरोधी और अधिक उपज वाले पौधे।
- **औद्योगिक अनुप्रयोग:** बड़े पैमाने पर व्यावसायिक पौध संवर्धन।

पादप ऊतक संवर्धन एक क्रांतिकारी जैव प्रौद्योगिकी तकनीक है, जिसने पादप प्रसार, आनुवंशिक संवर्धन और पर्यावरण संरक्षण में अभूतपूर्व क्रांति लाई है। यह तकनीक बड़ी संख्या में स्वस्थ, रोगमुक्त पौधों के उत्पादन का एक तीव्र, सटीक, पर्यावरण-मैत्रीपूर्ण और कम लागत वाला तरीका प्रस्तुत करती है। भविष्य में इसकी संभावनाएँ और भी व्यापक होंगी, जो कृषि, औषध उद्योग, जैव विविधता संरक्षण और वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में अनिवार्य बनेंगी। मानवता के लाभ के लिए इसका विकास निरंतर जारी रहेगा।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 99-101 (2025)

पादपालय डिजिटलीकरण – जैव विविधता संरक्षण की दिशा में एक तकनीकी पहल

प्रमोद मीणा, नंदिता शर्मा व आर. मणिकन्दन

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलाँग-793003

पादपालय पौधों के संरक्षित नमूनों और उनसे संबंधित जानकारियों का एक महत्वपूर्ण संग्रह होता है, जो वनस्पति विज्ञान, वर्गिकी, संरक्षण और शिक्षा के लिए अत्यंत उपयोगी है। हालांकि, पारंपरिक (भौतिक) पादपालय में सीमाएं होती हैं, जैसे सीमित पहुँच, समय के साथ क्षति और संग्रहण की जगह की कमी। इन चुनौतियों का समाधान पादपालय डिजिटलीकरण के माध्यम से किया जा सकता है, जिसमें भौतिक नमूनों और उनके आंकड़ों को डिजिटल रूप में बदला जाता है।

पादपालय डिजिटलीकरण के उद्देश्य :-

1. नमूनों को क्षति से बचाने, लंबे समय तक संरक्षण और भौतिक हैंडलिंग को कम करना।
2. इंटरनेट के माध्यम से शोधकर्ता, विद्यार्थी और आम जन तक वैश्विक स्तर पर डेटा की पहुँच सुनिश्चित करना।
3. पादपालय के भौतिक नमूनों को प्राकृतिक आपदाओं (जैसे आग, बाढ़) से सुरक्षा सुनिश्चित करना।
4. पादपालय डेटा को अन्य जैव विविधता और पर्यावरणीय आंकड़ों से जोड़ना।
5. वर्गिकी, पारिस्थितिकी, जलवायु परिवर्तन और संरक्षण जैसे क्षेत्रों में अनुसंधान को बढ़ावा देना।
6. जन शिक्षा और नागरिक विज्ञान को प्रोत्साहित करना।

डिजिटल पादपालय के मुख्य घटक

डिजिटल पादपालय में निम्नलिखित शामिल होते हैं:

1. उच्च गुणवत्ता, बारकोड, स्केल और टैग युक्त स्कैन की गई छवियाँ मेटाडाटा, जिसमें निम्न जानकारी शामिल होती है :-
2. पौधे का वैज्ञानिक नाम
3. पौधे का स्थानिक नाम
4. परिग्रहण और संग्रहण संख्या
5. संग्रहकर्ता और अभिज्ञाता का नाम
6. संग्रह की तारीख
7. संग्रह का स्थान और राज्य का नाम (अक्सर GPS निर्देशांक सहित)
8. पौधे की पहचान और टैग
9. किसी विशेष पारिस्थितिक क्षेत्र का विवरण

डिजिटलीकरण की प्रक्रिया:-

1. प्रतिरूपों की तैयारी– प्रतिरूपों को सफाई, मरम्मत, व्यवस्थित क्रम, उचित लेबलिंग और लेबल पर लिखी हुई जानकारी की जाँच करने के बाद बारकोडिंग के लिए तैयार किए जाते हैं।

2. बारकोडिंग – प्रसंस्करण, माउंटिंग और परिग्रहित संख्या देने के बाद पादपालय शीट पर बारकोड चिपकाया जाता है।

3. स्कैनिंग और फोटोग्राफी– विशेष स्कैनर और उच्च गुणवत्ता वाले कैमरों की मदद से प्रतिरूपों की डिजिटल छवियाँ तैयार की जाती हैं। इसमें छवि के साथ स्केल, कलर बार और बारकोड का विशेष ध्यान रखा जाता है।

4. आँकड़ों की प्रविष्टि – पादपालय शीट पर लिखी गई सभी जानकारियाँ (जैसे वैज्ञानिक नाम, संग्रहकर्ता, तिथि, स्थान, पारिस्थितिकी आदि) को मेन्युअली या OCR तकनीक द्वारा डिजिटल डेटाबेस मे दर्ज किया जाता है।

5. जियो टैगिंग: संग्रह स्थल की जानकारी (यदि उपलब्ध हो) के आधार पर उस स्थान की भौगोलिक निर्देशांक जोड़ी जाती है।

6. वेब पर प्रकाशन– डेटा को संस्थान की निजी वेबसाइट पर सार्वजनिक/प्रकाशित किया जाता है।

लाभ:-

1. **संरक्षण** - पुराने और दुर्लभ नमूनों को क्षति से बचाया जा सकता है।
2. **सरलता से उपलब्धता और शोध में सहयोग** - वैज्ञानिक और छात्र विश्व के किसी भी कोने से पादपालय संबंधित जानकारी इंटरनेट के माध्यम से एक्सेस कर सकते हैं।
3. **डेटा विश्लेषण** - समय, स्थान और जलवायु परिवर्तन के आधार पर पौधों की प्रवृत्ति का अध्ययन किया जा सकता है।
4. **शिक्षा और जागरूकता** - डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म स्कूलों, कॉलेजों और आम जनता को शिक्षा का माध्यम प्रदान करते हैं।

प्रमुख चुनौतियाँ:-

1. उच्च गुणवत्ता स्कैनिंग और उपकरणों की कमी: पुराने और नाजुक प्रतिरूपों को बिना क्षतिग्रस्त किए स्कैन करना एक चुनौती है। उच्च-रिज़ॉल्यूशन स्कैनर, कैमरा सिस्टम और स्टूडियो सेटअप की आवश्यकता होती है, जो हर संस्थान के पास नहीं होता।

2. विशाल डेटा की मात्रा और प्रबंधन: एक बड़े पादपालय में लाखों प्रतिरूप हो सकते हैं। इन सभी को स्कैन, अभिनिर्धारित और वर्गीकृत करना कार्य साध्य श्रम और समय साध्य है।

3. गलत या अधूरी जानकारी का डिजिटलीकरण: पुराने प्रतिरूपों के लेबल पर जानकारी अस्पष्ट, अपूर्ण या लुप्त हो सकती है। साथ ही वैज्ञानिक नामों में परिवर्तन और वर्गिकी की अद्यतन जानकारी को जोड़ना जटिल कार्य होता है।

4. प्रशिक्षित मानव संसाधन की कमी: डिजिटलीकरण प्रक्रिया के लिए तकनीकी दक्षता आवश्यक है, जैसे डेटाबेस प्रबंधन, इमेज प्रोसेसिंग और टैक्सोनॉमिक ज्ञान। कई संस्थानों में इस कार्य के लिए पर्याप्त और प्रशिक्षित स्टाफ नहीं होता है।

5. वित्तीय संसाधनों की सीमाएँ: डिजिटल उपकरण, सॉफ्टवेयर लाइसेंस, क्लाउड स्टोरेज और मानव संसाधन पर खर्च अधिक होता है। कई संस्थानों को परियोजना के लिए पर्याप्त फंडिंग नहीं मिल पाती है।

6. मानकीकरण और इंटरऑपरेबिलिटी की चुनौती: अलग-अलग संस्थानों द्वारा भिन्न प्रारूपों और डेटाबेस संरचनाओं का उपयोग किया जाता है, जिससे डेटा का एकीकृत उपयोग कठिन हो जाता है।

7. साइबर सुरक्षा और डेटा संरक्षण: डिजिटल जानकारी को साइबर हमलों से सुरक्षित रखना आवश्यक है। इसके लिए बैकअप, ऐक्सेस कंट्रोल और डेटा ऐन्क्रिप्शन जैसे उपायों की आवश्यकता होती है।

पादपालय का डिजिटलीकरण एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक और शैक्षणिक प्रयास है, जो जैव विविधता के संरक्षण और अध्ययन को नई दिशा प्रदान करता है। यह तकनीकी प्रक्रिया न केवल अनुसंधान को गति देती है, बल्कि संस्थाओं को आधुनिक तकनीकों के साथ कार्यक्षमता का स्तर बढ़ाने में भी प्रभावी सिद्ध होती है। इसके माध्यम से पारंपरिक पादप प्रतिरूपों को डिजिटल रूप में संरक्षित कर भविष्य की पीढ़ियों के लिए अमूल्य वनस्पति ज्ञान को सुरक्षित रखा जा सकता है। यह विज्ञान, शिक्षा और संरक्षण के संगम पर आधारित एक दूरदर्शी कदम है, जो भारत समेत पूरे विश्व में वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र को एक नई ऊँचाई प्रदान करने की क्षमता रखता है।

चित्र: 1. नमूनों की तैयारी; 2. बारकोडिंग चिपकाना; 3. स्कैनिंग और फोटोग्राफी; 4. आँकड़ों की प्रविष्टि

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 102-103 (2025)

अनानास की संभावना: मेघालय के लिए धन निर्यात का मार्ग

हरेकृष्णा स्वैन, प्रमोद मीना, रिकेट्री लिटन, यलातूर महेश व रामलिंगम कोट्टईमुथु

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003, मेघालय

मेघालय का शाब्दिक अर्थ "बादलों (मेघ) का निवास (आलय)" है। यह नाम उस जलवायु घटना को दर्शाता है जो इस क्षेत्र में मूसलाधार वर्षा लाती है। मेघालय प्रकृति की गोद में बसा एक विशेष स्थान है। मेघालय प्रकृति की सुंदरता से आच्छादित एक विशिष्ट क्षेत्र है। यह अपनी मनमोहक सुंदरता के लिए प्रसिद्ध है, जो हरे-भरे, लहराते पहाड़ों, उपजाऊ घाटियों, झरनों, जगमगाती पहाड़ी नदियों और झीलों का मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता है। पूर्वी उप-हिमालय की पहाड़ियों में बसा मेघालय देश के सबसे खूबसूरत राज्यों में से एक है।

मेघालय में पुष्प-कृषि एक फलता-फूलता क्षेत्र है। मेघालय के गुलाबों की खुशबू जापान, मध्य पूर्व और यूरोप तक फैली हुई है। यह राज्य एक बागवानी राज्य है और यहाँ संतरा, नींबू, अनानास, अमरूद, लीची, केला, कटहल और शीतोष्ण कटिबंधीय फल जैसे बेर, नाशपाती और आड़ू आदि का पर्याप्त उत्पादन होता है। मेघालय में उगाया जाने वाला नारंगी संतरा बहुत उच्च गुणवत्ता वाला माना जाता है। मशरूम, आलू, अदरक, हल्दी, काली मिर्च, सुपारी, जूट, सरसों और रेपसीड आदि राज्य की कुछ महत्वपूर्ण नकदी फसलें हैं। ऊँचे चीड़ के शंकुधारी वृक्षों और अनानास की झाड़ियों से घिरा मेघालय अनानास का केंद्र है। मेघालय एक कृषि प्रधान राज्य है जो अपनी जैविक खेती के लिए जाना जाता है। अपने समृद्ध अनानास उत्पादन के कारण, इस राज्य में कई खाद्य प्रसंस्करण उद्योग सफलतापूर्वक संचालित हो रहे हैं। दुनिया के कुल अनानास उत्पादन में 8.2% की हिस्सेदारी के साथ भारत पाँचवें स्थान पर है, जिसमें से अधिकांश उत्पादन भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों से आता है।

री-भोई, पूर्वी खासी हिल्स और गारो हिल्स जैसे इलाकों में अनानास के पौधे तब तक फलते-फूलते हैं जब तक तापमान मध्यम, 22-32 डिग्री सेल्सियस के बीच बना रहता है। इस क्षेत्र की मिट्टी, जो रेतीली और थोड़ी अम्लीय (5.0-6.0 पीएच के साथ) है, अनानास के लिए उपयुक्त है। जलवायु और मिट्टी का यह अनूठा मेल मेघालय के अनानास को अन्य अनानासों की तुलना में अधिक स्वादिष्ट और पौष्टिक बनाता है, जिससे ये स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पसंदीदा बन गए हैं। इन्हें दुनिया भर के लोगों से प्रशंसा मिली है।

मेघालय के अनानास विटामिन ए और सी, पोटैशियम और ज़रूरी आहार फाइबर से भरपूर होते हैं। यह उन्हें उन लोगों के लिए एक बेहतरीन विकल्प बनाता है जो अपने खाने में स्वाद और पौष्टिकता दोनों चाहते हैं। इन अनानासों में विटामिन ए, बी और सी के साथ-साथ कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटैशियम और आयरन जैसे खनिज भी होते हैं। इसके अलावा, इनमें ब्रोमेलैन नामक एक मूल्यवान एंजाइम होता है जो पाचन में सहायक होता है। हर कोई इस फल का ताज़ा जूस, जैम, स्क्वैश या सिरप के रूप में आनंद ले सकता है। भारत में, बहुत से लोग डिब्बाबंद अनानास के स्लाइस और जूस पसंद करते हैं, जो कुल उत्पादन का 70 प्रतिशत से भी ज़्यादा है।

मेघालय भारत में अनानास की खेती में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और देश के कुल अनानास उत्पादन में 8 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता है। 2023-2024 में, मेघालय ने 1,38,701 मीट्रिक टन अनानास का उत्पादन किया और हाल के वर्षों में इस उत्पादन में लगातार वृद्धि देखी जा रही है। मेघालय के अनानास का अनोखा स्वाद ही उन्हें असाधारण बनाता है और ये अपने रसीले और स्वादिष्ट गूदे के लिए प्रसिद्ध हैं, जो इन्हें इंद्रियों के लिए और भी आकर्षक बनाता है।

मेघालय में अनानास के दो मुख्य प्रकार पाए जाते हैं: जायंट क्यू और क्वीन अनानास। जायंट क्यू किस्म अपने उच्च ब्रिक्स (एक मापक इकाई जो जलीय घोल में शर्करा की मात्रा दर्शाती है) मान के लिए जानी जाती है, जिसका अर्थ है कि यह बहुत मीठा होता है। अनानास उत्पादन के मामले में, री-भोई जिला मेघालय में सबसे अग्रणी उत्पादक है, जो राज्य के कुल अनानास उत्पादन का 38 प्रतिशत उत्पादन करता है। पश्चिम गारो हिल्स जिला इसके ठीक पीछे है, जो राज्य में उत्पादित अनानास का 62 प्रतिशत उत्पादन करता है।

मेघालय के अनानास की खेती पारंपरिक, प्राकृतिक कृषि तकनीकों का उपयोग करके की जाती है, जिनमें कृत्रिम उर्वरकों या कीटनाशकों का उपयोग नहीं होता है। इसका मतलब है कि इनमें बहुत कम रसायन और कीटनाशक होते हैं। ये पारंपरिक कृषि विधियाँ

अनानास को कीटों और बीमारियों से बचाने में भी मदद करती हैं। हालाँकि मेघालय की दूरस्थ भौगोलिक स्थिति के कारण दिल्ली और मुंबई जैसे प्रमुख व्यापारिक केंद्रों तक परिवहन लागत बढ़ जाती है, खासकर क्योंकि अनानास जल्दी खराब हो जाते हैं। अनानास प्रसंस्करण उद्योग अभी भी काफी नया है क्योंकि अनानास को डिब्बाबंद करना महंगा है और फल, चीनी, कंटेनर और अन्य खर्चों की लागत अधिक है। इसके अलावा, ताज़ा अनानास का विपणन भी काफी चुनौतियाँ पेश करता है।

मेघालय सरकार सिर्फ़ अनानास पर ही ध्यान केंद्रित नहीं कर रही है; बल्कि वह खेती को बेहतर बनाने और किसानों की आय दोगुनी करने के लिए कई पहलों पर भी काम कर रही है। उन्होंने लाकाडोंग हल्दी, शहद, सुगंध, अदरक, काली मिर्च, खासी मंदारिन, सुअर पालन आदि जैसे उत्पादों के लिए विभिन्न कार्यक्रम शुरू किए हैं। इसके अलावा, उन्होंने किसानों की सहायता के लिए सामूहिक विपणन केंद्र (सीएमसी) नामक लगभग 200 वन-स्टॉप दुकानें स्थापित की हैं और उपज इकट्ठा करने, संसाधित करने और बेचने के लिए गाँवों में फार्म गेट इंफ्रास्ट्रक्चर का निर्माण कर रहे हैं। उन्होंने प्राइम एग्री रिस्पांस व्हीकल स्कीम के माध्यम से 110 से ज़्यादा किसान समूहों को 50 प्रतिशत सब्सिडी भी दी है और किसानों को बाज़ारों से बेहतर ढंग से जोड़ने और व्यापक सहायता प्रदान करने के लिए 20 किसान बाज़ार स्थापित किए हैं।

चुनौतियों के बावजूद, मेघालय सरकार ने हाल के वर्षों में उल्लेखनीय प्रगति की है। उन्होंने अनानास उत्पादन वाले क्षेत्रों में कोल्ड स्टोरेज सुविधाएँ स्थापित करके कटाई के बाद होने वाले नुकसान जैसी समस्याओं का समाधान किया है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने किसानों के लिए राज्य के बाहर विभिन्न स्थानों पर अपने अनानास के विपणन के नए अवसर भी विकसित किए हैं। मेघालय सरकार सक्रिय अनानास उत्पादन वाले क्षेत्रों में फ्रोजन फ्रूट प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित करने के लिए निर्यात-उन्मुख कंपनियों के साथ सहयोग करने पर विचार कर रही है। इससे राज्य में निवेश में बाधा डालने वाली चुनौतियों को कम करने में मदद मिल सकती है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 104-106 (2025)

सतत बागवानी में वनस्पति सर्वेक्षण की भूमिका

विजय, रिकेरत्रे लिटन, डेविड लालसमा बियाते व छाया देओरी

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003, मेघालय

वनस्पति सर्वेक्षण, बागवानी प्रजातियों की खोज, प्रलेखीकरण और उसके सतत उपयोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पादप वर्गिकी अन्वेषणों के माध्यम से, विशेषकर अल्पज्ञात या दूरस्थ क्षेत्रों में, महत्वपूर्ण बागवानी क्षमता वाली पादप विविधता को उजागर करता है। इसके ये प्रयास पादप जैव विविधता की संपूर्णता को समझने तथा मानव और पर्यावरणीय हित में उसके मूल्य का सतत दोहन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं। पौधे सभी पारिस्थितिक तंत्रों की नींव के रूप में, मानव स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरणीय लचीलेपन और आर्थिक विकास को गहराई से प्रभावित करते हैं। विशेष रूप से बागवानी फसलें, जिनमें फल, सब्ज़ियाँ, जड़ी-बूटियाँ और मेवे शामिल हैं, वैश्विक पोषण के लिए अपरिहार्य हैं, साथ ही कई आधुनिक दवाएँ पादप-आधारित यौगिकों से ही प्राप्त होती हैं। जंगली प्रजातियों की खेती न केवल नृजातीय वानस्पतिक ज्ञान को संरक्षित करने में मदद करती है, बल्कि आनुवंशिक विविधता को भी बढ़ाती है, जो "जलवायु-लचीली फसल" प्रणालियों के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। आधुनिक कृषि में नई पादप प्रजातियों का समावेशीकरण एक महत्वपूर्ण और सतत प्रक्रिया बनी हुई है। उपभोक्ताओं की बदलती प्राथमिकताएं और पर्यावरणीय दबावों के साथ, जंगली या कम उपयोग की जाने वाली प्रजातियों की खोज और कृषि में उनका समावेश नए बाज़ार और नई खाद्य श्रेणियाँ उजागर करता है, जो स्वास्थ्य और स्थिरता के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं को आकर्षित करता है। आजकल, जैविक घरेलू बागवानी जंगली और कम उपयोग की जाने वाली पादप प्रजातियों को घर के अंदर और बाहर दोनों तरह से उगाने के लिए नवीन तरीकों पर ज़ोर दिया जा रहा है। ये विधियाँ उत्पादकों को अपनी फसलों में विविधता लाने और बाज़ार की बदलती माँगों को पूरा करने के नए अवसर प्रदान करती हैं। वनस्पति सर्वेक्षण के माध्यम से, आनुवंशिक संसाधनों, विशेष रूप से दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण, उच्च व्यावसायिक, पारिस्थितिकीय या औषधीय मूल्य वाले पौधों की पहचान और सरंक्षण में सहायता मिलती हैं। वानस्पतिक आकारिकी और आर्थिक विशेषताओं के आधार पर बागवानी फसलों की सटीक पहचान और वर्गीकरण करके, ये सर्वेक्षण फसल सुधार, प्रजनन कार्यक्रमों, संकरण प्रयासों, प्रभावी खेती और प्रबंधन प्रथाओं के लिए आधार प्रदान करते हैं।

व्यावसायिक परिप्रेक्ष्य से, वानस्पतिक सर्वेक्षण ऐसे पौधों की पहचान में सहायक होते हैं जो वर्तमान में व्यापारिक दृष्टि से कम उपयोग में लाए गए हैं, जैसे कि सजावटी प्रजातियाँ, औषधीय वनस्पतियाँ तथा विदेशी फल। इस प्रकार की खोजें जैव विविधता-आधारित उद्योगों के विकास और सतत बागवानी उद्यमिता को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसके अलावा, वानस्पतिक सर्वेक्षण, बागवानी संसाधनों का विकास रोज़गार सृजन, कुशल भूमि उपयोग, अनिश्चित मौसम की स्थिति में फसल उत्पादन, कुशल बागवानी जनशक्ति की माँग और सरकारी सहायता कार्यक्रमों तक पहुँच को बढ़ावा देता है। पौधों को केवल जैविक और अजैविक तनाव ही नहीं, बल्कि पोषक तत्वों की कमी, मृदा की खराब गुणवत्ता, जलवायु परिवर्तन, और अनुचित कृषि तकनीकों जैसी अनेक चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं के समाधान हेतु कुछ आधारभूत कदम उठाना अत्यंत आवश्यक है, जो निम्नलिखित क्षेत्रों में ज्ञान और अनुसंधान को प्रेरित करते हैं:

- फसल सुधार और प्रजनन कार्यक्रम
- संकरण (हाइब्रिडाइजेशन) और नई किस्मों का विकास
- प्रभावी खेती की तकनीकें और प्रबंधन रणनीतियाँ

उत्तर-पूर्व भारत जंगली पौधों की प्रजातियों की समृद्ध विविधता का केंद्र है, जिनमें बागवानी, विशेष रूप से फसल सुधार, पोषण संवर्धन और सतत कृषि में उपयोग की अपार संभावनाएँ हैं। इस क्षेत्र में किए गए वानस्पतिक सर्वेक्षणों ने महत्वपूर्ण फसलों के कई आशाजनक जंगली प्रजातियों की पहचान की है, जिनमें कटहल (आर्टोकार्पस), नींबू प्रजाति (*साइट्रस ग्रैंडिस*, *साइट्रस मैक्सीमा*, *साइट्रस लैटिप्स*, *साइट्रस*

इचेंजेंसिस) और *एलेग्नस* की जंगली प्रजातियों में (*एलेग्नस लैटिफोलिया*, *एलेग्नस पाइरिफॉर्मिस*), *डोसिनिया* प्रजाति, लौकी (*कुकुमिस हार्डविकि*, *मोमोर्डिका*), जंगली चावल की प्रजातियाँ, हल्दी-अदरक प्रजातियाँ और जंगली केले की प्रजातियाँ शामिल हैं। उपरोक्त प्रमुख प्रजातियाँ, फल, सब्जी, मसाले और औषधीय पौधे की तरह प्रयोग की जाती हैं तथा इनका वितरण निम्न प्रकार से है।

फल:

- कटहल: (आर्टोकार्पस वंश): यह पूरे क्षेत्र में जंगली रूप में प्रचुर मात्रा में उगता है।
- नींबू: जंगली प्रजातियां जैसे कि *साइट्रस ग्रैंडिस*, *साइट्रस लैटिप्स*, *साइट्रस मैक्सीमा* और *साइट्रस इचेंजेन्सिस* जंगली आवासों में, विशेष रूप से पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाती हैं।
- एलेग्नस प्रजातियाँ: जैसे *एलेग्नस लैटिफोलिया* (सोह-शांग) और *एलेग्नस पाइरिफोर्मिस*, इस क्षेत्र में व्यापक रूप से फैली हुई हैं।
- *डोसिनिया* प्रजातियाँ: *डोसिनिया इंडिका* और *डोसिनिया हुकरियाना* सामान्यतः पाई जाती हैं।
- बेबेरी: *मिरिका ऐस्कूलेन्टा* इस क्षेत्र में पाया जाने वाला एक अन्य जंगली खाद्य फल है। साथ ही अन्य उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय फल जिनमें *गार्सिनिया*, *फिलैंथस*, *एनोना* और *एग्ले* जैसी प्रजातियाँ भी जंगली रूप में उगती हैं।

सब्ज़ियाँ:

- जंगली खीरा: खेती की जाने वाली खीरे का जंगली पूर्वज, *कुकुमिस हार्डविकि*, हिमालय की तलहटी और पूर्वोत्तर क्षेत्र, विशेष रूप से मेघालय में पाया जाता है।
- लौकी: मोमोर्डिका और अन्य कद्दूवर्गीय लौकी की जंगली प्रजातियां मौजूद हैं।
- अरबी: अरबी की खेती की जाने वाली और जंगली दोनों प्रजातियाँ विविध आवासों में पाई जाती हैं।

मसाले और औषधीय पौधे:

- हल्दी-अदरक प्रजातियाँ: इन महत्वपूर्ण मसाला सम्बंधित प्रजातियाँ उत्तर पूर्व भारत में पाई जाती हैं।
- जंगली चावल: जंगली चावल प्रजातियाँ भी इस क्षेत्र की विविध वनस्पतियों में मौजूद हैं।

वानस्पतिक सर्वेक्षण न केवल पादप जीवन के बारे में हमारी समझ को समृद्ध करता है, बल्कि पोषण, स्थिरता और आर्थिक विकास में वैश्विक चुनौतियों के लिए व्यावहारिक समाधान भी प्रदान करता है। यह प्रक्रिया न केवल पारंपरिक कृषि पर दबाव को कम करती है, बल्कि जैव विविधता को संरक्षित करने और स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल फसलों को बढ़ावा देने में भी सहायक होती है।

चित्र: A: *अर्टोकार्पस लाकोचोआ* रोक्सबर्घ. B: डोसिनिया *इंडिका* (वाल.) डेसने. C: *साइट्रस मैक्सीमा* (बर्म.) मेर्र. D: *करकुमा लोंगा* एल. E: *अनानास कोमोसस* (एल.) मेर्र. F: *फाईलैन्थस एम्ब्लिका* एल. G: *हेडिचियम स्पाइकेटम* स्मिथ H: *हेडिचियम फ्लेविसेन्स* कैरे एक्स रोस्के I: *मूसा वेलुटीना* एच. वेंडल. एवं ड्रुड

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 107-108 (2025)

स्थानिकता और संरक्षण

सौरभ सचान, विजय व एल. आर. मैती

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग-793003, मेघालय

पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलाँग में स्थित भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण एक अत्यंत मनोरम हरित स्थल है। यहाँ का भौगोलिक सौन्दर्य अद्वितीय है। 1 अप्रैल 1956 को इसकी स्थापना के बाद से ही यहाँ पर अधीनस्थ क्षेत्रों की स्थानिक वनस्पतियों का संरक्षण एवं संवर्धन इसका मुख्य लक्ष्य रहा है। अनेकानेक दुर्लभ, स्थानिक और संकटग्रस्त पौधों का संरक्षण यहाँ की एक प्रमुख इकाई प्रायोगिक वनस्पति उद्यान, उमियम बड़ापानी में बखूबी किया जा रहा है। वर्ष भर सैकड़ों सैलानी यहाँ आते रहते है और कौतुहल वश जब कभी हमने उनसे स्थानिकता के बारें में कुछ भी पुछा तो अधिकांश लोगों को इसके बारें में कोई जानकारी नहीं रहती है। अतएव इस प्रपत्र में सहज भाषा में स्थानिकता व इसके प्रकार तथा कारण व उदाहरण का विस्तृत विवरण दिया जा रहा है।

स्थानिकता - एक ऐसी स्थिति अथवा कारण जब कोई पौधा या जंतु विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र में ही पाया जाता है और अन्यत्र कहीं नहीं पाया जाता है, तब उसे सच्चे अर्थ में स्थानिक कहा जाता है। यह क्षेत्र एक द्वीप, एक पहाड़, एक वन या कोई अन्य विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र हो सकता है। यदि कोई प्रजाति एक बहुत छोटे क्षेत्र में ही मिलती है, तो उसे स्थानीय स्थानिकता तथा यदि कोई प्रजाति एक वृहत क्षेत्र में पाई जाती है, तो उसे क्षेत्रीय स्थानिकता कहते है।

उदहारणार्थ– मणिपुर की सिरुई लिली (*लिलियम मैकलिनिया*), मेघालय की अदरख (*जींजीबर मेघालेंस*); खासी पहाड़ी स्थित रि-भोई जिले के (*सिरोंपिजिया खासियाना*); मिजोरम का (*जींजीबर मुरलेनिका*); मणिपुर का *जींजीबर कंज्लिपेकेन्स* आदि।

1. **पेलियो स्थानिकता**: यह अवशेष रूपी उन प्रजातियों को संदर्भित करता है जो पहले कभी आदि काल में व्यापक रूप से वितरित थी परन्तु अब केवल एक विशिष्ट क्षेत्र में ही मिलती है। उदहारणार्थ: गिंगो बाइलोबा प्राचीन समय में (270 मिलियन वर्ष पूर्व) से ही अस्तित्व में था और विभिन्न महाद्वीपों में वितरित था, परन्तु अब यह केवल चीन तक ही सीमित हो गया है। यह एक जीवित जीवाश्म है जो प्राकर्तिक रूप में केवल चीन में ही मिलता है। इसी प्रकार से *साइकैस बेडोमी* भारत में पेलियोएंडोमिक है।

2. **नियो एंडोमिज्म**: इसका तात्पर्य उन प्रजातियों से है जो किसी कारणवश केवल एक विशिष्ट क्षेत्र तक ही सीमित रही है। उनका व्यापक फैलाव अथवा वितरण नहीं हुआ। उदहारणार्थ: मेघालय में पाया जाने वाला कलश पत्री (घटपर्णी) (*नेपेंथिस खासियाना*) व *इलेक्स खासियाना* भारत के मेघालय तक ही सीमित रहा इसका अन्यत्र प्रसार व वितरण नहीं हो सका।

3. **सीजोएंडेमिज्म** (ऋतु विशिष्ट): ये ऐसे पौधें हैं जो केवल किसी विशेष ऋतु (सीजन) और सीमित क्षेत्रों में पाए जाते हैं। उदहारणार्थ: एफीमेरेल्स पौधें; असम के कामरूप बालसम (*इम्पेशिएंस कामरुपाना*); मेघालय का *इम्पेशिएंस शाशिनबोर्थाखुरी*; पश्चिमी घाट में मिलने वाली प्रजाति (*इम्पेशिएंस लावी*); थार मरूस्थल में मिलने वाली नील (*इन्डिगोफेरा कार्डीफोलिया*) इत्यादि।

4. स्यूडोएंडेमिज्म: एक ऐसी स्थिति है जहाँ पर एक प्रजाति को स्थानिक समझा जाता है परन्तु गहनता से सर्वेक्षण के बाद वास्तव में वह अन्य क्षेत्रों में भी पाई जा रही है। ऐसी प्रजातियों के वितरण की सटीक जानकारी ही उपलब्ध नहीं है।

अतएव इन समस्त अवधारणाओं को समझने से हमें स्थानिकता का वास्तविक अर्थ एवं इसके विभिन्न पहलुओं व प्रजातियों के सटीक वितरण के बारें में अधिक जानकारियां मिलती है जो कि इनके संरक्षण हेतु किए जाने वाले उपायों के लिए एक अच्छी नीति निर्धारण करने हेतु अत्यंत आवश्यक होती है।

चित्र: A: *इलेक्स खासियाना* पुर्के.; B: *जिन्को बाइलोबा* एल.; C: *जींजीबर मेघालेंस* सुशील कु. सिंह, राम. कुमार एवं मुड; D: *जींजीबर कंज्लिपेकेन्स* किशोर एवं स्कोर्निक.; E: इम्पेशेंस *शाशिनबोर्थाखुरी* गोगई, शेरपा एवं मुरूग.; F: *नेपेंथिस खासियाना* हुक. एफ.।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 109-110 (2025)

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का पर्यावरणीय प्रभाव

कैलाश प्रसाद कुशवाहा

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence – एआई) ने दुनिया को अभूतपूर्व तरीके से बदल दिया है, लेकिन इसकी तीव्र प्रगति ने इसके पर्यावरणीय प्रभावों के बारे में गंभीर चिंताएँ भी पैदा की हैं। यह एक ऐसा दोहरा पहलू प्रस्तुत करता है जहाँ एक ओर यह पर्यावरणीय चुनौतियों से निपटने में एक शक्तिशाली साधन हो सकता है, वहीं दूसरी ओर इसका अपना एक बड़ा और बढ़ता हुआ पारिस्थितिक प्रतिकूल प्रभाव भी है।

नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभाव:

1. अत्यधिक ऊर्जा खपत और कार्बन उत्सर्जन: बड़े भाषा मॉडल (एल. एल. एम.) जैसे जेनरेटिव एआई मॉडल को प्रशिक्षित करने के लिए अत्यधिक कंप्यूटिंग शक्ति की आवश्यकता होती है, जिसके कारण भारी मात्रा में बिजली की खपत होती है। अनुमान है कि एक बड़े एआई मॉडल को प्रशिक्षित करने में उतना कार्बन डाइऑक्साइड गैस उत्सर्जित हो सकता है जितना कि एक औसत कार अपने पूरे जीवनकाल में करती है।

एआई संचालन डेटा केंद्रों पर निर्भर करता है, जो लगातार बढ़ते जा रहे हैं। ये डेटा केंद्र भारी मात्रा में बिजली का उपभोग करते हैं, जो अक्सर जीवाश्म ईंधन से उत्पन्न होती है, जिससे वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि होती है। एक साधारण एआई टेक्स्ट क्वेरी भी एक सामान्य इंटरनेट सर्च की तुलना में चार से पाँच गुना अधिक ऊर्जा लेती है।

2. जल उपयोग: कूलिंग आवश्यकताएँ - डेटा केंद्रों को निरंतर इष्टतम तापमान पर बनाए रखने के लिए बड़े पैमाने पर शीतलन प्रणालियों की आवश्यकता होती है। इन प्रणालियों में लाखों लीटर पानी का उपयोग होता है, जिससे स्थानीय जल आपूर्ति पर दबाव पड़ता है और जल-दुर्लभ क्षेत्रों में समस्याएँ बढ़ सकती हैं।

3. ई-कचरा: एआई के लिए आवश्यक विशिष्ट और शक्तिशाली हार्डवेयर (जैसे ग्राफिक प्रोसेसिंग यूनिट) का जीवनकाल छोटा होता है क्योंकि तकनीक तेज़ी से विकसित होती है। इसके कारण ई-कचरे का उत्पादन तेज़ी से बढ़ रहा है। ई-कचरे में सीसा और पारा जैसे खतरनाक रसायन होते हैं, जो मिट्टी और जल स्रोतों को दूषित कर सकते हैं।

4. संसाधनों की मांग: एआई चिप्स और हार्डवेयर के निर्माण के लिए दुर्लभ पृथ्वी तत्वों सहित भारी मात्रा में कच्चे माल और खनिजों की आवश्यकता होती है, जिनकी खनन प्रक्रिया अक्सर पर्यावरण को नुकसान पहुँचाती है।

5. उपभोक्तावाद को बढ़ावा: एआई एल्गोरिदम का उपयोग वैयक्तिकृत मार्केटिंग और विज्ञापन के लिए किया जाता है, जो उपभोग को बढ़ावा देता है। वस्तुओं के बढ़े हुए उत्पादन और परिवहन से भी अप्रत्यक्ष रूप से वैश्विक उत्सर्जन में वृद्धि होती है।

सकारात्मक योगदान और 'ग्रीन एआई': नकारात्मक प्रभावों के बावजूद, एआई में पर्यावरण की रक्षा और स्थिरता को बढ़ावा देने की अपार क्षमता है:

• जलवायु परिवर्तन शमन: एआई मौसम और जलवायु मॉडल का विश्लेषण करके सटीक पूर्वानुमान लगा सकता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए बेहतर रणनीति बनाने में मदद मिलती है।

• ऊर्जा दक्षता: एआई का उपयोग स्मार्ट ग्रिड के प्रबंधन, नवीकरणीय ऊर्जा के पूर्वानुमान को बेहतर बनाने और ऊर्जा वितरण को अनुकूलित करने के लिए किया जा सकता है, जिससे ऊर्जा की बर्बादी कम होती है।

• संसाधन प्रबंधन: एआई कृषि में पानी और उर्वरकों के उपयोग को अनुकूलित करने, अपशिष्ट प्रबंधन को बेहतर बनाने और प्रदूषण के स्रोतों की निगरानी करने में सहायक हो सकता है।

• जैव विविधता संरक्षण: एआई-संचालित ड्रोन और सेंसर का उपयोग वन्यजीवों और पारिस्थितिक तंत्रों की निगरानी और संरक्षण के लिए किया जा सकता है।

समाधान की दिशा में कदम

एआई के पर्यावरणीय पदचिह्न को कम करने के लिए "ग्रीन एआई" की अवधारणा आवश्यक है, जिसमें निम्नलिखित कदम शामिल हैं:

1. ऊर्जा-कुशल मॉडल: हमें ऐसे एआई मॉडल विकसित करनी चाहिए जो कम कंप्यूटिंग शक्ति और डेटा का उपयोग कर सके। प्री-ट्रेन्ड एआई मॉडल का उपयोग करना और मॉडलों को कुशलतापूर्वक आवश्यकता अनुसार काम करने लायक बनाना अनिवार्य है।

2. नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग: डेटा केंद्रों को उन क्षेत्रों में स्थापित करना चाहिए जहाँ वे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से संचालित हो सकें।

3. पारदर्शिता और जवाबदेही: एआई के कार्बन फुटप्रिंट और जल उपयोग को मापने और सार्वजनिक रूप से रिपोर्ट करने के लिए मानकीकृत फ्रेमवर्क बनाना आवश्यक है।

4.उपयोगकर्ता जागरूकता: एआई के विवेकपूर्ण उपयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए और जहाँ सरल समाधान उपलब्ध हों वहाँ एआई का अत्यधिक उपयोग नहीं करना चाहिए।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक दोधारी तलवार है। यह हमारे ग्रह के सामने आने वाली कुछ सबसे बड़ी पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने में मदद कर सकता है, लेकिन इसका अपना बढ़ता हुआ प्रभाव इसे एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय संकट के रूप में भी सामने ला रहा है।

ISSN: 0975-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 34: 111-111 (2025)

पर्यावरण समाचार

कैलाश प्रसाद कुशवाहा

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

- भारत की जिनाली मोदी को 2025 के यूएनईपी युवा पृथ्वी चैम्पियन पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। उनकी कंपनी केले के पेड़ों के रेशों से चमड़े का पर्यावरण-अनुकूल विकल्प बनाती है, जिससे पारंपरिक चमड़े की तुलना में जल-उपयोग और CO_2 उत्सर्जन कम होता है।
- कृषि में रोबोटिक्स: ऑस्ट्रेलिया में सूर्य द्वारा संचालित और एआई से युक्त रोबोट का उपयोग कपास और टमाटर जैसे खेतों से खरपतवार निकालने के लिए किया जा रहा है, जो फसल को नुकसान पहुंचाए बिना खरपतवार हटाते हैं।
- 2030 तक काबुल दुनिया की पहली राजधानी बन सकती है जहां पानी खत्म हो जाएगा।
- साल 2050 तक दुनिया के लगभग दो-तिहाई घरों में एयर कंडीशनर होने की उम्मीद है। हालांकि इससे गर्मी से होने वाली मौतों को कम करने में मदद मिल सकती है, लेकिन दिक्कत ये है कि आज ज्यादातर ऐसी जीवाश्म ईंधन से बनी बिजली पर चलते हैं।
- समुद्र में डूबने की कगार पर खड़े तुवालु देश के नागरिक 'क्लाइमेट वीजा' के जरिए ऑस्ट्रेलिया में बसने की मांग कर रहे हैं।
- बीटा टेक्नोलॉजीज का एलिया सीएक्स 300 दुनिया का पहला 100% इलेक्ट्रिक पैसेंजर एयरक्राफ्ट बना जिसने सिर्फ ₹694 ($8) में 130 किमी. की उड़ान पूरी की, हेलीकॉप्टर से 20 गुना सस्ता और पर्यावरण के अनुकूल।
- पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने 6 दिसंबर, 2024 को कागज, कांच, धातु और स्वच्छता उत्पादों से निर्मित पैकेजिंग के लिए विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (EPR) नियमों का मसौदा अधिसूचित किया है। ये नियम 1 अप्रैल, 2026 से प्रभावी होंगे, जिनका उद्देश्य पैकेजिंग कचरे के डिस्पोजल में सुधार लाना है।
- दुनिया भर में भीषण गर्मी रिकॉर्ड तोड़ रही है। साथ ही जंगल की आग और ख़राब वायु गुणवत्ता, आग में घी डालने का काम कर रही है जिससे यह संकट और भी गंभीर हो रहा है।
- हमने धूल भरे तूफ़ान तो बहुत आते देखे हैं और जब वो हमारी आँखों व आसमान को धुँधला करते हैं, तब हमें इनकी गम्भीरता का अहसास होता है। मगर ये सवाल अक्सर परेशान करता है कि ये रेत व धूल कहाँ से आते हैं और तूफ़ान ठंडा पड़ जाने के बाद वो कहाँ चले जाते हैं? तो इस सवाल का जवाब जलवायु वैज्ञानिकों के पास है। हर साल दो अरब टन से ज़्यादा रेत व धूल के महीन कण, वायुमंडल में दाख़िल होते हैं, जो किसी सीमा तक नहीं रुककर, पूरी दुनिया में फैलते हैं।
- पृथ्वी (2021-26) योजना: यह भारत सरकार की एक व्यापक योजना है जो वायुमंडल और जलवायु अनुसंधान, मॉडलिंग और अवलोकन प्रणालियों पर केंद्रित है। इसका उद्देश्य समुद्र अवलोकन प्रणालियों के माध्यम से वास्तविक समय डेटा प्राप्त करना और उपयोगकर्ता-उन्मुख समुद्री जानकारी उत्पन्न करना है। यह समुद्री संसाधनों का दोहन और समुद्री ऊर्जा के उत्पादन के लिए प्रौद्योगिकियों का विकास भी करता है।
- ग्रेस (ग्रेविटी रिकवरी एंड क्लाइमेट एक्सपेरिमेंट: यह नासाका एक मिशन है जो पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल और जलवायु परिवर्तनों का अध्ययन करता है। यह दो उपग्रहों का उपयोग करके पृथ्वी की बर्फ की चादरों, जल निकायों और ठोस पृथ्वी में प्रमुख परिवर्तनों का अध्ययन करता है।
- अर्थ केयर: यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी (ESA) और जापान एयरोस्पेस एक्सप्लोरेशन एजेंसी (JAXA) का एक संयुक्त मिशन है। इसका उद्देश्य जलवायु और मौसम पूर्वानुमान मॉडल में पृथ्वी के विकिरण संतुलन के प्रतिनिधित्व को बेहतर बनाना है।

ISSN: 0975-4342

'भारत वृक्ष' का विमोचन करते हुए

श्री कीर्तवर्धन सिंह, माननीय राज्य मंत्री, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा में 'पादप अनुभाग' का उद्घाटन करते हुए

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा में आयोजित 'हिंदी पखवाड़ा 2025' की झलकियां

ISSN: 0975-4342

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा में आयोजित 'हिंदी पखवाड़ा 2025' की झलकिया

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, दक्षिणी क्षेत्रीय केंद्र, कोयंबत्तूर में 'विश्व पर्यावरण दिवस 2025' का आयोजन

श्री भूपेंद्र यादव, माननीय केंद्रीय मंत्री, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय 'वनस्पति अन्वेषण, 2024' का विमोचन करते हुए

गुजरात दिवस के अवसर पर 'फ्लोरा ऑफ़ गुजरात' का विमोचन

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, सी. जी. ओ. कॉम्पलेक्स, सॉल्ट लेक सिटी, कोलकाता -700 064 द्वारा प्रकाशित